तानसेन-(गवैया). इतिहासकर्ताओंकी राय है कि, इस सहस्राब्दीमें तानसेनकी समान दूसरा गवैया नहीं हुआ. इनके पूर्वजों का निकास पंजाबका था, पर इनके बाप मकरंद पांडे गौडब्राह्मण ग्वालियर में रहतेथे. संगीत शास्त्रकी प्रथम शिक्षा इन्होंने निज पितासे पाई. विशेष विद्यापठनार्थ प्रसिद्ध संगीतज्ञ गोकुलस्थस्वामी हरिदासजूको गुरु कियी और बादको मशहूर गवैया शेख मुहम्मद गौस फकीर को अपना उस्ताद बनाया-शेखजीने अपनी जीभ इनकी जीभ में लगादी, जिसके प्रभावसे आवाज खूब खुलगई और ये मुसलमान होगये. तानसेनने योग्य होतेहुये भी अपने को सदैव तुच्छ ही समझा जिसको संगीत शास्त्रका विद्वान् जाना उसीके पास गये और नम्रहो जिसप्रकार होसका विद्या पढी- अंतमें सङ्गीत शास्त्रके पूर्ण विद्वान् बन बादशाह अकबरके दर्बारमें पहुंच नौकर होगये-बादशाह अकबर तथा दर्बारीलोग इनकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करतेथे-इतिहासोंमें इनके गानेकी बडी प्रशंसा कीगईहै-जब गाते तो पशु, पक्षी लीन होजातेथे, हिरन चौकड़ी भूलजातेथे-एक दफे बादशाह अकबर के सामने सहस्रों मनुष्यों के देखते इन्होंने जमुनाजीमें खडे होकर एक राग गायाथा जिसके प्रभावसे जलमेंसे लपटें निकलकर दूर २ फैलनेलगीथीं. इन्होंने सूरदासजी की प्रशंसा में यह पद कहा था-

दो०-किधौं सूरको सर लग्यो, किधौं सूरको तीर ।
किधौं सूरको पद लग्यो, तन मन धुनत शरीर ॥

सूरदासजीने इसके उत्तरमें कहा-

दो०-विधना यह जिय जानके, शेष न दीने कान ।
धरामेरु सब डोलते, तानसेनकी तान ॥

ग्वालियरमें २ इमलीके दरख्त अबतक तानसेनके नामसे प्रसिद्ध हैं, गवैये उनके पत्ते खसोट २ के खाते हैं और कहते हैं कि, उनके खानेसे आवाज खुल जाती है-कई पुत्र छोड़कर दिल्लीमें स० ई० १५८८ की साल सिधार गये.

ताराबाई-रायसूरसेन बिजनौरवालेकी कन्या चित्तौड़ नरेश रायमलके पुत्र पृथ्वीराजको विवाही गई थी. लैलाअफगानने बिजनौरके सिवाय सब मुल्क रायसूरसेनसे छीन लिया. ताराने निज पिताको राजक्षीण होनेसे दुःखित देखकर स्त्रियोंके व्यसन सब त्याग दिये और घोड़ेपर चढ़ना तथा तीर कमान चलाना इस अभिप्रायसे सीखना शुरू किया कि, कभी अपने पिताका गया हुआ राज्य अफगानोंसे वापिस लेलूंगी. अवसर पाकर सूरसेनने अफगानोंपर चढाई भी की, तारा निज पिताके साथ घोड़ेपर सवार होकर धनुष बाण लेकर गई, पर हारही नजर आई. अंतमें ताराने पृथ्वीराजके साथ शादी इस शर्तपर की कि, उसको अपने ससुरका राज्य अफगानोंसे छीन देने होगा. मुहर्रमके दिनोंमें जब

अफगानलोग ताजियोंमें लवलीन थे पृथ्वीराजने अवसर पाकर लैलापर चढाई की. ताराबाई अस्त्र शस्त्र कस पुरुषका रूप भर निजपतिके साथ रणभूमिमें गई, फौजको शहरके बाहर छोड़ तारा और उसके पतिने अकेले जाकर लैलाका काम तमाम किया और फिर बड़ी होंशियारीसे अपनी सेनामें आ मिले लैलाके मारे जानेसे उसकी फौजके दिल टूटगये और सिपाही इधर उधर भाग निकले, जिनमेंसे बहुतोंको पृथ्वीराजकी सेनाने काटडाला-इस तरह तारा ने अपने बापका राज्य अफगानोंके हलकमें उंगली डालकर निकाल लिया-पश्चात् २३ वर्षकी उम्रमें सब उपकार भूल पृथ्वीराजको उसके सालेने किसी तुच्छ निरादरका बदला लेनेके लिये मलावारके समीप मिष्टान्नमें विष मिलाकर देदिया-माया देवीके मंदिरके पास पहुंचते २ उसके पैर लरखड़ाने लगे और जीभपर कांटे ऊग आये. तब तो उसको मालूम हुआ कि, छलसे मेरे प्राण जाते हैं-निदान तारा अपनी रानीको तुरंत कहला भेजा कि, मेरा अन्त समय है, आनेमें जरा भी विलम्ब न कर. विष तीक्ष्ण था, रानीके पहुंचनेसे पहिलेही पृथ्वीराजका देहांत होगया-रानीने पहुंचकर पतिके मृतक शरीरको गोदमें लेकर सत् किया-इन दोनों वीरोंके नामकी राजस्थानमें अबलौं बड़ी प्रतिष्ठा है-

तुक्कोजीराउ हुल्कर-(इन्दौरकी महारानी अहिल्याके सेनापति). इन्दौरराज्यके संस्थापक मल्हरराव हुल्करके वंशमेंथे. मल्हररावके बाद जब उनकी पुत्रवधू अहिल्याके शिर राजकाजका भार आन पड़ा तो उसने तुक्कोजीको सुयोग्य समझ अपना सेनापति नियत किया और अनेक काम जो स्त्री होनेके कारण महारानी खुद नहीं करसकती थी इनको सौंपे. ये बड़े स्थिर प्रकृति, धर्मभीरु, रणकुशल और राजनीतिनिपुण थे. महारानी अहिल्यासे मातुःश्री कहकर बोलते थे और वह भी इनको पुत्रवत् मानती थी-

ये ईश्वरसे डरते रहते थे-कभी कोई काम ऐसा नही किया जिससे इनकी स्वामिभक्तिमें शंका उत्पन्न होती. स० ई० १७९५ में महारानीके बाद इन्दौरका राज्य इन्हींको मिला. स० ई० १७९७ में सिधारे और इनका पुत्र प्रसिद्ध जस्वंत राउ हुल्कर गद्दीका मालिक हुआ.

तुञ्जीन-(काश्मीरनरेश) निजपिता राजा जलीकके बाद वि० सं० से १२६ वर्ष पहिले गद्दीपर बैठा-३२ वर्ष राज्य किया-ये अपुत्र था और इसकी रानी वाक्यपुष्टा नाम्नीने अग्निमें प्रवेश करके देह त्यागी थी धानकी खेती मारे जानेसे एक समय इसके राज्यमें अकाल पड़ा था तब इसने कोशका सब रुपया प्रजाका दुःख मेटनेमें खर्च करदिया था-माड़वाड़ देशमें इसने सड़कोंके किनारे दोनों तरफ वृक्ष लगवाये थे. हिमालयकी चोटीपर तुङ्गनाथ शिवका मंदिर इसका बनवाया हुआ अबतक विद्यमान है-प्रसिद्ध पंडित चन्द्रक इसीके वक्तमें हुआ.

गुसांईजीका जन्म राम उपासनाके प्रचारार्थेही इस जगत्‌में हुआ था. जब बनारसमें इनके रहिनेसे रामचर्चा चारोंतरफ फैली तो वहाँके बडे २ पंडित विद्वान् इनसे शास्त्रार्थ करने आये और कहा कि, भाषाका प्रमाण बतलाइये उत्तरमें गुसांईने निम्निस्थ दोहा पढ़ा–

दो०–हर हरि यश सुरनर गिरा, वर्णहिं संत सुजान ।
हांडी हाटक चारु चिर, राँधें स्वादसमान ॥

जब पंडितोंने उससमयके प्रसिद्ध विद्वान् मधुसूदनाचार्य दण्डी स्वामीसे जाकर यह बात कही तो स्वामीने यह श्लोक पढ गुसाँईजीको धन्यवाद दिया–

श्लो०–परमानंदपत्रोऽयं जंगमस्तुलसी तरुः ।
कवितामञ्जरी यस्य रामभ्रमरभूषितः ॥

अकबरके मंत्री रहीमखानखाना गुसांईजीके परममित्र थे. एकदफे गुसांईने उनके पास यह समस्या लिखकर भेजी– " सुरतिय, नरतिय, देवतिय, वेधन सहि सबकोय" खानखानाने निम्निस्थ पद बनाय दोहा पूरा किया:–

"गर्भलिये हुलसी फिरै कि तुलसी सो सुत होय" कुछ विशेष वृत्तांत गुसांईजीका होलराय कवीश्वरके सम्बंधमें है (देखो होलराय) निम्निस्थ ग्रंथ तु. कृ. मिलतेहैं:–

मानसरामायण, दोहावली रा०, कवितावली रा०, छंदावली रा०, बरवै रा० छप्पय रा०, कुण्डलिया रा०, रामाज्ञाप्रश्न, कलिधर्मा धर्म निरूपण, हनुमान् चालीसा, हनूमान्‌बाहुक, संकटमोचन, रामशलाका, कृष्णगीतावली, रामगीतावली, सतसई, जानकी मंगल, पार्वतीमंगल, राम नेहछू, वैराग्यसंदीपनी, कड़काछंद, रोलाछंद, झूलाछदं, सूर्यपुराण और अनेक भजन। इन सब ग्रंथोंमें मानसरामायण मुख्य है उसका प्रचार इस देशमें घर २ है. पंडितसे मूर्खतक सब लोग उसको पढते हैं और निजबुद्धिके अनुसार अर्थ लगाते हैं. " अक्षरकामधेनु" की कहावत इस ग्रंथपर ठीक २ घटती है.

तेगबहादुर–(सिक्खोंके गुरु) ये गुरु हरगोविंदके कनिष्ठ पुत्रथे और नानकीजीके उदरसे अमृतसरमें पैदा हुयेथे–९वर्षकी उम्रमें इनका विवाह हुआ स० ई० १६६४ में गुरुआईकी गद्दीपर बैठे. औरंगज़ेबने इनको दिल्ली बुलाकर मुसल्मान हो जानेको कहा. जब इन्होंने नहीं माना तो उस दुष्टने इनको मरवा डाला. सिक्खोंके अन्तिम गुरु गोविंदसिंहजी इनके पुत्रथे. स०ई०१६१५ की, साल ५४ वर्षकी उम्रमें मारेगये.

तैमूरलङ्ग–(अमीर तैमूर तुर्किस्तानका बादशाह) चंगेजखां तातारीके वंशमें स०ई०१३३६ की साल समरकंदमें पैदा हुआ. बाप इसका गडरियेका पेशा करताथा. बचपनके खेलोंमें ये लडकोंका सर्दार बनकर लडाई किया करताथा. स्वप्नफल तथा प्रश्न निकालने और ज्योतिष पढनेका इसको शौक था.

धर्मसम्बंधी शिक्षाभी कुछ पाईथी. मुसल्मानी मतको मानताथा. पहिले पहिल अनेक कठिनाइयोंका सामना दृढता सहित करके तरुणाईके शुरूमें इसने समरकंदके बादशाहके दर्बारमें राजदूतका पद पाया. बादशाह थोड़ेही दिनोंमें इसकी वीरता और सुंदर स्वरूप देखकर खुश होगया; और उसने अपनी पोती इसको विवाहदी. बादशाहके मारे जानेपर तैमूर लड़ भिड़कर समरकंदका बादशाह बन बैठा. फिर तो इसने एशियाके प्रायः सबही मुल्क लूटे और उजाडे रूम, ईरान,अफगानिस्तान,तुर्किस्तान और हिंदोस्तानपर चढाई की–ये निर्दई जहां गया वहांके लाखों मनुष्योंको वध कराके तमाशा देखा–इसका कथन था कि, जैसे आस्मानपर एक बादशाह है वैसेही पृथ्वीपर एक बादशाह होना चाहिये हिंदोस्तानपर चढाई करके दिल्लीनरेश मुहम्मद तुगलकको परास्त किया और इतना धन लूटा कि, ९० हाथियोंपर लादकर समरकंद भेजा भिरउसे १ लाख मनुष्य कैद करके लेगयाथा पर जब उनके खाने पीनेका प्रबंध न बन पडा तो उन सबके शिर कट वाडाले पश्चात् इसने मुल्क शामपर चढाई की और वहांके बादशाहको कैद कर लाया स. ई. १४०५ में चीनपर चढाई करनेके लिये ३ लाख सेना सहित कूंच किया पर रास्तेहीमें बर्फमें फँसकर ७१ वर्षकी उम्रमें मरगया इसने कोई बडी सलतनत नहीं स्थापन की पर अनेकदेशोंपर चढाई करके माल अस्बाब बहुत लूटा और लाखों मनुष्योंको नष्ट किया हिन्दोस्तानके मुगल बादशाह इसीके वंशोत्पन्नथे।

दण्डी–(संस्कृत कवि) राजा भोजके समयमें हुये भोजका समय डाक्टर राजेंद्रलाल मित्रने बहुत वादानुवादके बाद स. ई. १०२६ से १०८३ तक सिद्ध कियाहै दशकुमार चरित्र तथा काव्यादर्श आदि साहित्य ग्रंथ इनके बनाये हुयेहैं पदलालित्यके विषयमें प्रसिद्धही है कि, "दण्डिनः पदलालित्यं" एक दफे बहुत बडी सभा हुईथी उसमें दण्डीजीने अपनेको कालीदाससेभी श्रेष्ठ कथन कियाथा, पर इन दोनोंके न्यूनाधिक्यका निर्णय कौन करसकताथा, निदान घटमें सरस्वतीका आवाहन कियागया और घटमेंसे यह आवाज निकली "कविर्दण्डी कविर्दण्डी, कविर्दण्डी न संशयः"

दत्तकवि– देखो देवदत्त कानपुरनिवासी-

दत्तात्रेय–अत्रिमुनिके पुत्र अनुसूयाके उदरसे जन्मेथे ये वहही अनुसूयाजीहैं जिनके चरण परम पुनीत जान सीतामाताने बनोवासके समय छुएथे दत्तात्रेयके ३ पुत्र दत्त, सोम और दुर्वासा हुये. दत्तात्रेय बडे विवेकी थे निम्निस्थ २४ गुरु उन्होंने कियेथे पृथ्वी, वायु, आकाश, जल अग्नि, चंद्रमा, सूर्य्य, कबूतर, अजगर, नमक, पतङ्ग, सहद की मक्खी, मस्त हाथी, भौंरा, हिरन, मछली, गणिका, गिद्ध, मालिक, कन्या, तीर बनानेवाला, सर्प और मकड़ी.

दधीच ऋषि–अथर्वणऋषिके पुत्रथे इनका नाम वेदोंमें आयाहै ये उससमयमें हुये जब हड्डीके शस्त्रोंका प्रचार था दधीचके हाड अत्यंत पोढे और लम्बे चौडेथे एवं देवताओंने असुरोंसे तंग आकर बुड्ढे दधीचिसे प्रार्थना की कि, आप अपने जिस्मकी हड्डियां हमको वज्र बनानेके लिये दीजिये, ताकिहम उनसे असुरोंके मारनेमें समर्थहों दधीचिने धर्मकार्य जान अपने प्राण देना स्वीकारकिया.

दमयन्ती–इसका पूरानाम भुवनमोहनी दमयन्ती था ये विंदर्भ.(विराट्) के राजा भीमसेनकी कन्याथी विवाह इसका निषध (मगधदेश) के राजा नलके साथ हुआथा विवाहके बाद १२ वर्षतक समय सुख चैनसे बीता और इसी अवसरमें १ पुत्र तथा १ पुत्री भी पैदा होगई पश्चात महाराज नलपर विपत्ति पडी और उस कुसमयमें रानी दमयन्तीने निज पतिका खूब साथ दिया, जिसका वृत्तांत नलके चरित्रमें लिखागया है (देखो नल) दमयन्ती अत्यंत सुशील, गुणवती और पतिव्रता थी.

दयानन्द सरस्वती– (आर्य्यसमाजोंके संस्थापक) वि. सं. १८८१ में काठियावाड़के एक धनी अवदीच ब्राह्मणके घर जन्मे और मूलशङ्कर नाम पडा बचपनहीसे पढने लिखनेका बडा चाव था और बुद्धि अत्यंत तीव्र और चपलथी जब १९ वर्षके हुये तो इनकी छोटी बहिन तथा इनके चचा मरगये, जिससे इनको वैराग्य उत्पन्न होगया यह देख मातापिताने विवाहकी तैय्यारी करदी विवाहके बखेड़ेसे जन्मभरको बचनेके लिये ये सं० वि० १९०३ में घरसे सदैवके लिये निकल गये मार्गमें बडे बडे विद्वानोंसे मिले और पूर्णानन्दसरस्वतीके शिष्य हो संन्यासी होगये और दयानन्दसरस्वती नाम पाया इसीप्रकार विचरते हुये ३० वर्षकी उम्रमें प्रथमकुंभ हरिद्वारका किया पश्चात् प्रायः४ वर्षतक उत्तराखण्डमें विचरते रहे वि० सं० १९१६ में मथुरा आकर विरजानन्दसरस्वतीसे कई वर्षतक विशेष विद्या पढी,जिसका वृत्तांत विरजानन्दसरस्वतीके सम्बंधमें देखो फिर युक्तप्रदेश, पंजाब, बम्बई, बंगाल और राजपूताना आदि प्रान्तोंमें घूम२ कर वैदिक मतका उपदेश किया, आर्य्यसमाजोंकी बुनियाद डाली और अजमेरमें स्वरचितग्रंथोंके छापनेके लिये एक यंत्रालय खोला–

स. ई. १८८३ में स्वामीजीने अपने वस्त्र, पुस्तकें, धन और यंत्रालयादिकका अधिकार त्रियोविंशत उपकारिणी सभाको देकर वैदिकमतका प्रचार तथा अनाथोंकी रक्षा करनेकी आज्ञा दी. इसी साल स्वामीजीका देहांत हुआ इन्दौर, उदयपुर, जोधपुर तथा शाहपुरानरेशोंने आपकी बड़ी प्रतिष्ठा कीथी–शाहपुराहीमें प्रथम जुकामसे पीडितहो स्वामीजी अधिक,बीमार होगयेथे–बीमार होनेका विशेष कारण कुछ और है जो यहां नहीं लिखा जायगा–रोग निवृत्तिकेलिये शाहपुरासे आबू और वहांसे अजमेर पधारे, पर रोग बढताही गया– अन्तिम

दिन स्वामीजीने अजमेरसमाजके सभासदोंके साम्हने ईश्वरकी स्तुति करते हुये इस लोकका सम्बंध छोड़दिया-आपकी यादगारमें लाहौरमें ऐङ्गलोवैदिक कालिज़ और बरेली तथा फीरोजपुरमें अनाथालय जारी कियेगये-यजुःरतथा ऋग्वेदका भाष्य और सत्यार्थप्रकाश आदि अनेक ग्रंथ आपके रचे हुये हैं

दयाराम्न ठाकुर--ये जातिके जाट थे-इनके पूर्वज ठा. मक्खनसिंह राजपूतानासे आकर प्रायः स. ई. १६०० में मुरसान जिला मथुरामें बसे-मक्खनसिंहके प्रपौत्र ठा.नन्दराम स. ई. १६९६ में १४ पुत्र छोड़कर मरे, जिनमेंसे जुलकरनसिंहकी संतति अबतक मुसानमें राज्य करतीहै और जयसिंहके प्रपौत्र ठाकुर दयाराम हाथरसवाले थे-ठा.दयारामके पास जागीरमें माट, महावन, राया हसनगढ, सहमऊ और खंडौली इत्यादि ग्रामथे-इनकी गढी हाथरसमें बड़ी मज़बूत बनी हुईथी-स. इ. १८१७ में अंगरेजी फ़ौजने दयारामकी गढीको आ घेरा-दयाराम बड़ी वीरतासे लड़े, पर अंतमें हारे और रातोंरात भागकर भरतपुर पहुंचे ब्रिटिश गवर्नमेंटने उनकी जागीर ज़प्तकरली और खर्चके लिये १००० रु. मासिक पेन्शन दी-व्योमसार तथा सुत्रीसार नामक दो पुस्तकें ठा. दयारामहीके किसी नौकरकी रची हुई हैं और [illegible] -स. ई. १८४१ में ठा. दयाराम परमधामको सिधारे-सन् ५७ के ग़दरकी ख़ैरख्वाहीमें दयारामके पुत्र ठा. गोविंदसिंहको ५० हजार रुपया नक़द और १३ गांव तथा कोयलकी जमींदारी और राजाका ख़िताब मिला रा. गोविंदसिंहके पुत्र रा०हरि नारायणसिंह अबतक विद्यमानहैं-

दलीप-सूर्य्यवंशी राजा रघुके पिता थे रामचंद्र महाराज इनकी चौथी पीढीमें अवतरथे-कालिदासकृत रघुवंशमें इनका पूर्णवृत्तांत है-ये बड़े यशस्वीथे.

दलीपसिंह-महाराजा, जी. सी. यस. आई. (पंजाबनरेश) पंजाबकेशरी महाराज रणजीतसिंहके कनिष्ट पुत्र रानी चंदाके उदरसेथे-महाराज शेरसिंहके मारेजानेपर स.ई.१८४३ की साल १० वर्षकी उम्रमें गद्दीपर बैठे-इनके बचपनमें इनकी माता रानी चंदा राज्यका सबकाम करतीथी. लहिनासिंह, हीरासिंह, सुचेत सिंह और जवाहिरसिंह क्रमशः वजीर हुये और खालसा फौजके हाथसे मारेगये जवाहिरसिंहके बाद पंजाबमें पूरी बदअमली फैलगई और कोई बज़ीर मुकर्रर नहीं हुआ.फ़ौज बड़ी उपद्रवी होगईथी एवं रानीने उसको अंग्रेजोंसे भिड़ाकर नष्ट करनेकी युक्ति बिचारी अंग्रेजों और सिक्खोंकी सेनामें कई लड़ाइयें हुई आखिर गुजरातकी लड़ाईमें सिक्खदल बिलकुल नष्ट होगया और १४ मार्च स. ई० १८४९ को सिक्खसर्दारोंने जेनरलसाहिबके पास हाजिर होकर हथियार रखदिये. २९ मार्चको गवर्नरजेनरल हिंदका हुक्म पंजाबकी जप्तिके विषयमें जारी हुआ उसीरोजसे पंजाब में ब्रिटिशगवर्नमेंटकी अमलदारी होगई दलीपसिंहको ५ लाख रुपये सालाना पेन्शन मिली और फर्रुखाबादमें रहिनेके लिये भेजदिये गये यहींसे ईसाई होकर

स० ई० १८३५ में इंग्लैंड चलेगये और एक मिश्रकी सुंदरीसे शादी करली इंग्लैंडमें इनकी प्रतिष्ठा बडे२ लार्डोंके बराबरथी. स० ई० १८८७ में इनको पंजाब देखनेकी आज्ञा मिलीथी. पर इन्होंने जहाजपर सवार होतेही सिक्ख धर्म धारण किया जिससे इनकी तरफसे शक हुआ और हिंदोस्तान आनेसे रोक दिये गये इसबात पर नाराज होकर दलीपसिंहजी फ्रांस और रूसको गये पर वहां कहीं ठिकाना न पाकर इंग्लैंडको लौटे, और क्षमा मांगनेपर माफ़करदिये गये इसीसमय पहिली स्त्रीके मरजानेसे इन्होंने दूसरी शादी की प्रिंस दलीपसिंह विक्टर इनकापुत्रहै और इंग्लैंडमें रहिताहै-

दशरथजी-(अवधनरेश) सूर्यवंशी राजा अजके पुत्रथे-कौसल्या सुमित्रा और कैकेईनाम तीन रानियोंसे इनके रामचंद्र लक्ष्मण भरत और शत्रुघ्न ४ पुत्र हुये इनके सुमंतआदि ८ प्रधान मंत्रीथे और वसिष्ठ ऋषि राजपुरोहितथे दशरथजीका अपनी तीनों रानियोंपर प्रेम था, पर कैकेई सबसे छोटीपर कुछ विशेष कृपाथी एकदफे युद्धके समय रणभूमिमें दशरथजीके रथका पहिया निकलनेही कोथा कि, कैकेईकी दृष्टपड़ी कैकेईको औसान बनपड़ा एवं उसने पहियेको निकलनेसे रोक पतिकी प्राणरक्षा की इसबातपर प्रसन्नहोकर दशरथजीने कैकेईको २ वचन मांगलेनेकी आज्ञा दी, पर कैकेईने कहा कि, किसी और अवसरपरदेखाजायगा बूढे हो जब दशरथजीने रामजीको युवराजनियत करना चाहा तब रानी कैकेईने निज पुत्र भरतको युवराज तथा रामजीको १४ वर्षके लिये वनोवास देनेका हठ किया और कहा कि, रणभूमिमें दिये हुये दोनों वचन अब पूरे कीजिये-दशरथजीको रामचंद्रपर इतना प्रेमथा कि, वे उनको क्षण मात्रभी जुदा नहीं करसकतेथे. इसलिये उन्होंने रानीको बहुत समझाया पर उस अभागिनीने एक न माना-दशरथजी सत्यप्रतिज्ञ थे, निदान उन्होंने रामवनोवास सरीखे अनर्थ होनेपरभी " रघुकुलरीति सदा चलि आई। प्राण जायँ पर वचन न जाई " इस अपने वचनको पूराकिया और रामवियोगमें हा राम २ काह प्राण त्याग दिये-दशरथजीके वृतांतसे यही नीति निकलती है कि, बिना पूर्वापर बिचारे किसी मनुष्यसे वायदा नहीं करना चाहिये और वायदा करलेनेपर उसका निवाह मरणपर्यंत करना चाहिये.

दक्ष प्रजापति-ब्रह्माजीके मानसी पुत्रथे-ब्रह्माजीने इनको सब प्रजापतियोंका सर्दार मुकर्रर कियाथा प्रसूति नामक स्त्रीसे इनके ६० कन्यायें उत्पन्न हुईं जिन्मेंसे१३ कश्यपजीको विवाहीगईथीं जिनसे देव असुर मनुष्य,पखेरू इत्यादि उत्पन्न हुये. इसीप्रकार इनकी और कन्याएँभी विवाही गईं जिनसे बहुत सृष्टि उत्पन्न हुई. पश्चात् दक्षने दूसरा विवाह किया. जिससे सती आदि अनेक कन्या उत्पन्न हुई सतीका विवाह शिवजीसे हुआ-एक दफे ब्रह्मसभामें शिवजी और दक्षप्रजा

पतिमें किसीबातपर झगड़ा होगया पीछे जब ब्रह्माजीने दक्षको सब प्रजापतियोंका सर्दार नियत किया तो दक्षने गंगातट हरिद्वारमें एक महायज्ञ किया इस यज्ञमें शिवजी तथा सतीजीको दक्षने द्वेषके कारण नहीं बुलाया-सतीजी यज्ञकी खबर पाकर शिवजीके बरजनेपरभी निजपिताके घर बेबुलायेही चलीगई-वहां पहुंच जब सतीजीने शिवजीकी तथा अपनी अप्रतिष्ठा देखी तो हवनकुण्डमें कूद कर देह त्यागदी-सतीजीके जलमरनेकी खबर जब शिवने पाई तो उन्होंने वीरभद्रको कोप करके भेजा-वीरभद्रने यज्ञ विध्वंस करदिया और दक्षका शिर काट डाला-इन्ही दक्षप्रजापतिके वंशमें सूर्जवंशियोंके मूल पुरुष महाराज सूर्य्य हुये.

दाऊद-(इसराईल जातिके दूसरे बादशाह) पहिले निजपिता जेसीकी भेंड बकरियोंकी देखभाल रखतेथे-बादशाह शावके मरने पर क़ौमज्युडाके राजा हुये-३०वर्षतक राज्य किया और जुरूसलम तथा आसपासकी क़ौमोंको परास्त किया-जुरूसलम इनकी राजधानी उस समयमें बड़ी रौनकपर थी-इन्होंने अपनी प्रजाकी गिनती कराईथी-आखिर निजपुत्र सुलेमानको जीतेजी राजपाट सौंप विररिक्त होगये-ईसाइयोंकी धर्मपुस्तक बैबिलका एक भाग इनका बनाया हुआहै-

स. ई. से १०७४ वर्ष पूर्वजन्मे.
स. ई. से १००१ वर्ष पूर्व मेरे-

दादाभाई नौरोज़जी(यम.पी.)-सबसे पहिले और केवल एकही ऐसे हिंदोस्तानी हैं जो पार्लियामेंटके मेम्बरहुए हैं-नेशनल कांग्रेसहिंदके महा सहायक हैं जब कांग्रेस पंजाबमें हुई थी तब आप इंग्लैंडसे आकर उसके प्रेसीडेण्ट बनेथे. लाहौर स्टेशनसे शहिर तक बड़े २ रईसोंने आपकी गाड़ी खींचीथी. पार्लियामेंटके मेम्बर होकर आपने इस देश की बडी मददकी है.स. ई. १८२५ में एक पारसीघरानेमें बम्बईमें जन्मे एल्फिन्स्टन कालिजमें विद्या पढी और बादको इसीकालिजमें प्रोफेसरीका ओहदा पाया अनेक सभाओंके मेम्बर रहे. स्त्रीशिक्षाका उद्योग किया " रास्तगुप्तार " नामक एक समाचार पत्र जारी किया था. स. ई. १८५१ में इंग्लैडसे तिजारत करनेवाली एक व्यापारिक कम्पनी स्थापन की और उसमें शरीक हुये. स. ई. १८५५ में इंग्लैंड चले गये और वहीं रहिनेलगे. स्वभाव ऐसाहै कि, सैकडों दोस्त आपके वहां भी होगये हैं. हिंदोस्तानसे जानेवालोंकी सदैव मदद करतेहैं. एक दफे किसी मित्र सौदागरको बिगड़ते देख आपने उसकी २ लाख रुपयेसे मदद कीथी. स. ई. १८७३ में महाराजा गैकवाड़ बरोडाके दीवान नियत होकर हिंदोस्तानको आये पर थोडेही दिन पीछे इस्तेफा देदिया. स. ई. १८७५ में बम्बई कौंसलके मेम्बर होगये और एकही वर्षबाद बम्बई लेजिस लेटिव कौन्सलकी मेम्बरी पाई पश्चात् फिर इंग्लैंडको चले गये और फिन्सबरीकी तरफसे मेम्बर पार्लियामेन्ट हुये.

दारा–(Darius Hystaspes) ये ईरान (फारिस) का बादशाहथा. इसका राज्य फारिसले अफगानिस्तान तक फैला हुआथा. जरदश्तके मतको मानताथा. सेना इसकी ५ लाखसे भी ज्यादह थी. सिकंदर आजमके बाप फिलियसे इसकी लडाई रहीथी १२ वर्ष राज्य करके मरगया और उसका बेटा दाराद्वतीय तख्तपर बैठा. फिलियके बाद सिकंदर आजमने तख्तपर बैठ कर दाराद्वतीयपर ३ दफे चढाई की दारा तीनों दफे हारा. आखिर स. ई. से ३३० वर्ष पाहिले दाराको उसके एक सर्दारने मारडाला और सिकंदरको खबर की सिकंदरने दाराकी लाशपर जाकर गम किया और नमकहराम घातकोंको सख्त सजा दी उसके मुल्क और मालपर अधिकार करलिया और उसकी लडकी रौशनकसे शादी करली और उसकी बेगमों तथा सर्दारोंके रुतबे बहाल रक्खे.

दाराशिकोह– दिल्ली नरेश शाहजहाँका ज्येष्ठ पुत्र ताजबीबीके उदरसे स० ई० १६१५ में पैदा हुआ. आलमगीर, शुजाअ तथा मुराद इसके तीनों भाई दूर २ सूबेदार थे, पर ये दिल्लीमें रहता था और वलीअहिद (युवराज) था–सब लोग जानते थे कि, शाहजहांके बाद येही गद्दीपर बैठेगा. ये दीन मुहम्मदीको नहीं मानता था और हिंदू मतानुगामी था–शाहजहाँ स०ई० १६५७ में बीमार पड़ा–यह खबर सुनकर आलमगीर. शुजाअ तथा मुरादने तख्तके वास्ते चढ़ाई की–दाराशिकोहने उनका मुकाबिला किया. पर हारा–आलमगीरने गद्दीपर बैठनेसे दूसरी वर्ष स०ई० १६५९ में दाराको परास्त करके पकड़ लिया और उसका काला-मुंह करके हाथीपर बिठलाकर तमाम शहरमें घुमाया और मरवाडाला. दाराको इस हालतमें हाथीपर सवार देख महिलकी बेगमोंकी किलकारियें निकलती थीं. दारा बड़ा साहसी और उदार था, पर मिज़ाजमें क्रोध और जल्दी अत्यन्त थी. सुलेमाँशिकोह और सिपहिरशिकोह उसके २ पुत्र थे.

दासकवि–देखो भिखारीदास, बेनीमाधो दास,

दिनकरराव–(राजा मुशीरे खाससर दिनकरराव बहादुर, 'कें. सी. यस. आई.) महाराष्ट्र ब्राह्मण बड़े मिलनसार और उदार चित्त थे-इनके पूर्वज बम्बईप्रांतके रहनेवाले थे. जब स०ई० १८५४ में महाराज जीवाजीराव संधिया ग्वालियरकी गद्दीपर बैठे तो सर दिनकरराव वजीर थे. महाराज जीवाजीने इनकी सुसम्मतिको मान रियासतमें अनेक सुधार किये. सन् ५७ के ग़दरमें ग्वालियर राज्यकी तरफ़से जो मदद ब्रिटिश गवर्नमेंटको दीगई उसके पुरष्कारमें महाराज साहिबको तो बहुत कुछ मिला लेकिन सर दिनकररावको भी के. सी. यस. आई, की उपाधि मिली-ये बडे सुप्रबन्धकर्त्ता थे. कानपुर, आगरा और बनारसमें इनके अनेक मकान हैं स० ई० १८५९ तक ग्वालियरमें प्रधान मंत्री रहे, पीछे

रियासत धौलपुरके सुपरिंटेन्ड नियत किये गये. बरोडा नरेशकेरजीडेन्टको विष देनेके मुकद्दमेमें जो कमीशन बैठा था उसका मेम्बर ब्रिटिश गवर्नमेंटने इनको भी मुकर्रर किया था. इन की रायमें राजा निर्दोष था. महारानी विक्टोरियाके कैसरेहिंदका खिताब लेनेपर जो दर्बार दिल्लीमें हुआ था, उसमें सर दिनकर-रावको राजा मुशीरे खास बहादुरका खिताब मिला और पश्चात् गवर्नमेंटकी आज्ञासे यह खिताब सदैवके लिये इनके उत्तराधिकारियोंको दिया गया. इनके पुत्र रघुनाथराव दिनकर स० ई० १८५८ में जन्मे और आगरेमें रहते हैं-

दीनदयालगिर-(बाबा दीनदयाल गिर गुसाँई.) ये बरसाना जिला मथुराके रहनेवाले महात्मा जातिके ब्राह्मण वि. सं० १९०० के लगभग विद्य-मान् थे-महाराजा रीवाँ इनको बहुत मानते थे-उत्तम कवियोंमें इनकी गणना है-निम्निस्थ ग्रंथ इनके रचे हुये हैं:-अनुरागबाग, दृष्टांततरङ्गिणी, अन्योक्त कल्प-द्रुम, काशीपंचरत्न, चकोरपंचक, दीपपंचक-

दीनदयाल-(राजा दीनदयाल मुसव्वरजंग) ये हिंदोस्तानी फोटोग्राफरों में अत्यंत प्रसिद्ध हैं-लाला हिम्मतराय अग्रवाल वैश्यके घर सर्धना जिला मेरठमें स०ई० १८४६ के साल पैदा हुये. मुख्य निवासस्थान सिकन्दराबाद है प्रथम शि-क्षा सर्धनाके तहसीली स्कूलमें पाई और स० ई० १८६६ में तामसन कालिज रुर्कीसे ओवरसियरीका इम्तिहान पास किया-

पश्चात् २२ वर्ष तक इन्दोरके शरिस्ते तामीरातमें नौकरी करके पेन्शन.ली. तब से खास तौरपर अक्सी तस्बीर खींचनेका पेशा इख्तियार किया है-स०ई०१८९४ में निजाम हैदराबादने आपकी योग्यता से प्रसन्न होकर आपको राजा मुसव्वर जङ्गका खिताब दिया और बड़ी प्रतिष्ठाकी. आपका कारखाना बम्बईमें बहुत बड़ा है और देखने लायक है. बडे मिलनसार और योग्य पुरुष हैं. जो काम आपके करनेलायक हो तो तुरंत मदद करनेको तैय्यार होजातेहैं. आपके कई एक लायक बेटे हैं.

दीनदयालुशर्म्मा-ये पंडितजी झझडके रहिनेवाले एक विद्वान् ब्राह्म-ण हैं, इनके सारगर्भित उपदेश किसने नहीं सुने होंगे हरजगहकी धर्मसभाकी यही इच्छा लगी रहती है कि, पंडित दीनदयालुजी पधारकर उपदेश दें परंतु पं. दीनदयालुजी एक हैं और धर्मसभायें बहुत पंडितजीके उद्योगसे भारत-धर्ममहामंडल स्थापन हुआहै और उसकी रजिस्ट्री कराईगई है और अनेक राजे महाराजे उसमें शरीक हुये हैं.

वक्तृता पंडितजीकी ऐसी हृदयग्रहिणी और युक्तिपूर्वक होती है कि, जिस को सुनकर बड़े २ अंग्रेजी विद्वान् आश्चर्यमें आजाते हैं और तारीफ किये विना

नहीं रहसकते लाखों ही मनुष्य पंडितजीके उपदेशोंको सुन धर्मपगपरसे डिग-जानेसे रुक गये हैं.

दुर्गावती–(गढमंडलकी मरदानी रानी) बुंदेलखण्डकी प्राचीन राज-धानी महोवाके चंदेलराजोंकी बेटी और गढमंडलके गोड राजा दलपतशाहकी रानी थी–गढमंडलमें गोंडोंका राज्य किसी जमानेमें बडा प्रबल था, अब यह रा-ज्य नष्ट भ्रष्ट होकर अंग्रेजी अमलदारीके सूबे नर्मदा और सागरमें मिलाहुआहै दुर्गावती और दलपतशाह दोनों अत्यंत स्वरूपवान् थे और इनका विवाह आ-सुरी विधिसे हुआ था दलपतशाह विवाहसे ४ वर्ष बाद एक ३ वर्षका पुत्र छोड कर मरगया रानी दुर्गावतीको बालक पुत्रके निमित्त राजकाज सह्मालना पड़ा जब लड़का कुछ बड़ा हुआ. तो स. ई. १५६४ में बादशाह अकबरने गढमंडल पर चढाई की–दुर्गावती १५०० हाथी ७ हजार सवार और बहुतसे प्यादे लेकर धनुष-बाण तथा अन्य अस्त्र शस्त्र धारण कर रणभूमिमें मुगलोंसे युद्ध करने आई २ दफे उसने मुसलमानोंकी फौजका मुँह फेरदिया और दाँत खट्टेकरदिये ती-सरी दफे रानीका पुत्र जो अभीतक बड़ी वीरतासे लडा था घायल हुवा और जब बहुत रुधिर बहिनेसे उसको मूर्छा आने लगी तब रानीने आज्ञा दी कि कुँवरको तम्बूमें लेजाओ कायरोंको भागनेके लिये यह अच्छा बहाना मिला यहांतक कि, रानीके पास केवल ३०० आदमी रहिगये पर रानी तो भी रणसे नहीं हटी–एक तीक्ष्ण बाण उसकी आँखमें लगा जिसको उसने हाथसे पकडकर खींच लिया–फिर १ तीर उसकी गर्दनमें लगा, रानीने उसकोभी खींचकर निकालडाला पर अत्यंत रु-धिर बहिनेसे रानी को हाथीके हौदेपर मूर्छा आनेलगी तब तो वैरीके हाथमें पड़नेके भयसे रानीने छातीमें बर्छी भोंककर प्राणत्याग दिये–सेनापतिलोग रणसे भागनेकी लाजसे बचनेके लिये अपनी स्वामिनीके मृतक शरीरपर टुकड़े २ होकर कटमरे–स्लीमेन साहिब लिखते हैं कि, दुर्गावती की समाधि अबतक उन पर्वतोंके बीचमें बनी हुई है जहां युद्ध हुआ था २ पत्थरके खम्भे समाधिके समीप खड़े हुये हैं–लोग कहते हैं कि, वे रानीके ढोल थे जो अब पाषाण होगये हैं–लोग यह भी कहते हैं कि, आधी रातके समय पर्वतोंमें उन ढोलोंका भयंकर शब्द लड़ाईमें मारे गये हुये वीरसेना पतियों की आत्माओंको समाधिके निकट बुलानेके लिये हुआ करताहै पथिक लोग जो उस निर्जन वनमें होकर निकलते हैं बिल्लोरके टुकडे जो वहाँ अधिक तासे मिलते हैं रीत्यानुसार समाधिपर चढाते हैं–रानी दुर्गावतीने भाषा कवि,हरनाथको सवालक्ष रुपया इनाम दिया था, रानी दुर्गावतीके बनवाये मदन महिलके खरौडर अबतक बिल्लौरकी चट्टानोंके बीच जब्बलपुरसे ११ मील दूर पड़े हैं

दुर्वासा ऋषि–अत्रि ऋषिके पुत्र, पुराणोंमें इनके क्रोधकी सूचक अने-क कथायें हैं–इन्होंने अनेकोंको शाप दिया था.

दुर्योधन–धृतराष्ट्रके सौपुत्र कौरवोंमें सबसे बड़ा था–जब धृतराष्ट्रने अपने सबसे बड़े भतीजे युधिष्ठिरको युवराज नियत करना चाहा तब दुर्योधनने विरोध करके युधिष्ठिर आदि पांचों पांडवोंको १४ वर्षके लिये वनोवास दिलवा दिया जब पाण्डव वनोवाससे वापिस आये तो धृतराष्ट्रने उनको आधा राज सौंप दिया, पर दुर्योधनने जुआ खिलाकर उनका राज्य फिर जीत लिया और १४ वर्षके लिये फिर वनोवास दिलवा दिया–बनोवासके समय दुर्योधनने पांडवोंको मरवा डालनेके अनेक उपाय किये पर वे भी गाफिल न थे, एवं निष्फल दूसरीबार बनोवाससे लौटकर जब पांडव लोग आधे राज्यके दावेदार हुये तो दुर्योधनने देनेसे इनकार किया–लाचार महाभारतकी लड़ाई शुरू हुई जो १८ दिनतक रही इस युद्धमें हिंदोस्तानके सब राजे शरीक थे–कोई कौरवोंका और कोई पांडवोंका तरफदार था १८ वें दिन जब सब कौरवदल शान्ति होचुका था तो दुर्योधन और भीममें मल्लयुद्ध हुआ, जिसमें दुर्योधन मारा गया–रणभूमिमें पड़े ससकते दुर्योधनको देख अश्वत्थामा उसके पास गया. दुर्योधनने उससे भीमका शिर काट लानेको कहा–निदान अश्वत्थामा पांडवोंके डेरेमें घुसगया पांडव लोग तो वहाँ न मिले, पर उनके ५ पुत्र जो द्रौपदीके उदरसे थे मिलगये–अश्वत्थामा उनहींके शिर काट दुर्योधनके पास लेगया–दुर्योधनका दम उस वक्त निकल रहाथा बच्चोंके शिर देख उसने कहा " मेरी शत्रुता तो भीमसे थी, हाय ! इन बच्चोंका गला वृथा काट क्यों वंशनष्ट किया "।

दुष्यंत–(चंद्रवंशी प्राचीन राजा) महाभारत तथा पद्मपुराणमें लेख है कि दुष्यंत नामक चंद्रवंशविभूषण, महातेजस्वी वेदवेदाङ्ग पारङ्गत, सर्वराजगुणान्वित पौरव राजर्षि था–वह धनुर्विद्यामें निपुण, रूपमें कामदेव, धैर्यमें हिमालय, गांभीर्यमें समुद्र, ऐश्वर्यमें कुबेर, प्रतापमें इन्द्र, तेजमें सूर्य, स्नेहमें चंद्रमा और धर्मातंत्रमें मनुके समान था–उसने अपनी प्रजाओंका निजपुत्रोंकी समान पालन किया था. " शकुन्तलाके गर्भसे राजा दुष्यंतके भरत नामक पुत्र बड़ा प्रतापी हुआ जिसके नामपर इस देशका नाम भारतवर्ष पड़ा–प्राचीन नाम आर्य्यावर्त था.

दूलह त्रिवेदी–(कवि दूलह) बनपुरानिवासी उदयनाथ कवींद्रके पुत्र तथा कालिदासजूके पौत्र वि० सं० १८०३ में विद्यमान थे. भाषाकाव्य उत्तम करते थे–इनका बनाया "कविकुल कण्ठाभरण " भाषासाहित्यमें प्रमाणिक ग्रंथ है.

दुशासन– धृतराष्ट्रके सौपुत्र कौरवोंमेंसे एक बड़ा धूर्त था–जब पांडवोंने अपना राज्य तथा रानी द्रोपदीको दुर्योधनके पास जुयेमें हारदिया तब दुःशासनने द्रोपदीको खरेदर्बार बाल पकड़कर घसीटा और उसके बदनपरसे चीर खींच डालना चाहा, पर श्रीकृष्णकी कृपासे चीर इतना बढगया कि, दुशासन खींचते

थक गया. यह देख भीमसेनको क्रोध आया और उसने शपथ खाई कि, मैं दुशासनका रक्त पिऊंगा–महाभारतकी १६ वें दिनकी लड़ाईमें भीमने दुशासनको मार कर खून पिया और शपथ पूरी की.

देवकवि–देखो देवदत्त.

देवजानीसकल्वी–(Diogenes) बड़ा प्रसिद्ध त्यागी हकीम सिकंदर आजमके वक्तमें यूनानमें हुआ है. सिकंदरके तख्तपर बैठनेके समय सब विद्वान् हकीम लोग मुबारिकवादी देनेको हाजिर हुये, पर देवजानीस नहीं गया–सिकंदरको बड़ा आश्चर्य हुआ निदान इसके मकानपर दर्शनोंको गया और इसको दिगम्बर बैठापाकर कहा " जो मांगना हो सो माँगो " इसने कहा " मेरे सामनेसे चलाजा केवल यही मांगता हूं " स्वभावका बड़ा चिडचिडा था। या तो किसीसे बातही नहीं करता और यदि करता क्रुद्ध होकर इसीलिये कल्वी अर्थात कुत्तेकी तरह टांग लेनेवाला इसका नाम पडगया था–कभी २ अर्द्धरात्रिके वक्त पुकारता कि, कोई है–लोग यह जान कि, किसी चीजकी जरूरत है दौड़ते–ये उनमें सोंटे लगाता और कहता "चलेजाओ" तुम आदमी नहीं हो, तुम तो इन्द्रियोंके वशीभूत कुत्ते हो. "

देवदत्त–(भाषाकवि) समाना ग्राम जिला मैनपुरीके रहनेवाले ब्राह्मण वि० सं० १६६१ में विद्यमान थे अपने समयमें भाषाकाव्यके अद्वितीय आचार्य थे. इनके रचे ग्रंथोंकी गिनती ७२ मालूम हुई है, जिनमेंसे कुछके नाम नीचे लिखे हैं. प्रेमतरंग, भावविलास, रसविलास, रसानन्दलहरी, सुजानविनोद, काव्यरसायन, पिंगल, देवमाया, प्रपंचनाटक, प्रेमदीपिका, सुमिल विनोद और राधिकाविलास। औरंगजेबके पुत्र आजमका यश उन्होंने गाया है. और कवितामें अपना भोगदेव कहा है।

देदत्तव त्रिपाठी–(भाषा कवि) कान्यकुब्ज ब्राह्मण कन्नौजके समीप, कुसुमडा ग्रामके रहनेवाले लखनऊके नवाब शुजाउद्दौलाके समयमें वि. सं. १७०३ के लगभग विद्यमान थे शुजाउद्दौला इनकी खातिर किया करता था और कुछ वार्षिक निबन्ध भी करदिया था शब्दरसायन और अष्टयामनाम पुस्तकें इनकी बनाई हुई हैं कवितामें अपना भोगदेव कहते थे।

देवदत्त–(भाषाकवि) वर्णके ब्राह्मण जिला कानपुरके रहनेवाले प्रायः वि. सं. १८३६ में विद्यमान थे. राजा खुमानसिंह चर्खारीनरेशके यहां रहते थे पद्माकर तथा ग्वालकविसे इनकी खूब छेड़छाड़ रहती थी "धारा बाँधि छूटत फुहारा मेघमालासों" इत्यादि कवित्तमें राजा खुमानसिंहने दत्तजीको बहुत इनाम दिया था इन्होंने कवितामें अपना भोगदत्त कहा है।

देवलदेवी-गुजरातके राजाकी बेटी थी अपने समयमें हिन्दोस्तानभरमें परम सुन्दरी गिनी जाती थी हिन्दोस्थानके सबही राजे महाराजे इससे शादी किया चाहते थे जब स०ई०१२९७ में सुल्तान अलाउद्दीनने गुजरात फतेह किया तो इत्तिफाकसे देवलदेवी उसकी फौजके हाथ पड़कर दिल्ली लाई गई और शाहजादे खिजरखाँसे उसका विवाह हुआ इन दोनोंके प्रेमकी कहानी फारसी कवि अमीर खुसरोने लिखी है पश्चात् जब खिजरखाँको मारकर मुबारिक खिलजी गद्दीपर बैठा तब उसने भी देवलदेवीको अपनी जोरू बनाया कुछ दिनों बाद मुबारिक खिलजीको वधकरके उसके गुलाम खुसरोने तख्तपर बैठकर देवलदेवीको अपनी बेगम बनाया खुसरो स० ई० १३२० में मारा गया देवलदेवीको देवलदेरानी भी कहते हैं।

दोस्त मुहम्मदखाँ सरदार-(रियासत भूपालके संस्थापक) ये अफगानिस्तानसे आकर सूबे मालवामें किसी राजाके यहां नौकर हुए पश्चात् कुछ दिन तक एक बड़ी जागीरकी ठेकेदारी करते रहे थोड़ेही दिनोंमें जगदीशपुर (इसलामनगर) आदि कई स्थान अपने अधिकारमें करके भूपालकी शहरपनाह बनवाई और उसको फिरसे बसाया स० हि. ११५३ में मरे और अपने बनवायेहुए किले फतेहगढ़में दफन हुए-

प्राय: स० हि० १२०० में इनके पौत्र शरीफमुहम्मदखाँने गुन्नौरके किलेपर चढ़ाई की किला तो छलसे लेलिया और गुन्नौरकी राजपूतवंशोत्पन्न जगत प्रसिद्ध सुन्दरी रानी कमलावतीकी प्रतिष्ठा नष्ट करनेको उपस्थित होगया रानी का नहीं करना व्यर्थ था क्योंकि वह बलपूर्वक उसे अपने घरमें डाललेता निदान रानीने कोई उपाय न देख अमूल्य वस्त्र और आभूषण खांसाहिबके लिये भेजे और २ घंटेके बाद निकाहका वक्त नियत किया नियत समयपर खाँ साहिब आ पहुँचे और रानीका मोहिनी रूप देख कामातुर हो बार बार वार्त्तालाप करने लगे इतनेहीमें रंगमें कुछ औरही भंग होने लगा खां साहिबका मुख नीला पीला होगया, गर्मीसे मूर्च्छा होनेलगी, जल २ पुकारने लगे ,कपडे फाड २ फेंकने लगे' पंखे होने लगे, गुलाब छिडके जाने लगे, तोबा तिल्हा मचगई, भागड पडगई, पर क्या होसकता था, खाँसाहिब शहीद हो चुके थे, रानीने जो कपडे भेजे थे तीक्ष्ण विषमें रंगेहुयेथे-खाँसाहिबकी यह दशा देख रानी किलेकी गुमटीपरसे नर्मदा नदीमें कूदपड़ी और डूब गई.

दौलतराउ सेंधिया- (ग्वालियरनरेश) माधौजी सेंधियाके बाद स० ई० १७९४ में १५ वर्षकी उम्रमें ग्वालियरकी गद्दीपर बैठे माधौजी सेंधिया इनके दादाके भाई थे शुरूहीसे दौलतराउमें निजपूर्वजोंकी धीरता और वीरता झलकने

लगी थी माधौराव पेश्वाके मरनेपर जो झगडा गद्दीके लिये हुआ उसमें इन्होंने वाजीरावका पक्ष लेकर उसको गद्दीपर बिठादिया- पश्चात् जस्वंतराव हुलकरसे इनकी ठनी जिसमें बहुतसा मुल्क इनके हाथ लगा कुछ दिनोंतक जैसा इनका बलपराक्रम था वैसा हिन्दोस्तानभरमें किसी दूसरे राजाका न था- स० ई० १८२० में जब पेश्वाने ब्रिटिश गवर्नमेंटसे मेळमिलाप किया तो दौलतराव को यह बात बुरीलगी, निदान उन्होंने यह उद्योग करना शुरू किया कि,मेल कायम न रहै. यह देख ब्रिटिश गवर्नमेंट इनसे लडनेको उपस्थित होगई. अलीगढ,दिल्ली,असाई, आगरा, लस्वारी और अरगांवकी लडाइयोंमें दौलतराउकी हार हुई आखिर सुलह हुई, परबहुतसा मुल्क इनके हाथसे निकल गया यहांतक कि, ग्वालियर और गोहडका किलाभी इनके अधिकार में न रहा-४६ वर्षकी उम्रमें स० ई० १८२७की साल वैजाबाई अपनी अपुत्रविधवाको छोडकर दौलतरावका देहांत हुआ वैजाबाईने जनकोजीराव सेंधियाको गोद बिठाया, जनकोजीकी अपुत्रविधवा रानीने महाराज जीवाजीराव सेंधियाको गोद लिया-महाराज जीवाजीके पुत्र वर्त्तमान ग्वालियरनरेश महाराज माधौराव सेंधिया हैं॥

द्राह्मायण-इनके रचे सामवेदके श्रौतसूत्र मिलतेहैं, जिनमें विविधभांतिके यज्ञ करानेके नियमहैं-

द्रुपद-पंजाबका प्राचीन राजा इसकी कन्या द्रौपदीको अर्जुननेस्वयंवरमें जीता था महाभारतके युद्धमें चौदहवें दिन राजा द्रुपद द्रोणाचार्यके हाथसे मारागया.दूसरेही दिन द्रुपदके पुत्र धृष्टद्युम्नने द्रोणको मार अपने बापका बदला लिया.द्रोणके पुत्र अश्वत्थामाने धृष्टद्युम्नको मारडाला-द्रुपदके शिखंडन नामक पुत्र तथा शिखंडनी नामक कन्या और भीथी जब द्रुपदने द्रौपदीका स्वयंवर रचा तब दूर२से शूरवीर पराक्रमी राजा आ उपस्थित हुये.स्वयंवर का प्रण यह था कि,जो कोई बांसके ऊपर चक्रमें नाँचती हुई सोनेकी मछली की परछाई पृथ्वीपर रक्खे हुये तेलके कटोरेमें देख ऊपर को तीर चलाकर मछली की आंखमें निशाना लगावे वह द्रौपदी को वरे-जब द्रौपदी जयमाल लेकर सभामें आई तो सब राजे उसके रूपको देख मोहित होगये, पर कोईभी अंकित चिह्नके वेधनेमें समर्थ नहीं हुआ-राजा द्रुपद कहिनेहीको था कि,"वीरविहीन मही मैं जानी" कि, इतनेहीमें भिखारीके वेषमें एकवीर पुरुष उठा जिसकी छबि प्रशंसनीय थी और जिसको देख द्रौपदी मोहित होगई-इस वीर पुषरुने धनुष उठा क्षणभरमें नियमानुसार मछलीको वेधदिया-द्रौपदीने तुरंत जयमाल उसके गलेमें डाल दी-ये पुरुष अर्जुन पांडव था जो वनोवासमें होनेके कारण भिखारीका वेष धारण कियेहुये था.

द्रोणाचार्य-भारद्वाज ऋषिके पुत्र थे भीष्म पितामहकी सौतेली बहिन कृपासे इनका विवाह हुआथा-अश्वत्थामा इनका पुत्र था-कौरवों तथा पांडवोंको धनुर्वेदकी

शिक्षा इन्हींने दीथी-महाभारतके युद्धमें द्रोणाचार्य कौरवोंके तरफदारथे और भीष्मके मारेजानेपर सेनापति नियत कियेगये थे-इस पदको प्राप्तहोनेसे ४ दिन बाद द्रोणने पाञ्चालाधिपति द्रुपदको वध किया-द्रुपदके पुत्र धृष्टद्युम्नने दूसरेही दिन द्रोणको मार गिराया-द्रोणके पुत्र अश्वत्थामाने धृष्टद्युम्नको रणशायी किया.

द्रौपदी-पंजाबके राजा द्रुपदकी बेटी. पांडवोंको स्वयंवररीतिसे विवाही गई थी इसके स्वयंवरका वृत्तांत राजा द्रुपदके सम्बन्धमें हुआ है (देखो द्रुपद). द्रौपदीका रंग गोरा न था, पर छवि अत्यंत मनोहरण थी जब पांडव लोग द्रौपदीको ले घर आये तो उन्होंने अपनी मातासे कहा कि, हम एक अपूर्व वस्तु लाये हैं माताने सहज स्वभावसे कह दिया कि, पांचों आपसमें बांट लो. इसी कारण द्रौपदी पांचों पांडवोंकी पत्नी बनी और पंचभतारू कहिलाई. बारी २ से दो दो दिन पांचों भाइयोंके पास रहती थी. इसने अपने शुभआचर्णोंके द्वारा पांचों पतियोंको वशमें करलिया था, वे इसका मानभंग होना कदापि नहीं देख सकते थे और इसके कहिनेका प्रभाव उनके चित्तपर बहुत पड़ता था एकदफे जब युधिष्ठिरने अपना राज्य तथा द्रौपदीको कौरवोंके पास हार दिया था तब दुःशासनने द्रौपदीका जूडा पकड सरे दर्बार घसीटा था और मानहानि की थी.इस मानहानिका ख्याल पांडवोंको अत्यंत था जिससे उनके और कौरवोंके बीच इतना ईर्षा द्वेष बढकर सर्वनाश हुआ गिर्धर कविरायने भी लिखा है.

"नारी अतिबल होत है, दोऊ दलनको नाश ।
कौरव पांडववंशको, कियो द्रौपदी नाश" ॥

एक दफे जब श्रीकृष्णजी अपनी पटरानी सत्यभामा सहित पांडवोंकी सुध लेने वनमें पधारे थे तब सत्यभामाने द्रौपदीसे पूछा कि, महिषि जिस प्रकार तुम अपने पतिको वशमें रखती हो वह हमेंभी बताओ. द्रौपदीने उत्तर दिया कि, स्त्रीका पातिव्रत धर्म निबाहना ही एक वशीकरण मंत्र है. ऐसा करनेसे ससुराल और मायकेकी लाज रहती है और ईश्वरके यहांभी पर मगति मिलती है. हम काम क्रोध छोड निजपतिकी सेवा करती हैं. घमंड छोड उनकी आज्ञा मानती हैं, कुवाक्य और कुचालसे बचती हैं, बेढंगे रूपसे कभी नहीं रहितीं, निजस्वामीके विचारके अनुसारही काम करती हैं, सिवाय पतिके अपने पुत्रसे भी एकान्तमें बात नहीं करती हैं और न किसी की ओर आंख उठाकर देखती हैं, नीची आंखकर नम्रता भावसे सबसे बोलती हैं, छोटे दर्जेके स्त्री पुरुषोंको मुहँ नहीं लगातीं, बुरे चाल चलनवाली स्त्रियोंसे मेल नहीं रखतीं, अच्छी स्त्रियों की सेवा करती हैं गैरपाहचान स्त्रियोंसे हेलमेल नहीं करतीं. सदैव पति-

के बाद भोजन करती हैं और दास दासियोंके होते हुये भी पतिके बाहिरसे आने पर खड़ी होजाती हैं और पानी पंखा लेकर दौड़ती हैं भोजनादि पदार्थ शुद्ध रखती हैं और सब गृहस्थीके काम उचितसमयपर करलेती हैं, विना बात हँसने द्वार तथा छत आदिपर खडे होकर झांकनेसे और वन उपवनमें जानेसे परहेज करती हैं. पतिके प्रदेश रहिने पर बुरी कामनाओंको त्याग उपवास और हरि भजन करती हैं जिस वस्तुको पति नहीं चाहते उसको हम भी नहीं चाहतीं और पतिसे कुछ भी दुराव नहीं रखती हैं. बड़ोंकी आज्ञा पालन करती हैं, पतिके द्रव्यका इन्तिजाम करती हैं और आमदनी खर्चका हिसाब रखती हैं सबसे पहिले उठती, सबसे पीछे सोती हैं–महाभारतके युद्धके अंतमें द्रौपदीके पांच पुत्रोंको अश्वत्थामाने मार डाला था बादको बहुकालतक राजसी सुख भोगकर महारानी द्रौपदी पांडवोंके साथ हिमालयपर जाकर बर्फमें सीजगई.

धन्वन्तरिवैद्य–(आयुर्वेदके प्रकट करनेवाले). पुराणोक्त कथानुसार समुद्रके मथेजानेपर १४ रत्न निकले जिनमेंसे एक आयुर्वेदके प्रकट करनेवाले धन्वन्तरि वैद्य भी थे जिनको भारतवासी ईश्वरका अंशावतार मानतेहैं. इनसे कुछ काल पीछे दिवोदास नाम काशिराज आयुर्वेदका बड़ा विद्वान् धन्वन्तरि नामसे प्रसिद्ध हुआ. इस दिवोदास धन्वन्तरि द्वारा आयुर्वेदका बहुत कुछ प्रचार हुआ. और इसने चिकित्सातत्त्वविज्ञान, चिकित्सादर्पण, तथा चिकित्साकौमुदी नामके ग्रंथ रचे जो अब लुप्त होगये हैं. इसके बाद आत्रेय, पुनर्वसु, च्यवन, अगस्त्य, जाबालि, अश्विनीकुमार आदि ऋषियोंने ब्रह्मवैवर्त पुराणांतर्गत ब्रह्मखण्डके १५ वें अध्यायमें वर्णित अनेक वैद्यक ग्रंथ रचे थे जो अब नहीं मिलते हैं. बादको चरक, सुश्रुत, वाग्भट्टऋषियोंने आयुर्वेदपर अपने २ नामकी बड़ी २ संहितायें बनाईं जो अब वृह त्रयी नामसे प्रसिद्ध हैं. यह तीनों संहिता परम उपयोगी हैं और इसीकारण इनके साम्हने प्राचीन वैद्यकग्रंथोंका प्रचार रफ्तेर उठगया और आखिरको वे लुप्तही होगये. अंतमें अबसे पहिले ४ और ५ सौ वर्षके बीच अनेक वैद्यक ग्रंथ बने जिनमेंसे माधवनिदान, शार्ङ्गधरसंहिता और भावप्रकाश मुख्य हैं और लघुत्रयी नामसे विदित हैं.

धृतराष्ट्र–चंद्रवंशी राजा विचित्रवीर्यके निर्वंश मरजानेपर उस समयकी रीत्यानुसार विधवा रानियों अम्बिका और अम्बालिकामें व्यासजीसे गर्भाधान कराया गया, जिससे धृतराष्ट्र और पांडु २ पुत्र हुये और चंद्रवंश नष्टहोनेसे बचा. धृतराष्ट्र जन्मांध थे, एवं राजा पांडु राज्य करते थे. जब पांडु राज्य छोड़ बनको चले गये तो लाचार धृतराष्ट्रको काम सम्हालना पड़ा. धृतराष्ट्रके दुर्योधन आदि १०० पुत्र थे जो कौरव कहिलाते थे और पांडुके युधिष्ठिर आदि ५ पुत्र थे जो पां-

डव नामसे प्रसिद्ध थे. जब धृतराष्ट्रके पुत्र तथा भतीजे समर्थ हुये तो उन्होंने आधा राज्य अपने पुत्रों और आधा अपने भतीजोंको बाँटकर दे दिया. कौरवोंने इस बातपर विरोध किया और सब राज लेनाचाहा, निदान अनेक प्रकारसे पांडवोंको दुःख देने और उनकी प्रतिष्ठा भंग करनेका उपाय करने लगे. महाराज धृतराष्ट्र जो बड़े परिणामदर्शी थे और जिनको अपने संबंधियोंमें झगड़ा होना अत्यंत दुःखदाई जान पड़ता था बहुत दिनोंतक टालते रहे, किंतु होतव्यता बडी प्रबल है, निदान अंतमें कौरवों और पांडवोंमें छिडी. कुरुक्षेत्रके मैदानमें युद्ध हुआ जो १८ दिन तक जारी रहा और जिसका सविस्तर वृत्तांत वेदव्यास कृत महाभारतमें लिखा है इस लड़ाईमें भारतके सब छोटे बड़े राजे महाराजे शरीक हुये थे. कोई कौरवोंका और कोई पांडवोंका तरफदार था. अंतमें सब कौरवे और सब राजे महाराजे जो दोनों तरफ शरीक हुये थे मारे गये. पांचों पांडव श्रीकृष्णमहाराजकी मदद से जीते बचे, जिनमेंसे सबसे बड़े युधिष्ठिर गद्दीपर बैठे. महाराजधृतराष्ट्र अपने उपद्रवी पुत्रोंके मारेजानेसे दुःखी हो तपोवनको चले गये. वनमें एक दिन आग लगी. उसीमें स्त्रीसहित जल मरे. इनके चरित्रोंसे यही उपदेश निकलता है कि, आपसका विवाद वंशको नष्टकर देता है और दूसरोंके झगडेमें कूदनेवालोंकाभी नाश होता है, जैसे इस युद्धमें सैकड़ों भारतवासी राजा, महाराजाका हुआ. और कि उपद्रवी पुत्र छठी उंगलीके समान है जिसके रहिनेसे भी दुःख और काटनेसे भी दुःख

नकुल (पांडव) महाराज पाँडु हस्तिनापुराधीशके चतुर्थ पुत्र रानी माद्रीके उदरसे थे. सहदेव इनके सगे भाई थे और युधिष्टिर, भीम, अर्जुन सौतेले भाई थे. नकुलका रंग सांवला और डील डौल भारी था. इनकी माता रानी माद्री निज पतिके साथ सती होगई थी. निदान सौतेली माता रानी कुन्तीने इनको पालाथा ये पशुचिकित्सामें निपुण थे. "वैद्यकसर्वस्व" इनका बनाया ग्रंथ अब नहीं मिलता है. अंतमें पांचों पांडवें हिमालयपर जाकर बर्फमें सीजगये. नकुल अस्त्र शस्त्र भी खूब चलाना जानतेथे और ज्योतिषविद्यामें निपुण थे. द्रौपदीके सिवाय इनकी दूसरी रानीका नाम विजया था जिससे सुहोत्रनामक पुत्र उत्पन्न हुआ था.

नग्नस्वामी–ये चित्रकार विक्रमादित्य हर्ष महाराजा उज्जैनके दर्बारमें था. इसने राज्यदर्बारको सुशोभित करनेके लिये उस वक्तकी जगत प्रसिद्ध सुंदरियोंके चित्र खींचे थे.

नन्द्–(महाराजनन्द मगधनरेश). इनके बापका नाम महानन्दीन था. स० ई० से ३७० वर्ष पूर्व गद्दीपर बैठे और ५० वर्ष राज्य करके विष खिलाकर मार डाले गये. इनके वजीर शक्टारने अपमानित होकर एक महाक्रोधी, दृढप्रतिज्ञ विद्वान् ब्राह्मण चाणक्य नामकको इनसे भिड़ाकर अपनी मानहानिका बदला लिया. इसका वृत्तांत चाणक्यके संम्बधमें हुआ है (देखो चाणक्य). चाणक्यने

एक दासीकेद्वारा महाराज नन्दको आठों पुत्रसहित विष दिलवाकर स० ई० से ३२० वर्ष पहिले नष्ट करदिया और चंद्रगुप्तको जो महाराज नन्दके वीर्यसे मुरा नामक नायनमें उत्पन्न हुआ था गद्दीपर बिठलाया. नन्दकी राजधानी पाटलीपुत्र (पटना) मेंथी और शक्टार तथा राक्षस उसके वजीर थे-महाराज नन्दके पुत्रोंसहित नष्ट होनेका वृत्तांत कवि विशाखदत्तने "मुद्राराक्षस" नाटकमें विस्तृत रूपसे लिखा है।

नन्ददास–(भाषाकवि, अष्टछाप) अष्टछापका विवरण विट्ठलनाथके प्रसङ्गमें पढो–इनकी रासपञ्चाध्यायीमें वही आनन्द आता है जो जयदेवरचित गीतगोविंदमें–इनकी कविताके विषयमें यह उक्ति प्रसिद्ध है कि, "और सब गढिया नन्ददास जडिया" गोस्. मी विठ्ठलनाथजी इनके गुरुथे २५२ वैष्णवोंकी वार्तामें लिखाहै कि, ये पूरबके रहिनेवाले सनाढ्य ब्राह्मण बडे पंडितथे. बड़े भाईका नाम तुलसीदास था–एकदफे अपने ग्रामके लोगोंके साथ द्वारिकापुरीके दर्शनोंको गये रास्तेमें स टगया, निदान भटकते हुये सिन्धुनदीपर पहुंचे–वहां एकरूपवती खत्रानीपर मोहित हो उसके घरका फेरा करने लगे जब यह बात फैलगई तो उस स्त्रीके घरके लोग लोकनिन्दाके भयसे नगर छोड गोकुलको चलदिये–नन्ददासजभी पीछे होलिये–गोकुल पहुंच गो० विठ्ठलनाथके दर्शन और उपदेशसे चित्तकी वृत्ति लौटगई, निदान शिष्य हो वहीं रहिने लगे–इन्होंने समग्र भागवतका भाषानुवाद कियाथा, परंतु यह सोच कि, व्रजवासी व्यासोंके साम्हने मेरी कथाका कौन आदर करेगा समग्र ग्रंथ जमुनाजीमें डुबादिया–केवल रासपञ्चाध्यायी गो० विठ्ठलनाथजीके आग्रह करनेपर रहिनेदी अकबरने इनकी प्रशंसा सुन अपने दर्बारमें इन्हें बुलायाथा–वहां पहुंच इन्होंने एक रासका पद सुनाया, जिसके अंतमें था कि, "नन्ददास तहां ठाढो निपट निकट" यह सुन अकबर पीछे पड़गया कि, "निपट निकट" का भेद कहो. नन्ददासजीने उसी समय वहीं प्राणत्याग दिये–भक्तमालमें इन्हें रामपुरवासी चंद्रहासका पुत्र लिखाहै–डाक्टर ग्रीअर्सनने इनके बनाये निम्नस्थ ग्रंथोंके नाम लिखे हैंः–नाममाला, अनेकार्थपञ्चाध्याई, रुक्मिणीमंगल, दशमस्कंध, दानलीला और मानलीला इनका सिद्धांत था कि,सत्संग करनेसे अवश्य मोक्ष होजाता है–प्रायः वि०सं० १५८५में जन्मेथे.

नन्दबबा– (नन्दराय) महावन जिला मथुराके रहिनेवाले जातिके अहीर थे–श्रीकृष्ण महाराजको पुत्र करके इन्हींने पाला था–इनकी रानीका नाम यशोदाजी था–इनके अनेक गऊ बछडे थे और अपनी जातिके लोगोंके नायक थे– नन्दगाँव जिला मथुरामें इन्हीं का बसाया अबतक विद्यमान है–नन्दगांवमें रूपसिंह जाटका बनवाया नन्दबबाका एक मंदिर है महावनमें नन्द-

बडाके महिलके असली खम्भे अबतक मौजूद हैं- खम्भे पत्थरके हैं, और उनपर अतिसुंदर खुदाई है ।

नरहरि-(भाषाकवि) असनी ग्राम जि० फतेहपुरके रहिनेवाले भाट महापात्र थे-दर्बार अकबरीके बडे कवीश्वरोंमें इनकी गणना थी- अकबरने असनी ग्राम इनको नानकार दियाथा-इन्होंने निजग्राम असनीमें कुलवान. कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंको बसाया और जजमानीका कामभी नहीं किया-इनके वंशके लोग अबतक भाटोंमें सर्वोत्तम गिने जाते हैं-छप्पय इन्होंने बहुतसे कहेहैं-निम्नस्थ छप्पय गौओंके गलेमें बाँध अकबरके साम्हने पेश करके इन्होंने गोवध बंद करायाथाः-

छप्पय-अरिहु दन्त तृन दवहिं ताहि नहिं मारसककोई ।
हम सन्तत तृन चरहिं वचन उच्चरहिं दीन होई ॥
अमृतपय नित स्रवहिं बच्छ महिथम्भन जावहिं ।
हिन्दुन मधुर न देहिं कटुक तुरकन न पियावहिं ॥
कहि नरहरि सुन शाहपद बिनवत गऊ जोरे करन ।
केहि अपराध मोहि मारियतु मुयेऊ चाम सेइयतु चरन॥

नरहरिजीने रीवाँनरेश रामसिंहके यहां जाकरभी मान सन्मान पायाथा-इनके पुत्र भाषाकवि हरनाथजी बडे प्रतापी हुये हैं- नरहरिजी स० ई० १५५० में विद्यमान थे. बादशाहने इनको "महापात्र"की उपाधि दीथी और कहाथा कि आपके सिवाय जो और भाट हैं वे गुणके पात्र हैं. इनके वंशज अबतक बनारस तथा बेंटी जिला रायबरेलीमें मौजूद हैं । ग्राम असनी पर अब इनके वंश जोंका अधिकार नहीं है और इनका मकान भी गंगाजीने कटालिया ।

नरसीमेहता- (प्रसिद्धभक्त) भक्तमालके लेखानुसार ये जूनागढ (गुजरात) के रहिनेवालेथे एक दिन भावजके तानेपर इनको दुःख हुआ और घरछोड भगवद्भक्तिको प्राप्तहुये-इनका कुल शाक्त था और जातिके नागर ब्राह्मणथे-समय इनका वि० सं० १५५० से १६५० के भीतर होना निश्चय है-कविताभी करतेथे और विष्णुपद खुब गातेथे-शामलिशाशाह (श्रीकृष्ण) का इनकी बेटीके घर जाकर भात पहिनाने तथा इनके बेटेकी शादी करनेकी कथा जो भक्तमालमें लिखी है इनकी भगवद्भक्तिकी सूचक है.

नल-ये निषध (मगधदेश) के राजा वीरसेनके पुत्र थे वि-दर्भ (बरार नरेश भीमसेनकी कन्या भुवनमोहनी दमयन्तीसे इनका स्वयंवररीतिसे विवाह हुआ था. ये बड़े धीर वीर सर्वगुणसम्पन्न धर्मात्मा राजा थे. वेदविद्या, धनुर्विद्या और अश्वचिकित्सामें निपुण थे. घोडोंको हांकने तथा

उनपर सवार होनेमें अद्वितीय थे और पाँसा खेलनेके रसिकथे. विवाह होनेके बाद १२ वर्षतक खूब सुख चैनसे बीती और इंद्रसेन नामक पुत्र तथा इंद्रसेना नामक कन्या पैदाहुई. इसके बाद राजा नलपर विपत्ति पड़ी, निदान एक दिन निजभ्राता पुष्करके साथ पाँसा खेल कर अपना सर्वस्व हारगये. पुष्करने राज्याधिकार पाय ढंढोरा पिटवादिया कि, नलको राज्यभरमें कोई शरण न देवे. राजा नलने निर्धन और निस्सहाय हो बच्चोंको तो ननिहाल भेजदिया और आप रानी दमयन्तीको साथले केवल एक धोती पहिने हुये जंगलका रास्ता लिया. रास्तेमें ३ दिन रात बिना अन्न जलके बीते. तब तो भूखसे व्याकुल हो नलने पखेरुओंके पकडनेके लिये अपनी धोती फेंकी पखेरू धोती भी लेकर उड़ गये, निदान रानी दमयन्तीकी साड़ीके २ टुकडे कर काम चलाया. पश्चात् कुछ मछलियें पकड़कर भूनीं लेकिन जब राजा नल नहाने लगे तो भूनी हुई मछलियें तालाबमेंको चल पड़ीं. तबहीसे मसल मशहूर हुई कि, "विपत्तिके समय भूंजी ताले जाती हैं." ऐसी आपदाके समय नलने दमयन्ती को नैहर चलेजाने को बहुत कुछ समझाया, पर उसने पतिका साथ त्यागना स्वीकार न किया और भूखसे व्याकुल हो पतिके गलेमें हाथ डाल एक पेडकेतले सोगई. विपत्तिके समय अकलभी उलटी होजाती है निदान राजा नल सोती हुई पतिव्रता रानी दमयन्ती को अकेला वनमें छोड चलते हुये. रानी जब जागी तो उसने निज पतिको न पाकर छाती कूट २ कर विलाप किया जिससे पाषाणभी पसीज ताथा. फिर इधर उधर ढूंढती हुई अनेक अपत्तियोंसे बचती, पतिवियोगमें विलपती सुबाहुनगरनरेशके यहां पहुंच रानीकी दासियोंमें नौकर होगई और वहांसे उसके पिताके भेजे हुये दूत उसको विदर्भको लेगये इधर नल घूमते २ राजा ऋतुपर्ण अवधनरेशके दर्बारमें पहुंच घोडा हांकनेपर नौकर होगये थे. पश्चात् दमयन्तीके पिताने नगर २ गांव २ नलकी खोजमें दूत भेजे. अयोध्यासे लौटकर एक दूतने कहा कि, राजा ऋतुपर्णके यहां बाहुक नाम घोड़ा हांकनेवालेके. आंसू दमयन्तीका नाम सुन्तेही, बही चले थे. यह सूचना पाकर दमयन्तीके पिताने राजा ऋतुपर्णको उनके कोचवान् सहित बुला भेजा. विदर्भ पहुंच राजा नलने जो कोचवान्के भेसमें थे, अपनी रानी और बच्चोंको पाया. सबको आनन्द हुआ राजा भीमसेनने नलको अपना राज्य दे विदर्भहीमें रहिनेको कहा, परंतु नलने सुसरालमें रहिना अंगीकार न किया. तब तो राजा भीमसेनने अनेक रथ, घोडे, हाथी, प्यादे, सहित राजा नलको बिदा किया और दमयन्तीको अपने पासही रहिने दिया–निषध देश पहुंच राजा नलने पुष्करको बुला फिर चौसर खेलने पर आमादा किया–ऋतुपर्णके यहां रहिकर नलको चौसर खेलना खूब आगया था, निदान उन्होंने अपना राज्य पुष्करसे जीत लिया, पुष्कर मारे डरके

कांपने लगा-तब नलने समझाया कि, जो हुआ सो भाग्यवश हुआ, तुम पहिले काम करतेथे वैसेही काम करते रहो-फिर दमयन्तीको भी बेटाबेटी समेत बुलालिया और बहुत दिनोंतक राज्य किया.

नहुष-चंद्रवंशी महाराज पुरूरवाके पुत्र थे. पुराणोक्त कथानुसार इन्होंने भूमण्डलका एक छत्र राज्य किया. परम प्रभावशाली राजा ययाति इनके पुत्र थे. नहुषने अपनी पालकी ब्राह्मणऋषियोंसे उठबाई, अतएव ब्राह्मणोंने शाप दिया जिससे राजा नहुष सांप होगया.

नागरीदास-(भाषाकवि) कृष्णगढनरेश महाराज यशवंतसिंहका उपनाम नागरीदास था. कवितामें कहीं २ नागर तथा नागरिया नामभी लिखा है. ये वल्लभीय संप्रदायके वैष्णव थे अनेक बड़े २ मंदिर इनके बनवाये अवतक कृष्ण गढ़में मौजूद हैं. इनके हृदयमें राज करते हुये भी विरक्तता समाई हुई थी देखो इनका निम्नस्थ पदः-

पद-जहां कलह तहां सुख नहीं, कलह सुखनको शूल ।
सबहि कलह एक राजमें, राज कलहको मूल ॥
अपने या मन मूढ़ ते, डरत रहत हों हाय ।
वृन्दावनकी ओरते मत, कबहू फिरजाय ॥
लेत नसुख हरिभक्तिको, सकल सुखनको सार ।
कहा भयो नृपहू भये, ढोवत जगबेगार ॥

वि० स० १८०८ में मुगलसम्राट् दिल्लीने इनको उपद्रव शान्ति करनेके लिये कुमायुं पर्वतपर भेजाथा वहां बड़ी वीरतासे लड़े और सन्धि करके दिल्लीको लौटे- दिल्लीसे विदा हो फिर आप कृष्णगढ नहीं पधारे, परंतु संसारको स्वप्नवत् समझ वैराग्य धारण करलिया, राजकुटुम्बसे मुहँ मोडा और राजसी ठाट त्याग वृन्दावनकी ओर गमन किया- इस विषयमें आप लिखते है किः-

फिर वहेबीच राजसप्रवाह- गये इंद्रप्रस्थ हिये विरहदाह. ॥
तज दियो तहां सब प्रवृत संग- भये व्रजसन्मुख फिर बढ्यो रंग ॥
तब चले चरण बरसाने ओर- किये पैग २ तीरथ करोड़ ॥
ऐसो बरसानो निरख-बढि आयो पुनि प्रेम ॥
करत दंडवत लुटतरज- छुटि गये राजसनेम ॥

इससे पहिले एक दफे और जब आपने ब्रजके तीर्थोंकी यात्रा कीथी तो बड़े २ साधु महात्मा लोग आपको महाराज कृष्णगढ जान उदासीन भावसे अलग रहे थे, लेकिन जब सुना कि, नागरीदास येही हैं तब तो दौड़ २ कर आपको लिपट गये थे, जैसा कि, आपने इस दोहेमें लिखा है-

दो०-सुन व्यवहारिक नाममो, ठाढ़े दूर उदास।
दौडमिले भरनैन सुन, नाम नागरीदास ॥

प्रसिद्ध भाषा कवि आनन्दघनसे आपकी बड़ी मित्रता थी-
निम्नस्थ ग्रंथ आपके बनाये हैं:-

बिहारचंद्रिका (वि० सं० १७८८), निकुंजविलास (वि० सं० १७९४) वृजसार (वि० सं० १७९९) स्वजनानन्द (वि० सं० १८०२) भक्तिमग-दीपिका, युगलभक्तिविनोद (वि० सं० १८०८), बनविनोद (वि० सं०१८०९) बालविनोद, उत्सवमाला, तीर्थानन्द (वि० सं० १८१०), बनजनप्रशंसक (वि० सं० १८१९).

आपकी कविता माधुर्य और गूढ भाव तथा प्रेमरससे भरी हुई है.

नागेश- (पं०नागेश प्रसिद्ध विद्वान्). काशीके रहिनेवाले महाराष्ट्र ब्राह्मण थे. पं० हरदीक्षितजी इनके गुरुथे वि० सं० की १८ वीं शताब्दीमें हुये. ये अनेक शास्त्रोंके पूर्ण विद्वान् थे. विविधशास्त्रोंपर इनके बनाये ग्रंथ मिलते हैं और वे नीचे लिखे हैं:-

विवरणनामक व्याख्यान भाष्यप्रदीपपर, मंजूषा, लघुशब्देन्दुशेखर, परिभाषेन्दुशेखर, तीर्थेन्दुशेखर, प्रायश्चितेन्दुशेखर, काव्यप्रदीप, रसगंगाधरव्याख्यान, सप्तशतीटीका, सप्तशतीप्रयोग, वाल्मीकिरामायणकी टीका और सांख्य तथा योगशास्त्रोंपर वृत्ति.

नागोजीभट्ट-(मनोरमा शेखरके कर्ता) ये संस्कृतविद्याके पूर्ण ज्ञाता थे-परतापगढ (अवध) के राजा रामबक्ससिंहने इनका मान सत्कार किया था-इनका बनाया मनोरमा शेखर नामक व्याकरण ग्रंथ देशमान्य है-स० ई० १७०० के लगभग इनका समय है-

नाथकवि-उदयनाथ, काशीनाथ, शिवनाथ,शम्भूनाथ, हरनाथ कवीश्वरोंने अपना भोग नाथ लिखाहै-पृथक् २ देखो.

नादिरशाह- (बादशाह ईरान) खुरासानके एक गडरियेका बेटाथा-बचपनहीसे लड़ने भिड़नेका इसको शौक था-युवा होकर कुछ लुटेरोंको संग्रह करके आसपासके गांव लूटने लगा-पश्चात् एक बड़ी फौज संग्रह करसका और खुरासानके अफगानोंको मार भगाया-फिर ईरानके बादशाहको गद्दीपरसे उतारकर इसने सूफीवंशके एक शाहजादेको तख्तपर बिठलाया और कुछ-दिनों पीछे आपही ईरानका बादशाह बनबैठा और काबुलकंधारतक राज्य बढाया-स० ई० १७३९ में ६५ हजार सेना लेकर हिंदोस्तानपर चढाई की मुगलसम्राट् मुहम्मदशाहने कर्नालके मैदानमें मुकाबला किया पर हारा और नादिरशाहके साम्हने चलागया-नादिरशाहने उसके साथ दोस्तीका वर्ताव

किया और अपनी सेनासहित दिल्ली देखनेको आया प्रथम नादिरशाहका इरादा कुछ दिन मेहमानके तौरपर दिल्लीमें रहिकर ईरानको लौट जानेकाथा, परंतु एक दिन दिल्लीमें लोगोंने यह खबर उडादीकि,नादिरशाह मरगया यह खबर पातेही दिल्लीकी प्रजा नादिरशाहके सिपाहियोंपर टूटपड़ी और सैकड़ोंको मारडाला प्रातः काल उठकर जब नादिरने यह हाल देखा तो क़त्ले-आमका हुक्म दिया-जब प्रजाका अधिक भाग कटगया तो मुगलसम्राट् मुहम्मदशाहने नादिरके पास हाजिर होकर प्रार्थना की कि, यदि सब प्रजा काटडाली जायगी तो फिर बादशाहत किसपर की जायगी-इसपर नादिरने क़त्ल मौकूफका हुक्म दिया-हुक्म पातेही फौजके सिपाहियोंने तलवारें जहांकी तहां रोकलीं नादिरशाहकी सेना उसका हुक्म ऐसी फुर्तीसे मानतीथी कि, जिसकी वजहसे "हुक्म नादिरशाही," प्रसिद्ध है-पश्चात् नादिरने दिल्लीको लूटा और ३२ करोड रुपयेसे अधिकका धन लेगया, जिस्में तख्ते-ताऊस और कोहनूर हीरा भी शामिल था-सिंधसे इस पारका मुल्क मुगल-सम्राट् मुहम्मदशाहको अपनी तरफसे देगया और बडे २ सर्दारोंको समझा गया कि,बादशाहका हुक्म मान्ना नहीं तो तुम्हारे समझानेको मैं फिर हिंदोस्तान देखूंगा. इसके बाद ईरानकी तरफ कूंच किया जिस गाँव और शहिरमें होकर नादिरशाह और उसकी फौज निकलतीथी प्रजागण अपनी जान लेकर भागते थे-आखिर रास्तेमें कांगडेके समीप एक साधु अपनी गुफामेंसे निकल निर्भय नादिरशाहके साम्हने चलागया और कहा कि," बाबा अगर तू देवताहै तो देवतोंके कामकर और जो पंडितहै तो लोगों को मुक्तिका रास्ता बता आर यदि तू बादशाह है तो प्रजाको सुखदे " इसके उत्तर में नादिरने कहा कि, मैं न देवता हूं,न पंडित हूं न बादशाह हूं जो उनकेसे काम करूं, मुझको तो परमेश्वर अधर्मी और पापी लोगों को सजादेनेके लिये भेजताहै. शुरूमें नादिर दयालु था, परंतु हिंदोस्तान से लौटनेके बाद बडा निर्दयी होगयाथा, यहांतक कि,एक दिन क्रुद्ध होकर अपने बेटेकी आंखें निकलवा डालीं स० ई० १७४७ में प्रजागणने उसको मारडाला नादिरशाह जबतक जीतारहा किसीसे नहीं हारा-इसीकारण इस देशमें यह उक्ति अबतक प्रसिद्ध है "जबतक जियें नादिर शाह तबतक सीस नवावें काहि"

नान्हक-(सिक्खोंके प्रथम गुरु-खालसापंथके संस्थापक) जिला लाहौर के तालवाडी नामक गाँवमें कालूमल खत्रीके घर वि०सं० १५२६ में कार्तिक शुदी१५ को जन्मे. इनके पिता तालवाड़ी गाँवके पटवारी थे. इनके बालचरित्रोंके पढनेसे मालूम होता है कि, बुद्धि शुरूहीसे अत्यंत तीव्र थी और मन संसारी कामोंसे विरक्त था. थोड़ेही दिनोंमें इन्होंने कुछ फार्सी और हिसाब किताब शीघ्रही सीखलियाथा. जब ये बड़े हुये तो पिताने बालानामक सिंधीजाटके साथ इनको ४०रु० देकर व्यापार करनेके लिये बाहर भेजा. रास्तेमें कुछ

साधु मिलगये. उनके खिलाने पिलानेमें चालीसों रुपये खर्च कर नान्हकजी घरको लौट आये, निदान पिताने निराश हो इनको बहिनके घर सुलतानपुर भेजदिया, और बहिनोईने सिफारश करके इनको नवाब दौलतखाँ लोदीका खजान्ची करादिया और थोड़ेही दिन बाद जिला गुरदासपुरमें एक खत्रीकी बेटी सुलखनीसे इनकी शादी करादी, जिससे श्रीचंद व लक्ष्मीदास २ पुत्र हुए श्रीचंदसे बेदी संप्रदाय और लक्ष्मीदाससे उदासी संप्रदाय चली. पुत्र होनेके बाद गुरुके चित्तमें विशेष वैराग्यका उदय हुआ, निदान एक दिन घरबार छोड जंगलको चलते हुये और सुलखनीजीको पुत्रों सहित नैहर पहुँचा दिया. बाला और मर्दाना २ जन गुरुके साथ रहितेथे. मर्दाना जो बहावी मुसल्मान था बाजा बजाताथा और गुरुज्ञानमार्गके भजन गातेथे. हिंदू मुसल्मानोंको मिलाकर एक करदेनाही इनका मुख्य उद्देश था. इनका सिद्धांत था कि,ईश्वर एक है जाति पांति कुछ नहीं है,और पन्थ वा मत कोई पदार्थ नहीं है.ये उत्तम साधु थे जीवन अच्छे कामोंमें बितातेथे. अनेक तीर्थोंकी यात्रा कीथी, मक्का भी गयेथे हिंदू मुसल्मान दोनों इनके चेले हुये थे वि० सं०१५९६ में ७० वर्षके होकर सिधारे इनके मृतक शरीरपर हिंदू मुसलमानों में झगडा हुआ. परंतु चादर उठाकर देखा तो लाश नहीं पाई. नान्हककी .जन्मभूमिपर एक मंदिर बनाहै जिसको नान्हकाना कहिते हैं. बाबरने जब हिंदोस्तानपर चढाई की थी तो गुरुसे उसकी मुलाकात पंजाबमें हुईथी. इनके बनाये अनेक लावनी व भजन हैं और "गुरुकी साखी" नामक ग्रंथभी इन्हीका बनाया हुआ है.

नानाधन्धूपंथ-(नानासाहिब).ये पूनाके अन्तिम पेशवा बाजीराव द्वितीयका गोद लिया बेटा साक्षर और प्रशंसनीय चाल ढालका सुडौल हृष्टपुष्ट,मिलनसार, अपने पूर्वजोंके धर्मपर आरूढ और वर्णका ब्राह्मण था. कान्हपुरके निकट बिठूरमें रहिता था. पेश्वा बाजीरावके बाद बृटिश गवर्नमेंटने वह पेन्शन जो बाजीरावको मिलती थी नानासाहिबको नहीं दी, इसी वजहसे नानासाहिब दिलमें बृटिश गवर्नमेंटसे शत्रुता मानता था. पर कानपुरमें रहिनेवाले अंग्रेजों तथा मेमोंसे खूब मिलता और मित्रताभाव रखता था. स० ई० १८५७ के गदरमें नानासाहिबने कानपुरवासी सब अंग्रेजों, मेमों और उनके बच्चोंको बचानेका वायदा किया था. पर अफसोस है कि, बागियोंने
उन सबको मार डाला. गदरके समय नानासाहिब जिधर होकर निकल जाता था सब म्लेच्छ कान टेंक जाते थे और दशों उंगलियें मुहँमें देकर प्राण बचातेथे. अंतमें सर हेनरी हैबलाकसे परास्त होकर नानासाहिब फतेहपुरके मुकामसे भागा और आजतक नहीं मिला. गदरके बाद बृटिश गवर्नमेंटने नानासाहिबको कानपुरके किश्तोखूनका दोषी ठहराया और फांसीका हुक्म दिया लेकिन नाना

साहिबका पता कहीं नहीं लगा अनेक लोग साधुके भेसमें पकड़ २ कर फांसी दे दिये गये परंतु विश्वास है कि, उनमेंसे कोईभी नानासाहिब न था.

स० ई० १८२४ में जन्मे.

नानाफर्नवीस-(मरहटासर्दार) जातिके महाराष्ट्र ब्राह्मण थे अंग्रेज इतिहास लेखकगण इस बातपर एक मत हैं कि "नानाफर्नवीस बड़े सुप्रबन्धकार राजनीतिनिपुण और चतुर पुरुष थे" नरायण राव पञ्चम पेश्वाने इनको अपना वजीर बनाया। कुछही दिनों बाद अनन्दी बाईने अपने भतीजे नरायणरावको विष देके मरवा दिया और नरायणरावके चचा रघुनाथराव पेश्वा बन बैठे। मरनेसे कुछही महीने बाद नरायणरावके माधौराव नारायण नामक पुत्र हुआ जिसको रघुनाथरावने तो हराम का ठहिराया लेकिन नानाफर्नवीस आदि सब मरहटा सर्दारोंने मिलकर उसको गद्दीपर बिठलाया और रघुनाथरावको उतार दिया। इस पर रघुनाथरावने अंग्रेजोंसे मदद चही और नानाफर्नवीस फरासीसोंसे मिल गये, निदान युद्ध हुआ. नतीजा यह निकला कि, माधौराव नारायण तो पेश्वा रहे और रघुनाथरावको भी खर्चके लिये पेन्शन मिली. माधौराव नारायणकी नाबालिगीमें नानाफ़र्नवीसका अधिकार पूनादर्बारमें बहुत कुछ बढ़ा हुआ था. इसी कारण सेंधिया हुलकर, भोंसला तथा गैकवाड़ जो पेश्वाके आधीन होकर राजस्व देते थे नानाफर्नवीससे जलने लगे और स्वाधीन होजाना चाहते थे लेकिन जो २ इनमेंसे सर उठाता गया नानाफर्नवीसकी राजनीतिसे उसीको खूब ढीला होना पड़ा। सबसे पहिले महादाजी सेंधियाने सर उठाया और पूना दर्बारका आधिपत्य त्याग दिया लेकिन अल्पकालहीमें स०ई० १७९४ की साल उसने मरकर नानाफर्नवीसकी फ़िक्र सहजहीमें मिटादी. इसी समयके लगभग नानाफर्नवीसने निज़ाम हैदराबादपर राजस्व वुसूल न होनेके कारण चढ़ाई की और फतेहपाई. स० ई०१७९५ में माधौरावनारायणनें२१ वर्षका उम्रम आतमघात किया और बाजीराव द्वितीय अन्तिमपेश्वा गद्दीपर बैठे.इनके समयमें गैकवाड, भोंसला और निजामने पूना दर्बारसे मुहँ मोडा. यह देख बाजीरावने नानाफ़नवीसकी रायसे अंग्रेजोंसे अहिदो पैमान किया, जिसके अनुसार पेश्वाको कुछ अंग्रेजी फौजका खर्चा गवारा करना पड़ा और अंग्रेज़ोंने पूनादर्बारके शत्रुओंको परास्त करनेका वचन दिया. निदान द्वितीय मरहटायुद्ध शुरू हुआ जिसमें गैकवाड़, भोंसला और निजामको परास्त होकर अपने २ मुल्कका अधिकांश देकर संधि करनी पड़ी. फिर हुल्करने सिर उठाया लेकिन उसको भी अंतमें भोंसला और गैकवाडकी तरह अंग्रेजी फौजके मुकाबलेमें ढीला होना पड़ा. आपसके ईर्षाद्वेषका यह फल हुआ कि, मरहटोंका बल पराक्रम नष्ट होकर उनको दूसरोंका आधीन बनना पड़ा.

नानाफ़र्नवीस स० ई० १८०० में मरे इनका असली नाम जनार्दन बालाजी था.

नाभाजी–(भक्तमालके कर्ता). इनका असली नाम नारायणदास था. इनके बाप रामदास ब्राह्मण तैलङ्ग देशमें गोदावरी तट उत्तर रामभद्राचल पर्वतपर रहिते थे और हनुमानोपासकथे. बचपनहीमें नाभाजीके पिताका देहांत होगया और जब ५ ये वर्षके हुये तब इस देशमें घोर अकाल पड़ा, जिसमें बेचारी माता इनको वनमें छोड़कर चली गई. दैवयोगसे गुरु रामानन्दकी गद्दीक महन्त कील्हजी अपने पुत्र अग्रदासस्रहित उधरसे निकले और इनको अपने स्थानपर, जो जयपुरके निकट गलतामें है लेआये. वहां रहिकर साधुओंकी जूठन खाते २ इनकी बुद्धि निर्मल होगई. तब अग्रदासजीने इनको अपना शिष्य करलिया और नाभादास नाम रक्खा. वि० सं १६४१ और १६८० के बीच नाभाजीने निज गुरुकी आज्ञासे भक्तमाल नामक ग्रंथ १०८ छप्पय छन्दोंमें लिखकर पूरा किया. भारतवर्षीय उपासक सम्प्रदायके अनुसार इनकी गुरुपरम्परा यों है–

गुरु रामानन्दके शिष्य आशानन्द, उनके कृष्णदास पय अहारी, उनके कील्हजी, उनके अग्रदास और उनके नाभाजी. प्रसिद्ध महात्मा मलूकदासजी इनके गुरुभाई थे. पश्चात् स्वा० प्रियादास वृंदावनीने भक्तमालका तिलक कवित्तोंमें किया. इसके बाद भक्तमालके अनेक तिलक तथा अनुवाद बने और बनते जाते हैं. एक दफे मथुरामें साधुसमाज हुआ था तब नाभाजीको गुसांईकी पदवी मिली थी, नाभाजी जन्मांध थे–

नारायणभट्ट गोस्वामी–इनके पिताका नाम भास्कर तथा गुरुका नाम सनातन गोस्वामी था. गुरुमुखसे भागवतकी कथा सुनकर इनको वृजकेरूप गुप्तस्थानोंके प्रकट करने तथा भगवतलीला दर्शन करनेकी उत्कट इच्छा उत्पन्न हुई. तब इन्होंने पुराणोंसे पता लगाकर बृजके सब प्राचीन स्थानोंको प्रकट किया और रासलीलाका आरंभ कराया. आज कल लोग इन्हींके प्रदर्शित पथसे वृजयात्रा करते है और इन्हींके आविष्कृत स्थान तथा देवता इस समय पूज्य हैं वि० सं. १८१० में इन्होंने "व्रजभक्तिविलास" नाम ग्रंथ रचा जिसमें व्रजके स्थानों और उनके माहात्म्य का वर्णन है. इस ग्रंथमें १३३ वनों का वर्णन है जिनमेंसे ४२ जमुनाजीके पार हैं. भक्तमालमें लिखा है कि, ये बड़े पंडित थे और ज्ञान तथा स्मार्तवादके खण्डनमें परम निपुण थे. ये दीक्षित भृगुवंशमें मथुरासे १३ कोस पर मन्दराज नामक ग्राममें जन्मे थे. और १२ वर्षकी उम्रमें गुरुकी आज्ञासे राधाकुंडपर आबसे थे. ७ वर्ष पीछे फिर बरसानेके पास ऊँचे गाँवमें जारहे. इन्हींने वर्तमान शैलीकी रासलीला का प्रचार व्रजमंडलमें किया. डाक्टर ग्रिअर्सनके मतानुसार स० ई० १५६३ में जन्मे खेड़ागांव जिला मथुरा में कदम्बखण्डी के समीप इनका बनवाया नारायणसरोवर नामक तालाब अबतक मौजूदहै.

नारायणराव-(पञ्चमपेश्वा) बालाजी बाजीराव तृतीय पेश्वा इनके बाप थे अपने बड़े भाई माधौराव चतुर्थ पेश्वाके बाद स०ई० १७७२ में ये गद्दीपर बैठे लेकिन् इनके चचा रघुनाथरावकी स्त्री अनन्दी बाईने स०ई० १७७४ में इनको विष दिलवाके मरवादिया.इनकी मत्युके कुछ महीनेबाद माधौराव नारायण नामक इनके पुत्र हुआ जो पेश्वाकी गद्दीपर बैठा. इनका वजीर नाना फर्नवीस बडा स्वामिभक्त और सुप्रबन्धकर्ता था. इन्हींके वक्तमें मरहटों ने दिल्लीपर चढाई करके मुगलसम्राट् शाह आलम द्वितीय को कैद करलियाथा.

निपट निरञ्जनस्वामी-(भाषाकवि) दिल्लीके रहिनेवाले ब्राह्मण वि० सं० की १६ वीं शताब्दी में हुये. ये गो०तुलसीदासकी समान महान् सिद्ध हुये हैं. इनके रचे ग्रंथोंकी संख्या ठीक नहीं मालूम होती, परंतु पुराने संगृहीत पुस्तकों में इनके बनाये कवित्त सैकडों मिलते हैं. " शान्तिसरसा " तथा "निरञ्जनसंग्रह" इनके रचे ग्रंथहैं. इनकी कविता ऐसी प्रभावशालीहै कि, उसके श्रवण कीर्तनसे काम, क्रोध,लोभ, मोह से मनुष्य निस्संदेह छूटजाताहै निम्निस्थ प्रसिद्धपद इन्हीं का है:-

केते भये यादव सगर सुत केते भये ।
जातहू न जानें ज्यों तरैयां प्रभातकी ॥
बलु वेणु अम्बरीष मानधाता प्रहलाद ।
कहांलों गनाउँ कथा रावण ययातिकी ॥
तेऊ न बचे कालकौतुकीके हाथ ।
भांति २ रची सेन सहे दुःख घातकी ॥
चार २ दिनाको चाव सबकोऊ करै ।
अंत लुटजैहैं जैसे पुतरी बरातकी ॥

निवासदास-(हिंदीभाषाके सुलेखक) मथुराके सेठ लक्ष्मीचंदके मुनीम लाला मंगीलाल अग्रवाल वैश्य इनके पिताथे। वि०सं० १९०८ में इनका जन्म हुआ, इनके दो बड़े भाई और थे। ये महाजनीकार्यमें बड़ेही चतुरथे, थोड़ीसी उम्रमें दिल्ली जाकर सेठ लक्ष्मीचंदकी कोठीका उत्तम प्रबंध कियाथा । पंजाब-गवर्नमेंटने इनको दिल्लीका म्युनिसिपेलकमिश्नर नियत कियाथा और दर्बारियोंकी सूचीमें इनका नाम दर्ज कियाथा । ये वैष्णव थे लेकिन सम्प्रदायक सङ्कीर्णता इनमें नहीं पाईजातीथी । हिंदीभाषाके सुलेखकों में इनकी गणनाहै । तप्तासम्वर्ण, संयोगतास्वयंबर, रणधीर प्रेममोहिनी तथा परीक्षागुरु इनके रचे ग्रंथ अच्छे हैं । जिन्होंने इनको देखाथा वे कहतेहैं कि, "विद्या,

बुद्धि, धन, प्रतिष्ठा, सहृदयता, रसज्ञता, व्यवहारकुशलता, देशभक्ति तथा ईश्वरभक्ति इत्यादिगुणों के लिहाजसे लाला श्रीनिवासदास उत्कृष्टश्रेणीके पुरुष थे। वि० सं० १९४४ में परलोकगामी हुये।

निम्बार्कस्वामी-(सनकादिक अर्थात् निम्बार्क सम्प्रदायके आचार्य) ये महाराष्ट्रब्राह्मण अरुण ऋषिके पुत्रथे. माताका नाम जयन्तीथा. गोदावरी तट मुंघेरमें रहितेथे. परमविद्वान् होनेके सिवाय बड़े सिद्ध भी थे. वेदान्तसूत्रोंपर इन्होंने भाष्य रचाथा. अनेक स्तोत्रभी बनायेथे, जिनमें ईश्वरके रूप, जीव और मायाका निर्णय कियाहै. इन स्तोत्रोंपर व्याख्यायें भी रची हैं और उपासनाके लिये पद्धति बनाई हैं. एक "दशश्लोकी स्तोत्र" भी निर्माण किया है, जिसमें यह सिद्ध कियाहै कि, ईश्वर द्वैताद्वैतहै; जैसे सर्पका कुंडल सर्पसे भिन्न नहीं, जलकी तरङ्ग जलसे भिन्न नहीं, ऐसेही यह जगत् ईश्वर से भिन्न नहीं, केवल नाममात्रका फरक है। निम्बार्कस्वामीकी संप्रदायके २ मुख्य स्थानहैं, जिनमेंसे एक अरुण (दक्षिण) में और दूसरा सलेमाबादमें-इनका नाम निम्बार्क पड़नेका यह कारण हुआ कि,एक दिन कोई अतिथि संन्यासी इनके घर आया उसके लिये भोजन तैय्यार होते २ सूर्य छिपगया-सूर्यास्तके बाद संन्यासीने अपने नियमानुसार भोजन करनेसे इनकार किया यह देख इनको खेद हुआ और इन्होंने ईश्वरसे प्रार्थनाकी थोडीही देरमें निम्बवृक्षके ऊपर सूर्य चमकने लगा-संन्यासीने सूर्यको देख भोजन करलिया-तबहीसे इनका नाम निम्बार्क (निम्ब = वृक्ष + अर्क = सूर्ज) स्वामी पडा-स० ई० की १४ वीं शताब्दीमें हुये। इनकी संप्रदायके लोग श्रीकृष्णके युगलरूपका ध्यान पूजन करते हैं.

निहालसिंह-(महाराज राना निहालसिंह, सी० बी० धौलपुरनरेश) स० ई० १८६२ की साल धौलपुरके जाटवंशोत्पन्न राज्यवंशमें जन्मे आपके पूर्वजोंने स० ई० की ११ वीं शताब्दीमें चम्बल नदीके किनारे कुछ मुल्क विजय किया था. दिल्लीके सम्राट् सिकंदर लोदीने इस घरानेको रानाकी उपाधि दी, और स० ई० १७७९ में बृटिश गवर्नमेंटने महाराज रानाकी उपाधिसे विभूषित किया.महाराज निहालसिंह अपने दादे महाराज भगवन्तसिंह,के०सी० आई० ई० के बाद स० ई० १८७३ में धौलपुरकी गद्दीपर बैठे। स० ई०१८९९ में तीराकी चढ़ाईमें संयुक्त होनेकी अभिलाषा प्रकट करनेके बदले में आपने वायसराय महोदयसे सी० बी० की पदवी पाई अङ्गरेज़ी तथा संस्कृतके पूर्ण ज्ञाता होकर अपने पूर्वजोंके सनातन धर्मपर आरूढ थे. एक समय चलती गोलियोंके बीच घुसकर आपने डांकुओंको पकड़ा था. आप अपनी प्रजाके भक्तिभाजन तथा

उदार, गुणग्राही और सर्वप्रिय थे. स० ई० १८७७ के अकालमें आपने प्रजाकी बड़ी रक्षा की थी. आप सद्व्यवहार कुशल थे और अंग्रजोंसे आपका बड़ा हेल मेल था. घुड़दौड़ तथा पोलोका शौक था. महाराज पटियाला आपके परम मित्र थे. उनकी मृत्युकी खबर सुनकर आप बीमार पड़ गये, और कुछ दिनबाद शिमलेमें स० ई० १९०१ की साल परमधामको सिधारे. आपकी महारानी बड़ी पतिव्रता थी, निदान महाराजकी मृत्युकी खबर पातेही उसने भी देह त्यागदी. धौलपुर राज्यका विस्तार १२०० वर्गमील है. बस्ती प्रायः २५ लाख मनुष्योंकी है. राज्यमें १३९ सवार, १५८८ पैदल और ३१ तोपें हैं. तोपके १५ फैरोंकी सलामी महाराज को दीजाती है- महाराज निहालसिंहके सुशिक्षित पुत्र (वर्तमान नरेश) निज पिताके समानही सुयोग्य हैं.

नीलकंठ अध्वरी-(संस्कृत कवि). प्रसिद्ध पंडित आचार्य दीक्षितके पौत्र वि० सं० १७की वींशताब्दीके आरम्भमें द्राविड़ देशमें हुये. ये बड़े पंडित, कवीश्वर तथा टीकाकार थे. श्रीकंठ मतपर चलतेथे. अनेक यज्ञ करके इन्होंने "सर्वस्ववेदी" पदवी पाई थी. दक्षिण देशस्थ एक राजाके दर्बारसे इनका सम्बंध था. निम्नस्थ ग्रंथ इनके बनाये हुये हैं:- व्याकरण भाष्यप्रदीपव्याख्या, शिवतत्त्वरहस्य, शिवलीलार्णव महाकाव्य, नीलकण्ठविजयचम्पू.

नीलकण्ठ दैवज्ञ-(ज्योतिषकार). प्रसिद्ध ज्योतिषी अनन्तदैवज्ञ इनके पिता थे. ये गर्गगोत्री ब्राह्मण थे इन्होंने नीलकण्ठी नामक ज्योतिष ग्रंथ जिसमें वर्षफलका विचार है ३० वर्षकी उम्रमें बनाया. "महूर्तचिंतामणि के रचयिता पं० रामदैवज्ञ इनके भाई थे. नीलकण्ठजी बादशाह अकबरके दर्बारमें प्रधान पंडित थे. पं० गोविंददैवज्ञ जिन्होंने पीयूषधारा नाम मुहूर्त चिन्तामणि का तिलक रचा इनके पुत्र थे.

.. शाके सालिवाहने १४७९में जन्मे.

नीलाम्बर शर्म्मा-(ज्योतिषी) ये मैथिल ब्राह्मण शम्भूनाथजीके पुत्र पटनाके रहिनेवाले शाके १७४५में जन्मे. पं० लज्जाशंकर ज्योतिर्विदसे विद्या पढ़ी पं० जीवनाथशर्म्मा इनके ज्येष्ठ भ्राता थे. पं० नीलाम्बरजी अलवरनरेश महाराज शिवदानसिंहकी सभाके प्रधान पंडित थे. राज्य अलवरके पोलीटिकेल एजेन्ट कप्तान टामस कैडेल साहिबके कहिनेसे यूरोपदेशकी रीत्यनुसार इन्होंने "गोलप्रकाश" नामक ग्रंथ रचाथा. लीलावतीपर एक तिलक भी बनायाथा. शाके १८०५में मणिकर्णिका घाट काशीपर परमधामको सिधारे. अपना तमाम धन सीतारामके मंदिर बनवाने और उसकी प्रतिष्ठा करनेमें लगा दियाथा.

नूरजहाँ-(दिल्लीके मुगलसम्राट् जहांगीरकी पृथिवीमाखेद्ध सुंदरी बेगम) इस का बाप मिर्जा ग्यास ईरानके वजीरका बेटाथा. समयके हेर फेरसे गरीब होकर नौकरीकी तलाशमें हिंदोस्तान आया. रास्तेमें कंधारके समीप उसके येही लड़की पैदा हुई. मिर्जा ग्यासके पास उस वक्त खानेतकको न था और बीबी सहित पैदल सफर करताथा, निदान कलेजेपर पत्थर रख लडकीको सड़कपर छोड आगेको चलदिया. पीछे २ सौदागरोंका एक काफिला आताथा काफिलेके सर्दारने बच्चेको सडक पर पड़ा देख उठा लिया-आगे बढ़कर मिर्जा ग्यास बीबी सहित जाते मिले काफिलेके सर्दारने ग्यासकी बीबीको लड़की की दाया नियत करके सवारी बैठनेको दी और खाना मुकर्रर किया. मिर्जा ग्यास और उनकी बीबीने अपने बच्चेको पाकर और उसकी खुशनसीबी देखकर परमेश्वरको लाख २ धन्यवाद दिया. हिंदोस्तान पहुंच ग्यास बादशाह अकबरके यहां नोकर होगये. जब यह लड़की, जिसका नाम मेहरुन्निसा था बड़ीहुई तो अकबरके बेटे सलीमकी इसपर आंख पड़ी. अकबरने यह बात पहिचान मेहरुन्निसाका विवाह अलीकुलीखाँ एक ईरानीसे करके उसको बंगालका सूबेदार बना दिया अकबरके बाद शाहजादे सलीम (जहांगीर) को तख्तपर बैठ कर मेहरुन्निसाकी याद आई. निदान उसने अलीकुलीखाँके मारनेका इन्तज़ाम किया. पहिले तो अलीकुलीखाँ खूनी हाथीसे लड़ायागया, लेकिन उसने हाथीको मार भगाया. फिर निहत्थे होकर शेरसे लडनेका हुक्म मिला, परंतु उसने शेरकोभी पछाड़ "शेर अफ़गन" खिताब पाया. जब यह कोई तरकीब न चली तो जहांगीरने फौज भेज अली कुलीको मरवाडाला, और कुछ दिनबाद उसकी विधवाके पास शादीका पैग़ाम भेजा. जवाबमें मेहरुन्निसाने आँसू बिटोकर कहा कि "शेर अफगनसे खसमको गमाकर अब मैं क्या शादी करूंगी, बादशाह सलामतसे कहिदेना कि, मुझ रांड पर अधिक जुल्म करना लाजिम नहीं है." इस उत्तरपर जहांगीरने निरास होकर मेहरुन्निसाको अपनी मांके खवासामें रखवादिया और प्रश्चात् शोक शान्ति होनेपर उससे शादी करली, और नूरमहिल तथा कुछ दिन पीछे नूरजहांका खिताब दिया. जहांगीर नूरजहांका वशीभूत था, एक पलभी विना उसके कल नहीं पडती थी, सिक्केपरभी उसका नाम खुदता था, राजकाजमें उसका पूरा अधिकार था और सर्कारी कागजों परभी वोही हुक्म देती तथा दस्तखत करती थी. उसके बाप मिर्जा ग्यासको वज़ीरका ओहदा मिला था और उसका भाई आसफुद्दौलाके पदपर नियत कियागया था. स० ई० १६२७ में जहांगीरने लाहौरके समीप परलोक गमन किया. शाहजहांने तख्तपर बैठकर २५ लाख रुपये वार्षिक आयकी जागीर नूरजहां को दी. परंतु उसकी नजरमें संसार स्याह था. विधवा होनेके बाद रंगीन कंपड़ा कभी नहीं पहिना

और इसी तरह शोकमें दिन काटती हुई १२ वर्ष पीछे आप भी चलबसी और लाहौरमें अपने पतिके मकबरेके पास दफन हुई. बड़ी हाजिरजवाब थी और फारसीकविता भी अच्छी करती थी.

नूह-(Noha) मुसलमानों तथा ईसाइयोंकी धर्मपुस्तकोंके लेखानुसार इनके वक्तमें स० ई० से० १६५६ वर्ष पूर्व एक दफे २४ दिनतक वर्षा मूसलाधार हुई, सर्वत्र पृथ्वी जलमें डूबगई और तूफान आगया, केवल हजरत नूह एक नौकापर सवार होकर अपने ७ बेटों सहित बचे जिनकी सन्तति बादको पृथ्वीपर सब जगह फैलगई. मुल्क काबुल और यूनानकी प्राचीन पुस्तकोंसे भी इस तूफानके आनेका पता लगा है. भागवतमें भी लिखा है कि, राजा सत्यव्रतके समयमें एक तूफान आगा जिसमें सब पृथ्वी जलमें डूबगई थी. केवल राजा सत्यव्रत सप्तऋषियों सहित एक नौकापर बैठकर बचाथा. आधुनिक विद्वान् लोग ऊंचे २ पहाडोंकी चोटियोंपर मछली आदि समुद्री जन्तुओंकी हड्डियें पानेसे भी इस तूफानका आना सिद्ध करते हैं नूहके पुत्र सामकी औलादमें अरब और श्यामके लोग हैं और उसके द्वितीय पुत्र हामके वंशमें अफरीकाके हबशी हैं और उसके तीसरे पुत्र याफिसके वंशमें एशिया और यूरूपके रहिनेवाले हैं-पहिले पहिल नूहकी सन्तति फरात और दजला नदियोंके बीच मोसेपोटेमियामें रहितीथी, बहुत अधिक होजानेसे भिन्न २ देशोंमें जाबसी और राज्य स्थापन करनेमें समर्थ हुई।

नेपोलियनबोनापार्ट-(Napolean Bonaparte) मुल्क फ्रान्सका जगत विजयी, परम पराक्रमी और बडा बहादुर बादशाह हुआहै-इसने सब यूरूपको हिलादियाथा-यूरूपीय देशोंमें माता अपने बच्चोंको यह कहि कर रोनेसे चुपातीथीं कि "बोना आया"। इसका कथन था कि उद्योगके आगे कोई बात नामुमकिन नहींहै। ये कार्सीका द्वीपमें चार्लस बोनापार्टके घर स० ई० १७६९ में पैदा हुआ-१६ वर्षकी उम्रतक विद्या पढी और अस्त्र शस्त्रकी शिक्षा पाई-पश्चात फ्रांस दर्बारकी फौजमें भरती हुआ, और लेफिटनेन्ट करनैलके पदपर पहुंच कर टोलोनका किला फतेह किया-बादको बिगेडिअर जेनरलका ओहदा पाया और स० ई० १७९५ में फौजका कमान्डर बनादिया गया-एकही वर्ष-बाद फ्रांसदर्बारने इसको कमान्डर इनचीफ नियत करके इटेली भेजा-वहां पहुंच इसने ४ दफे आस्ट्रियाके बडे भारी दलका सामना थोडीसी फौजसे करके विजय प्राप्त की-इन लडाइयोंमें इटेली, लोम्बार्डी का मुल्क फतेह हुआ और बहुतसा धन दौलत इसके हाथ लगा- स० ई०१७९७ में फ्रांसको लौट आया और दूसरे साल मिश्रदेश विजयकरणार्थ ३० हजार फौज लेकर लड़ाई की और मुल्क शाम तथा मिश्रको विजय किया. इन्ही दिनों फ्रान्समें कुछ फिसाद

हुआ, निदान नेपोलियन फौजको छोड़ अकेला फ्रान्स आया और पञ्चायती राजको तोड़ सब राजकाज निज अधिकारमें करलिया. स०ई०१८०२ में फ्रान्सवालोंने उम्र भरके लिये इसको "कान्सल" नियत किया. स०ई० १८०५में इसने शाहन्शाही ताज शिरपर रक्खा और तख्तपर बैठा. थोड़ेही दिन पीछे जर्मनीपर चढ़ाई की और ३० हजार आस्ट्रिया वासियोंको कैद किया. स०ई० १८०५ में पुशिया विजय किया और महाराजा रूसको परास्त किया तथा पुर्तगाल पर अधिकार जमाया. स०ई०१८०७में स्पेन विजय किया। जिन २ मुल्कोंको फ़तेहकरता गया उनपर अपने भाई भतीजोंको बादशाह बनाता गया. स०ई०१८१२में रूसके शहिर मास्को को जलाकर बरबाद करदिया. अंतमें रूस, आस्ट्रिया, प्रुशिया और इंग्लैंडकी फौजोंने मिलकर इसपर चढ़ाई की। नेपोलियनको परास्तहो, तख्त छोड़, पेन्शन ले, एल्बाके टापूमें जाकर रहिना पड़ा परंतु इससे खाली न बैठागया निदान एकही वर्ष पीछे फ्रान्समें आया बहुत लोग इसके इर्द गिर्द इकट्ठे होगये और एक बड़ी सेना तयार होगई यह खबर पाकर स०ई०१८१८ में इंग्लंड, जरमनी और रूसकी फौजोंने मिलकर इसे चारोंतरफसे घेरा और वाटरलू की प्रसिद्ध लड़ाईमें वेलिजली साहिब अंग्रेजीसेनापतिने इसको परास्त करके ड्यूक आफ वेलिङ्गटनका खिताब पाया और इस को पकड़कर सेन्ट हेलिनाके टापूमें कैद किया, जहां पेटम फोड़ा निकलनेसे बीमार होकर स० ई०१८११ में मरगया. फ्रान्सको लाश लाईगई और बड़ी धूम धामसे दफन हुई.

नेलसन-(लार्ड होरेशियो नेलसन, Lord Horatio Nelson) बृटिश गवर्नमेन्टकी समुद्री फौजका सर्वोच्च सेनापति था इसके बाप पादरी थे. १३वर्षकी उम्रमें इसने जहाजपर नौकरी की और निजयोग्यताके कारण मल्लाहसे लेकर एडमिरलके पदतक पहुंचा. स्पेन तथा फ्रान्सके जहाजों के बेड़ेको इसने ट्राफलगारकी लड़ाईमें वीरतासहित नष्ट करके प्रसिद्धि पाई। इसी लड़ाई में नेलसनके गोली लगी थी, जिससे कुछ दिन बाद उसके प्राण नष्ट हुये। नेलसनकी वीरताके बदलेमें उसके भाई, बहिनोंको पार्लियामेंटने पेन्शन, इनाम और जायदाद दी. नेलसन बड़ा साहसी, वीर, और स्वदेशभक्त विचारशील पुरुष था.

स०ई० १७५९ में जन्म.

स०ई० १८०५ में मृत्यु.

नैपियर-(सर चार्लस नैपियर- Sir Charles Napier) अंग्रेजी सेनामें बचपनहीसे भरती होगयेथे और पहिले पहिल आयर्लैंडके उपद्रव शान्ति करनेमें इनसे काम लियागया था। स०ई० १८०६ में कमान बनाकर कोरन्नाकी लड़ाई

पर स्पेन भेजेगये. इस लड़ाईमें नेपियरके कई घाव लगे, स०ई० १८१ ३में इन को उत्तरीय अफरीकामें भेजागया, वहां इन्होंने बड़े २ बहादुरी और साहसके काम किये. स०ई० १८४१ में बृटिश सेनाके कमान्डर इनचीफ नियत होकर हिंदोस्तानको आये. स०ई०१८४३ में बड़ी वीरतासे मियानी की लड़ाईमें सिंधके अमीरोंको परास्त किया और सिंध विजय किया. स० ई० १८४७ में इंग्लैंडको वापिस गये जब ब्रिटिश गवर्नमेंट और सिक्खोंमें लड़ाई शुरू हुई तो नेपिअर साहिब हिंदोस्तान फिर भेजेगये-स० ई० १८५० में दूसरी दफे इंग्लैंडको वापिस गये-इनका मिजाज चिड़चिड़ाथा.

स० ई० १७८२ में लन्डनमें पैदा हुये.

स० ई० १८५३ में मरे.

नौशेरवाँ- (ईरानका न्यायकारी राजा) कैकुवादका पुत्र स० ई० ४८९ में जन्मा-इसका असली नाम कैखुसरो था, लेकिन प्रजागण इसमें बचपनहीसे बडप्पनके लक्षण पाकर नौशेरवाँ नामसे पुकारतेथे-कैकुवादने एक दिन नौशेरवाँ से कहा "बेटा मैं तुममें सब शुभ लक्षण पाताहूं, लेकिन एक अवगुण है कि, तुम दूसरोंको तुच्छ समझते हो, देखो जितने नुक्सान विस्वासरहित होनेसे होते हैं उतने विस्वास सहित होनेसे नहीं" स०ई० ५३१ में कैकुवादके बाद नौशेरवाँ ईरानका बादशाह हुआ. थोडेही दिन पीछे रूमपर चढाई की, बहुतसा मुल्क निज अधिकारमें किया और शहन्शाह रूमसे खिराज वसूल किया.इसके बाद जीहूं नदीके उत्तर तातारके कई जिले तथा हिंदोस्तानके पश्चिमोत्तरमें बहुतसा मुल्क और अरबके भी अनेक सूबे स्वराज्यमें मिलाये फिर नौशेरवांने अपनी राजधानीके बनाउ सुधारमें मन लगाया. चीन व हिंदोस्तानके राजे नौशेरवाँके प्रसन्न रखनेके लिये अपने २ देशके तोहफे भेजा करते थे. अंतमें स० ई० ५७९ की साल नौशेरवां शाह रूमसे एक लडाईमें हारकर भागा और बीमार होकर मरगया और हुरमुज़ उसका बेटा तख्तपर बैठा. नौशेरवां बड़ा न्यायकारी था- वह कहा करता था कि, तरुणावस्थामें मैंने एक दिन देखा कि, एक मनुष्यने कुत्तेके ढेला मार कर उस्की टांग तोडदी मनुष्य थोडीही दूर गया था कि उस्के एक घोडेने लात मारी घोडा थोडीही दूर गया था कि उसकी टांग एक सूराखमें फंसकर टूट गई उस दिनसे ईश्वरका भय कर मैं न्याय करनेपर कटिबद्ध हुआ. जरदश्तके मतपर चलता था और विद्याका रसिक था. इसका वज़ीर बुजुर्च मेहर बडा चतुर था.वेदपाय नामक ईरानी हकीमको इसीने हिंदुस्थान भेजकर "पंचतंत्र" नामक ग्रंथ मंगाया और उसका अनुवाद पहिलवी भाषामें कराया था, वेदपाय हिंदोस्तानसे शतरञ्जका खेल भी सीखगयाथा. नौशेरवाँका दूसरा नाम किसरा था.

न्युकोमन-(New Coman), डार्टमौथ (इंग्लैंड) में रहिते थे और ताला ब-नानेका पेशा करतेथे, पहिले पहिल इन्होंने प्रायः सं० ई०१६८५ में एक धुऐंसे चलनेवाली कल बनाई थी, जो अबतक इनके नामसे प्रसिद्ध है पश्चात इसी कल को जेम्सवाट साहिबने पूर्ण रीतिसे सुधारकर बनाया, जो आज कल्ह रेलकी गा-डियोंमें जोती जाती है (देखो जेम्सवाट.)

स० ई० १७१३ में मरे.

न्युटन-(सर ऐजक न्युटन Sir Issac Newton) लिङ्कन शायर (इंग्लैंड) में जन्मे. बाप इनको छोटासा छोड़ मरे थे- १२ वर्षकी उम्रमें माताने इनको ग्रेन्थमके महाविद्यालयमें पढनेको भर्ती कराया वहां रहिकर ये यंत्रकलामें अत्यंत निपुण हुये और फुर्सत पानेपर जलयंत्र तथा वायुयंत्र इत्यादि की रच-नामें नियुक्त रहितेथे- रफ्ते २ इन्होंने एक पवनचक्की तथा एक पवनघडी बनाई थी १८ वर्षकी उम्रमें न्युटन केम्बृजके विश्वविद्यालयमें विशेष विद्यापठनार्थ गये, वहां रहिकर इन्होंने दर्यापत किया कि, मोटे कांचके टुकडेके छिद्रमें से बाहर निकले हुये प्रकाशका कैसा रूप होता है और कि, प्रत्येक प्रकाशमान पदार्थ के किरणोंमें वैसेही ७ रङ्ग होतेहैं जैसे इंद्रधनुषमें। इन्होंने २२ वर्षकी उम्रमें बी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण की. स० ई० १६६५ में महामारीके फैलनेपर न्युटन केम्बृजसे अपनी जन्मभूमिको लौट आये और एक दिन बागमें बैठे हुये फलोंको दरख्तोंपरसे पृथ्वीपर गिरते हुये देख पृथ्वीकी मध्याकर्षणशक्तिका रहस्यभेद किया और यह सिद्धांत स्थिर किया कि, आकाशमें जितने ग्रह और पिंडहैं वे सब परस्परके आकर्ष णसे निराधार घूमते हैं. स०ई०१६६७में इन्होंने केम्बृज आकर एम०ए० की परीक्षा पास की, और २ वर्ष पीछे केम्बृज विश्वविद्यालयमें इनको गणितशास्त्रके प्रधान प्रोफेसरकी जगह मिलगई. न्युटनमें इतने विद्वान् होते हुये भी गर्वका लेशमात्र न था और इसीलिये सर्वप्रिय थे.

स० ई० १७२७ में ८५ वर्षकी उम्रमें २० दिन बीमार रहिकर मरे.

नृसिंहदैवज्ञ-(प्रसिद्धगणक). इनके पिताका नाम कृष्णदैवज्ञ और छोटे भाईका नाम शिवदैवज्ञ था. विष्णु, मल्लार, केशव और विश्वनाथ इनके चचाथेः दिवाकर, कमलाकर, गोपीनाथ और रङ्गराज इनके पुत्रथे. नृसिंह दैवज्ञने गोदावरीतट गोल नामक ग्रामसे आकर काशीजीमें वेदान्तशास्त्र पढा और पश्चात वहीं मकान बनालिया और सूर्यसिद्धांत आदि कई ग्रंथोंकी टीका बनाई. आज कल जितने ज्योतिष (फलित) ग्रंथ मिलतेहैं उनमेंसे अधिक इसी घरानेके लोगोंके बनाये हुये हैं. नृसिंहजीका जन्म शाके १५०८ में हुआ.

पतञ्जलि ऋषि-(आदिपतञ्जलि योगदर्शनकार) इनका होना सांख्यसूत्रकार कपिलसे पीछे और वेदव्याससे पहिले प्रतीत होताहै. योगशास्त्र इन्होंने बनाया.

पतञ्जलि (व्याकरणमहाभाष्यकार) अनेक कारणोंसे सिद्ध है कि, ये वि० सं०, से प्रायः २०० या ३०० वर्ष पहिले हुये. पटनाकी तरफके रहिनेवालेथे. इनके समयमें कागज नहीं था, पत्तोंपर लेख लिखेजातेथे।

पतञ्जलि चरक-चरक मुनिका पूरा नामहै (देखो चरक). इनका समय व्याकरणकार पाणिनिसे भी प्राचीनहै क्योंकि पाणिनिने अपने बनाये" कठचरचाल्लुक" सूत्रमें इनका नाम लिखाहै.'

पद्माकर भट्ट-(भाषाकवि) . बांदावासी मोहनभट्टके पुत्र वि० सं० १८३८ में विद्यमान थे. रघुनाथराव पेश्वा पूनावालेने इनको निम्नस्थ कवित्त के इनाममें एक लक्ष रुपया दिया था.

कवित्त-

सम्पति सुमेरुकी कुबेरकी जो पावै कहूं तुरत लुटावै विलम्ब उर धारैना।
कहै पद्माकर सुहेम हय हाथिनके हलके हजारनको वितर विचारैना॥
गंजगज बकस महीप रघुनाथराव याही गज धोके कहूं तोहि देइ डारैना।
याते गौरि गिरिजा गजाननको गोइ रही गिरिते गरेते निज गोदते उतारैना॥

कुछ कालतक पूनामें रहिकर पद्माकरजी जयपुर गये और सवाई जगत्सिंहके नाम जगद्विनोद नाम ग्रंथ बनाया तथा पहिले पहिल यह कवित्त भी भेंट किया था और बहुतसा रुपया, हाथी, घोड़े पालकी इत्यादि इनाम पाया था-

कवित्त-

भट्ट तिलङ्गानेको बुंदेलखण्डवासी कवि सुयश प्रकाशी पद्माकरसो नामा है।
जोरत कवित्त छंद छप्पय अनेक भांति संस्कृत प्राकृत पढ़ोजु गुणग्रामा है॥
हैरथ, पालकी, गयंद, गृह ग्रामचार आखिर लगायलेत लाखनकी सामा है।
मेरे जान मेरे तुम कान्हहो जगतसिंह तेरे जान तेरो वह विप्र मैं सुधामा है॥

अन्तमें पद्माकरजीने शेष काल गंगासेवनमें व्यतीत किया और भाषामें गंगालहरी नामक ग्रंथ रचा-

पद्मावती-(संहलद्वीपकी पद्मिनी). राजपूतोंकी पतिव्रता शूरवीर स्त्रियोंमें रानी पद्मिनी निज सुंदरता, कोमलता, सुबुद्धि, विद्या और गुणके लिये अत्यंत प्रसिद्ध है. अनेक कवियोंने इसका यश गाया है. ये हमीरसिंह चोहान संहलद्वीपनरेशकी राजकुमारी थी और चित्तौड़के राना भीमसिंहको

व्याही थी इसकी सुंदरताईके विषयमें इतनाही कहिना काफी है कि, "न भूतो न भविष्यति" चित्तौड़दर्बारसे राघव नामक पंडित निकाले जानेपर दिल्ली गया और वहांके बादशाह अलाउद्दीन खिलजीको पद्मिनीके स्वरूपकी प्रशंसा सुनाकर चित्तौड़पर चढाई करनेको उद्यत किया निदान अलाउद्दीनने चित्तौरपर चढाई की,पर जब अपनी अभिलाषा पूर्ण करनेका कोई उपाय न देखा तो रानासे विनयपूर्वक कहा कि, यदि आप रानी पद्मिनीके दर्शनमात्र मुझको करादें तो मैं दिल्लीको लौट जाऊँ-राजपूतोंमें उस समय पर्दा न होनेके कारण रानाने इसमें अपनी कुछ अप्रतिष्ठा नसमझ दूरसे रानी पद्मिनीका दर्शन करादिया और बादशाहकी मीठी २ बातें सुनते हुये किलेके बाहर बादशाहके लशकरतक चले गये. बादशाहने लश्करमें पहुँच रानाको कैद करलिया और निर्लज्ज हो कहिदिया कि, जबतक तुम रानी पद्मिनीको हमारे हवाले न करोगे तबतक नहीं छोडे जाओगे-रानी पद्मिनीने यह सुन कुटुम्बियोंसे सलाह की और बादशाहसे कहिला भेजा कि, आप खाइयोंके इस पार लशकर उठालाइये मैं सब सहेलियां सहित आपसे शादीकरने आती हूं, निदान ७०० डोलियाँ तैय्यार हुई. जिनमेंसे प्रत्येकके भीतर एक एक शस्त्रधारी रणधीर क्षत्री और बाहर २।२ राजाके मरने मारनेवाले सिपाही कहारोंके भेसमें लशकरको चलते हुये. लशकरमें पहुंच रानी पद्मिनीको आध घंटेका अवकाश रानासे अन्तिमबार मिलनेके लिये दियागया. अल्लाउद्दीनकी खुशीका कुछ ठिकाना न था क्योंकि समझताथा कि, आध घंटे बाद रानी पद्मिनीसे शादी हो जायगी. परंतु पलक मारतेमें कुछ और ही कौतुक दीख पड़ा. राना और रानी अत्यंत शीघ्रगामी घोड़ोंपर सवार हो चित्तौड़की तरफ उड़ चले और रणकर्कशक्षत्री कपटरूप त्याग बादशाहके लशकरपर तलवारें लेकर टूट पड़े. लशकरमें गड़बड़ फैलगई, कोई किधर जान लेकर भागा और कोई किधर-बहुतसे मारे गये, अल्लाउद्दीन अपनासा मुहँलेकर दिल्ली चले आये, परंतु स्त्रीसे कान कटानेकी बड़ी लाज थी. निदान दूसरी दफे स० ई० १३०३ की साल फिर चित्तौड़पर चढाई की जब राजपूतोंने देखा कि,म्लेच्छोंके टीढीदलके साम्हने कुछ पेश नहीं जाती, तो वे अन्तिम जुहार करनेको तैय्यार होगये, जिसके सुननेसे रूंगटे खड़े होजातेहैं. किलेके भीतर गुफामें प्रचंड अग्नि प्रज्वलित कीगई जिसमें सब क्षत्रानियें सुकुमार पद्मिनीसहित जलकर राख होगई. दूसरे दिन राना और उसके राजपूतोंने केसरिया वस्त्र पहिन किलेके फाटक खोल दिये और वीरता सहित लड़कर कटमरे पश्चात् राना हमीरसिंहदेवने चित्तौड़की गद्दीपर बैठकर ६४ वर्षके राज्यमें निजपूर्वजोंका राज्य फिर विजय किया.

परमानन्ददास-(भाषाकवि-अष्टछाप). ये जातिके कान्यकुब्ज ब्राह्मण श्रीवल्लभाचार्यके शिष्य थे,अष्टछापमें इनकी गिन्ती है.अष्टछापका विवरण विट्ठल

नाथके सम्बंधमें देखो.ये पहिले स्वयं स्वामीथे.लोगोंको चेला बनातेथे.और परमानन्ददेव कहिलातेथे.पीछे वल्लभाचार्यके शिष्य होकर परमानन्ददास नामसे प्रसिद्ध हुये. सूरदासकी तरह इन्होंने भी बहुत पद बनायेथे,जिनके संग्रहका नाम विठ्ठल नाथने परमानन्दसागर रक्खाथा। इनके एक पदको सुनकर श्रीवल्लभाचार्यजी ऐसे प्रेममग्न होगयेथे कि,कई दिनतक देहकी सुधि नहीं रहीथी.इनका घर कन्नौज मेंथा-महाप्रभु वल्लभाचार्य सूरदासआदि अपने शिष्योंसहित एकसमय इनके मकानपर कन्नौज गयेथे। "संस्कृतरत्नमाला" नामक ग्रंथ इन्हींका बनाया हुआहै-ये श्रीकृष्णचंद्रमें गोपियोंकी भांति प्रेम रखतेथे और इनके नेत्रोंसे जल बहिता रहताथा और रोमांच खड़े होते रहितेथे.
वि० सं० १५८७ में विद्यमानथे.

परशुराम-(प्रसिद्ध क्षत्रीकुलद्रोही) जमदग्निऋषिके पुत्र रेणुकाके उदरसे थे-एकसमय जमदग्निने रेणुकापर क्रुद्ध होकर क्रमशः अपने चारों पुत्रोंसे उसके मारडालनेको कहा, पर इन्होंने माताके वध करनेसे इनकार किया निदान जमदग्निने उनको शापदिया कि,म्लेच्छ होजाओ। जब कनिष्ठ पुत्र परशुरामजी मकानपर आये तो इन्होंने पिताकी आज्ञा पाय माताका शिर काटडाला-इसपर प्रसन्न होकर पिताने परशुरामजीसे कहा "माँगो" परशुरामने कहा कि,हमारी माताको जिलादीजिये. निदान जमदग्निने तपोबलसे उनकी माताको जिला दिया-एकदफे राजा सहस्रबाहु क्षत्रीने जमदग्नि ऋषिके आश्रमपर आकर कुछ अपमान कियाथा-परशुरामजीने सहस्रबाहुको परिवारसहित जानसे मारडाला और कईवार क्षत्रीविहीन पृथ्वीको किया और मुलक छीन २ कर ब्राह्मणोंको सौंपा परंतु ब्राह्मणोंको ब्रह्मविद्याके प्रचार तथा साधनसे इतनी फुर्सत कहां थी जो राजकाज संभालते-अन्तमें महाराज रामचंद्रसे विवादमें तेजहत हो परशुरामजी वनको तपस्या करने चलेगये-यह विवाद सियस्वयंवरके समय धनुष टूटनेपर हुआथा.

परशुराम-(भाषा कवि) बृजके रहिनेवाले ब्राह्मण प्रायः वि० सं० १६६० में जन्मे. इनके बनाये पद रागसागरोद्भव रागकल्पद्रुममें बहुत हैं, ये श्रीभट्ट और हरव्यासजीके मतपर चलते थे. बड़े भक्त थे इनकी कविता सरल और सुंदर है. निम्नस्थ दोहे इन्हींके हैं:-

दो०-माया सगी न मन सगा, सगा न यह संसार ।
परशुराम इस जीवका, सगा सो सिर्जनहार ॥

दो०-राजा योगी अगिन जल, इनकी टेढ़ी रीत ।
डरतारहिये परशुराम, थोड़ी पालैं प्रीत ॥

"वैराग्य निर्णय" नामक इनके रचे ग्रंथमें संसारकी अनित्यताका वर्णनहै तथा यह शिक्षाहै कि पुनर्जन्मके दुःखोंसे बचनेके लिये धर्म कर्म करना चाहिये।

पराशर—निरुक्तके अनुसार ये वसिष्ठ ऋषिके पुत्र थे और महाभारत तथा विष्णुपुराण के लेखानुसार वसिष्ठजी इनके दादा थे. ये वैद्यक, ज्योतिष तथा धर्मशास्त्रमें निपुण थे. व्यासजी पुराणोंके कर्ता इन्हींके वीर्यसे उत्पन्न हुये थे-पराशर मुनिके बनाये अनेक ग्रन्थ अबभी प्रचलितहैं।

परीक्षित्—(चंद्रवंशी राजा). अर्जुनके पौत्र तथा अभिमन्युके पुत्र थे. अभिमन्युतो महाभारतके युद्धमें मारे गये थे, निदान पांडवोंने हिमालयको जाते समय परीक्षित अपने पोतेको राज पाट सौंपा- इन्होंने भारतवर्षका एक छत्र राज्य किया. अंतमें सांपके डसनेसे मरे. शुकदेवजीने भागवतकी कथा प्रथम इन्हींको ७ दिनमें सुनाई थी-दिल्लीमें परीक्षितपुरा इन्हींका वसायाहुआहै।

पांडु—चंद्रवंशी राजा विचित्रवीर्य्यके निर्वंश मरजानेपर उनकी विधवा रानी अम्बालिकामें व्यासजीसे गर्भाधान कराया गया, जिससे पांडु उत्पन्न हुये. पांडु रोग होनेके कारण इनका रंग पीलाथा और इसीलिये इनका नाम पांडुपड़ा। येबड़ेहोकर हस्तिनापुरकी गद्दीपर बैठे. कुन्ती तथा माद्री इनकी२ रानियें थीं जिनसे युधिष्ठिर आदि ५ पुत्र हुये जो पांडवनामसे प्रसिद्ध हैं. कुछ कालतक राज्य करनेके पश्चात राजा पांडुके हाथसे १ ब्राह्मण ऋषि मरगया, निदान राजा पांडु राज्य अपने बड़े भाई धृतराष्ट्रको सौंप वनको तपस्या करने चलेगये. एक दिन पलक मारतेमें राजा पांडुने देह त्याग दी. मुनीश्वरोंने उनकी अन्तेष्टि क्रिया कराई. रानी माद्री सती होगई दूसरी रानी कुन्तीने युधिष्ठिर आदि पाँचों पुत्रोंका पालन पोषण किया.

पाणिनि ऋषि—(संस्कृत व्याकरण के कर्ता) ये पणन ऋषिके वंशमें देवल मुनिके पौत्रथे माताका नाम दाक्षीथा. पिङ्गलाचार्य इनके छोटे भाई थे और शालातुर(कंधार) के रहिनेवालेथे.इनकासमय संस्कृतविद्वानोंके मतानुसार कलियुगके प्रारम्भ से ७०० या ८०० वर्ष पीछे है क्योंकि इन्होंने जनमेजय नामके सिद्ध करने के लिये "एजः खश्" सूत्र बनायाहै. राजा जन्मेजय राजतरङ्गिणीके लेखानुसार कलियुगके प्रारम्भसे ६०० वर्ष पीछे हुये. अंगरेजी विद्वान् स० ई० से केवल ८०० वर्ष पहिले इनका होना निश्चय करतेहैं. निम्नस्थ ग्रंथ इनके बनाये हुयेहैं:-व्याकरण अष्टाध्यायी, धातुपाठ, गणपाठ। शिक्षा पाणिनिके छोटे भाई पिंगलकी बनाई हुई है, परन्तु व्याकरण से पहिले पढ़ाई जानेके कारण पाणिनिजीके नामसे प्रसिद्ध है.

पाणिनि द्वितीय (पाटलाविजय काव्यके कर्ता). स० ई० से प्रायः ४०८ वर्ष पहिले महाराज नन्द मगधनरेशके समयमें हुये. कहिते हैं कि, जब पटनामें महाराज नन्दका राज्य था तो वहां उपवर्ष नामक पंडित रहिते थे

जिनके व्याडि, वररुचि और पाणिनि ३ शिष्य थे. इन पाणिनिजीने पाटला-विजय नामक काव्य रचा है, जिसमें अत्यंत कठिन पदोंका प्रयोग किया गया है. पाणिनि द्वितीयका गोंडामें आकर भी कुछ समयतक रहिनेका पता लगता है.

पारखजी– (मथुरामें द्वारकाधीशके मंदिरके बनवानेवाले) इनका जन्मनाम गोकुलदास था, बोलने चालनेका नाम राधामोहनथा, ये गुजराती वैश्यथे और ग्वालियरकी महारानी बैजाबाईके यहां रहिकर रत्नोंकी परीक्षा किया करतेथे और इसीलिये पारखजी कहिलातेथे। ये बड़े दयालु तथा धार्मिक होकर वल्लभसम्प्रदायके वैष्णव थे, धर्मात्मा महारानी बैजाबाईकी भी इनपर इसीकारण कृपाथी। सेंधियाकी फौज जब उज्जैनकी लूटका माल ग्वालियरमें लाई तो महारानी बैजाबाईने उसको अपने कोषमें नहीं रखने दिया क्योंकि उसमें ब्राह्मणों तथा देव मन्दिरोंका भी धनहोनेकी सम्भावनाथी और आज्ञादीकि, पारख जी इसको व्रजमें लेजाकर पुण्यार्थ खर्च करदें। पारखजी करोड़ों रुपयेका माल लेकर मथुरा आये. साथमें उनके केवल एक बड़भागी खण्डेलवाल वैश्य आया जिसका नाम मनीराम था और जो धर्मका दिगम्बरी जैनथा। मथुरामें पारखजीने द्वारकाधीशका मंदिर बनवाया जो सं०ई०१८२५में तैयार हुआ, इसके खर्चके लिये २५ हजार रुपये वार्षिक आयकी जायदाद लगाई। सिवाय एक छोटे भाईके पारखके कोई रिश्तेदार नहीं था लेकिन पारखको भाईसे प्रीत न होकर अपने दरिद्री मित्र मनीराम तथा उनके ३पुत्र लक्ष्मीचंद, राधाकृष्ण तथा गोविन्दाससे अधिक प्रेमथा। अन्तको पारखजीने अपनी समस्त सम्पत्तिका उत्तराधिकारी मनीरामके ज्येष्ठपुत्र लक्ष्मीचंदको बनालिया। मनीराम जब अपनी जन्मभूमि जयपुरसे आये थे तो पानी पीनेको लोटातक पास नहीं था. अब इन्हींका पुत्र करोड़ों रुपयेकी सम्पत्तिका मालिक होगया. तकदीर इसको कहते हैं। अंतमें पारखजीको दस्तोंकी बीमारी हुई और सिधारे। छतुरी इनकी जमुनाबाग मथुरामें देखने लायक बनी हुई है। पारखजीका शरीर स्थूलथा, दस्तोंके कारण अन्तमें शक्ति इतनी घटगई थी कि, बिना किसीकी सहायताके करवटभी नहीं लेसकते थे। व्रजमें अबतक यह कहिन प्रसिद्ध है.

लालाबाबू मरगये घोड़ा दोष लगाय।
पारखके कीरा पड़े विधिसों कहा बिसाय॥

पार्श्वनाथ(जैनियोंके २३ वें तीर्थंकर) ये वेदमें विश्वास नहीं रखते थे- यज्ञकर्मको मिथ्या मानते थे- ईश्वरके विना कर्मका फल बतलाते थे- पूजा पाठका सर्वथा खण्डन करते थे- गुरुसेवा तथा तीर्थंकरादिके माननेका उपदेश

करते थे. जैनधर्मकी अत्यंत उन्नति इनके उपदेशोंसे हुई. जैनियोंके मंदिरोंमें इनकी नंगी मूर्ति पुजती है. स०ई०से प्रायः ६००वर्ष पूर्व हुये.

पिङ्गलाचार्य-(पिङ्गलशास्त्रके रचयिता) पिङ्गलशास्त्र जिसको छंद-शास्त्र भी कहिते हैं इन्हीका रचा हुआ है. व्याकरणशिक्षाभी जो इनके बड़े भाई पाणिनि ऋषिके नामसे प्रसिद्ध है इन्हीकी बनाई हुई है. इनका विशेष वृत्तान्त पाणिनि के सम्बंधमें देखो.

पिथागोरस–(Pythogoras). इन्हींने यूनान तथा इटेलीमें तत्त्वविज्ञान (साइन्स) और ब्रह्मज्ञान (फिलासोफी) की मूलरोपण की और यूरूपके अन्य मुल्कोंमें इन्हींकी देखा देखी इन विद्याओंका प्रचार हुआ. यूनानके सैमोस-द्वीपमें एक मुहर खोदनेवालेके घर स० ई० से ५८० वर्ष पूर्व इनका जन्म हुआ. पहिले इन्होंने मिश्रप्रदेशमें शिक्षा पाई. पश्चात एशियाके अनेक देश देशा-न्तरोंमें भ्रमण किया और हिंदोस्तानमें बहुत दिनोंतक रहिकर अनेक शास्त्र पढ़े। इस देशवासियोंने इनका नाम यवनाचार्य रक्खा था. भारतवासियोंके १८ ज्योतिषसिद्धांतोंमेंसे एक यवनाचार्यकृत है। ये गणितशास्त्रके पूर्णज्ञाता थे और रेखागणितके अनेक साध्य इन्होंने सिद्ध किये थे. हिंदोस्तानसे लौटकर पिथागोरस यूनान गये और थोड़ेही दिनोंबाद इटलीमें जा बसे और पाठशाला जारी की. ३०० से अधिक इनके शागिर्द हुये, जिनकी अंतमें १ बिरादरीही पृथक बनगई थी. पिथागोरसका रहिन सहिन और धर्मसंबंधी विचार हिंदुओंकेसे थे, मांस नहीं खाते थे और आवागमनको मानते थे. अपने अनेक पूर्वजन्मोंका हाल इन्हें याद था. योगाभ्यास भी खूब करते थे. और ज्योतिष तथा सङ्गीतशास्त्रके पूरे विद्वान थे इनके मतानुसार संसारचक्रका बिन्दु सूर्य है और पृथ्वी तथा अन्यग्रह पिंड उसके चारों तरफ घूमते हैं इनकी रची २८० पुस्तकें अवलुप्त होगई हैं. अन्तमें शत्रुओंने इनको अनेक चेलों सहित एक मकानमें बंद करके आगसे जलादिया. स० ई० से ५०० वर्ष पूर्व ८० वर्ष की उम्रमें जलकर मरे. फीसागोरस भी इन्हींको कहिते हैं.

पीटरदीग्रेट–(Peter the Great) यह बड़ा परिश्रमी, विचारशील, प्रजापालक और देशहितैषी मुल्क रूसका बादशाह हुआहै और इसी कारण पीटरदीग्रेट अर्थात् महान् पीटर इसको कहिते है. इसका बाप अलेग्जंडर स० ई० १६७६में इसको ५ वर्षका छोडकर मरगया अनेक झगडोंके बाद पीटर१०वर्षकी उम्रमें तख्तपर बैठा–उस समय रूसका राज्य इतना बड़ा न था और बिलकुल उजाड़था, प्रजागण असभ्यथे और राज्यके अनेक विभाग नियमबद्ध न थे–पीटरने तरुण हो सुधारकी ओर ध्यान दिया, निदान उसने प्रुशिया, हालैंड, इटली,

जर्मनी, इंग्लैंड, आस्ट्रिया, डेन्मार्क और फ्रांस इत्यादि देशों में रहिकर साधारण मनुष्यकी तरह अनेक शास्त्र तथा विविध भौतिकी शिल्पविद्या सीखी और राज्यके अनेक विभागोंका प्रबंध करना जाना। पीटर प्रदेशमें रहिकर दिनको तो पढ़ता तथा दस्तकारी सीखता और रातको स्वराज्यसे आई हुई डांक देखता और उचित हुक्म देता था। कई वर्षबाद ७०० कारीगरोंको साथ लेकर पीटर लौटा और अपने मुल्कमें सड़कें, नहिरें, शफाखानें, स्कूल, डांकघर, पुस्तकालय, यन्त्रालय, बाग, अजायबखाने और आकाशलोचन बनवाये और प्रजागणको शिक्षा दिलवाकर असभ्यसे सभ्य बनाया. पश्चात् सेण्टपीटर्सबर्ग नाम नगर बसाकर उसको अपनी राजधानी बनाया. प्राचीन राजधानी मास्कोथी. स्वीडेनके बादशाह चार्लस १२ वेंने.जो उस समय बड़ा प्रतापी और बलवान्था पीटरको युद्धमें हराया, इसपर पीटरने कहा कि, अनेक बार स्वीडेनवाले हमको हराकर अंतमें सिखलादेंगे कि वे कैसे हराये जासक्तेहैं। ९ वर्ष पीछे स० ई० १७०९ की साल पीटरने स्वीडेन वालोंको पलटोवाके मैदानमें परास्तकरके उनका बहुतसा मुलकछीन लिया पश्चात तुर्कोंसे अनेक दफे लड़कर विजय प्राप्त की। ये सबकामोंके करनेमें स्वयं लवलीन होजाताथा. खोजकरनेकी शक्ति इतनी बढी हुईथी कि, बतानेवाला थकजाताथा. रास्तेमें मुसाफिरोंसे बातें करता और नई बात सुनकर पाकेटबुकमें लिखलेताथा गाँववालोंसे खेतीवाडीका हालपूंछता था और उन्हें कामकी बातें बतलाता रहिता था. स० ई० १७२४ में समुद्रकी तरफ गया और वहां एक किश्ती डूबते देख पानीमें कूद पड़ा और बहुतसोंकी जान बचाई. इससे थोडेही दिन बाद ५३ वर्षकी उम्रमें मर गया. पीटरका पुत्र उसके साम्हनेही मरचुका था निदान उसकी मलिका कैथेरायन गद्दीपर बैठी लेकिन कुछ न निकली स० ई० १६७२ में उत्पत्ति.

स० ई० १७२५ में मृत्यु.

पुरु—(चंद्रवंशका छठा राजा) यह राजा ययातिके पुत्र सरमिष्ठाके उदरसे हुये. बड़े प्रभावशाली राजा थे इसी कारण इनकी संतति पौरव नामसे प्रसिद्ध हुई. यदुवंशियोंके पूर्वज राजा यदु इनके भाई थे. यदुके वंशमें महाराज श्रीकृष्ण हुये.

पुलस्त्यऋषि—१०प्रजापतियों तथा सप्तर्षियोंमें इनकी गणना है, ये ब्रह्माजीके मानसीपुत्र थे. रावण, कुम्भकर्ण इत्यादि इनके पौत्र थे.

पुलह—१० प्रजापतियों तथा सप्तऋषियोंमें इनकी गणना है, ये भी ब्रह्माजीके मानसीपुत्र थे.

पेरीक्लीज (Pereeles) यह ऐथेन्स (यूनान) का रहिनेवाला सुप्रसिद्ध सेनापति तथा प्रबंधकर्ता था. हकीम अनैक्सा गोरस इसका उस्ताद था-

यूनानी लोग पेरीक्लीजको बहुत पसंद करते थे, निदान उन्होंने राजा साइमनको इसके कहिनेपर निकाल बाहिर कियाथा, जिससे यह स्वेच्छाचारी होगया. पश्चात् इसने सिसलीवालोंको "पेलोपोनीसस" की लड़ाईमें परास्त किया और फिर वैज़ेण्टियम तथा सैमोस द्वीपको जीत लिया. यह शिल्पकारों तथा विद्वानोंका गुणग्राही था. ऐथेन्सके किलेमें इसने तीन बड़े सुंदर मकान बनवाये थे जिनमेंसे एक माइनर्वा देवीका मंदिर था. बादको ऐथेन्समें महामारी (ताऊन) फैली, जिससे प्रायः ऐथेन्स बरबादही होगया और इसीमें पेरीक्लीजकी जान गई.

स० ई० से ४९५ वर्ष पूर्व जन्मा.

स० ई० से ४२९ वर्ष पूर्व मरा.

पोप—(अलग्जेंडर पोप–Alexander Pope). इनके बाप लन्डनके रहिनेवाले बजाज थे और रोमन कैथोलिक मतपर चलते थे. बचपनमें इन्होंने अंग्रेजी, लैटिन व ग्रीक भाषायें पढी थीं. जब इनकी उम्र १२ वर्षकी थी तो इनके बापने विंडसरके जंगलोंमें एक बड़ी जायदाद खरीदी थी और ये अपने बापके साथ वहीं चले गये थे. १६ वर्षकी उम्रमें इनकी रची ४ पुस्तकें अंग्रेज़ीपद्यमें छपीं. पश्चात कवि होमरकृत इलियड तथा उडेसीका अनुवाद इन्होंने अंग्रेजीपद्यमें किया.

स० ई० १६८८ में पैदा हुये.

स० ई० १७४४ में मरे.

पोरस—(पंजाबका राजा). इसका असलीनाम पुरु था, लेकिन सिकंदरके साथी यूनानियोंने इसको पोरस नामसे अपने ग्रंथोंमें लिखा है. स० ई० से३२७ वर्ष पूर्व इसको सिकंदर आजमने परास्त किया. परास्त होकर ये सिकंदरके पास चलागया और अपनी तलवार साम्हने करदी. सिकंदरने पूँछा तुम्हारे साथ कैसा वर्ताव किया जाय. इसने जवाब दिया "जैसा बादशाहोंके साथ बादशाहोंको करना लाजिमहै"। इस उत्तरपर प्रसन्न होकर सिकंदरने पोरसका राज्य लौटा दिया. स० ई०से ३१७ वर्ष पहिले युडामसने धोकेसे पोरसको मारडाला.

पौलिश—(पौलिश नाम ज्योतिषसिद्धांतके रचयिता) अलबरूनीके लेखानुसार ये यूनानके रहिनेवालेथे और हिंदोस्तानमें आकर बहुत दिनोंतक रहेथे. संस्कृत अच्छी तरह पढेथे. भारतवासियोंके १८ ज्योतिषसिद्धांतोंमेंसे एक पौलिशकृतहै.

प्रोफेसरवेबर(weper) के मतानुसार इनका पूरानाम पौलस अलेग्जेंड्रीनस (Paulus Alexandrinus) था. डाक्टर कर्न (Dr. Kern) की सम्मतिहै कि प्रायः स० ई० ३५० में पौलिशसिद्धांतका वर्तमान दशामें सङ्कलन किया गयाथा.

पृथु महाराजा--वाल्मीकि रामायणके लेखानुसार ये महायशस्वी, लोकोपकारी नरेश सूर्य्यवंशकी ८वीं पीढीमें हुये। दुनियाका इतिहास इस बातका साक्षीहै कि,प्रथम इन्हींके समयमें अनेक विद्याओंका प्रचार भूमण्डलपर हुआ, भूमण्डलका नाम पृथ्वी इन्हींके नामसे प्रसिद्ध हुआ। भागवतादि पुराणोंमें वर्णित "धरणीदोहन" की अलंकाररूपक कथानक इन्हींके विषयमें है। पं० गंगाप्रसाद अग्निहोत्रीने उक्त कथानकका उल्लेख अलंकाररहित भाषापद्यमें किया है जो बुद्धिसम्मत होनेके कारण यहां लिखा जाता है-

धरणीदोहन।

धरणी दोहन किया पृथुने जैसा जिस विधिके अनुसार।
उसका किंचित वृत्त सुनाते सुनिये पाठक बुद्धिअगार।
पृथुराजाके जिस मतलबको व्यास मुनीने है गाया।
उसी अर्थका अनुधावन कर कहिते हैं कुछ मनभाया।
सबऋषियोंसे बृहस्पतिमें बुद्धि थी अति विपुल अपार।
नियत किया पृथुने इसकारण करनेको उन्हें वेद विचार।
सब देवोंसे बली देखकर पृथुने कही इंद्रसे बात।
धनसंचय बलवीर्य वृद्धिकी युक्ति सोच लिखो मम तात।
गंधर्वोंमें श्रेष्ठ जानकर विश्वावसुसे कहा बनाय।
तत्शास्त्रके अच्छे अच्छे ग्रंथ भरे परिपूरण भाव।
अनुसृष्टिके तत्त्वविशारद नाम अर्य्यमा थे गुणशील।
श्राद्धविषयको प्रणीत करिये कहा पृथुने तजके ढील।
रणीगर्भशास्त्रके ज्ञाता कपिल मुनीको जान कहा।
अणिमादिकका वर्णन लिखिये जिससे संशय फिर न रहा।
यक्ष भूत राक्षस वृन्दोंमें रुद्रहि था सबसे धीवान।
आविष्कार किया उसहीने मादक द्रव्योंका बलवान।
अहि दंदूषक नाग आदिके विषको तक्षकने जाना।
कहा पृथुने उससे लिखिये विषका वर्णन मन माना।
वनस्पतिके तत्त्वोंको तब नन्दीश्वरने कुल जाना।
गरुड़ाचार्य मुनीने सबही नभचर भेदोंको छाना।
इसी तरहसे जिसकी जिसमें देखी पृथुने रुचि प्यारी।
उसी विषयमें उत्तेजित कर लिया काम उससे भारी।
सब विषयोंकी हुई उन्नति भारतमें सहसा भारी।
जिसे देखकर चकित हुये उन वक्तोंके नर नारी।
उन वक्तोंके सब लोगोंने कही बात येही निर्धार।
धरणीको दुहिलिया पृथूने छोडा नहिं कुछ उसका सार।

पृथ्वीराजचौहान-(अन्तिम हिंदूपति दिल्ली व अजमेर) इनको राय-पिथोरा भी कहिते हैं-अजमेरके राजा सोमेश्वरराजके घर वि० सं ११०५ में जन्मे सोमेश्वरराजका विवाह दिल्लीके राजा अनङ्गपालकी कन्यासे हुआ था. अनङ्ग-पालके कोई पुत्र न था,एवं उसने अपने दौहित्र पृथ्वीराजको वि० सं० १२१२ में गादीदिया और उसी साल मृत्युको प्राप्त होकर राज पाट उसको सौंपदिया। पिताके मरनेपर अजमेरका राज्य भी पृथ्वीराजको मिल गया यह बात कन्नौजके राजा जय-चंदको बुरी लगी क्योंकि वह अपनेको दिल्लीके तख्तका हक्कदार समझता था-यही कारण जयचंद और पृथ्वीराजके बीच ईर्षाद्वेष बढनेका हुआ, निदान वि० सं०१२४२में जयचंदने राजसूय यज्ञ किया जिसमें सब राजे दूरदूरसे आकर शरीक हुये लेकिन पृथ्वीराज तथा सोमर्सी राना चितौड़ नहीं आये क्योंकि इनको जयचंदके यहां दासकृत्य करना स्वीकार न था। इस बातपर चिढकर जयचंदने दोनोंकी स्वर्ण मूर्तिय बनवाकर एकको जूती उतारनेकी जगहपर और दूस-रेको जूँठे बर्तन माँजनेकी जगह खड़ाकरवा दियाथा-यज्ञके अंतहीमें जयचंदने अपनी राजकुमारी संयोगताके स्वयम्बर रचनेका ठाहिराव कियाथा-संयोगता और पृथ्वीराजमें आन्तरिक प्रेमथा, निदान चुनेहुये सिपाहियोंको ले पृथ्वीराज कन्नौजमें आकर पहिलेहीसे छिपरहाथा-स्वयम्बरके समय संयोगता जैमाल लेकर निकली और सब राजोंको देख भाल उसने पृथ्वीराजकी स्वर्णप्रतिमाके गलेमें माला डालदी पृथ्वीराजभी अवसर पाकर वहां पहुंचगया और अपनी प्राणवल्लभाको घोड़ेपर लाद दिल्लीकी तरफ चल पड़ा-जयचंदने पीछे सेना दौड़ाई-७ दिनतक कन्नौज और दिल्लीके बीच घोर युद्ध हुआ दोनों तरफकी बहुलसी सेना और बड़े २ वीर योद्धा काम आये परंतु पृथ्वीराज अपनी दुलहिन सहित कुशलसे दिल्ली पहुंचगया. यह अप्रतिष्ठा जयचंद न सहिसका, पर अकेला कुछ कर भी नहीं सकता था निदान उसने अफगानिस्ताननरेश शहाबुद्दीन मुहम्मद गौरीको मदद देनेका वायदा करके दिल्लीपर चढ़ाई करनेको बुलाया. सूचना पातेही वि० सं० १२४७ में शहाबु-द्दीनने दिल्लीपर आक्रमण किया पर बेतरह हारा. इसी तरह कई दफे हारकर वि० सं० १२४९ में बड़े ठाठके साथ शहाबुद्दीनने दिल्लीपर फिर चढ़ाई की और राय-पिथौरा थानेसरके मैदानमें परास्त होकर ४४ वर्षकी उम्रमें मारा गया इस तरह परस्परके निरन्तर विरोधके कारण दिल्लीके हिंदूराज्यका नाश होकर मुसलमान राज्यकी मूलरोपण हुई. महाराज पृथ्वीराजने महोबेके राजा परमारदिदेव (परमाल) का भी सर्वनाश करदिया था और इस झगड़ेमें पृथ्वीराजके भी कई पुत्र मारे गयेथे, यदुवंशियोंका मुल्क जीतकर पृथ्वीराजने अपने राज्यको बढाया

था तथा गुजरात पंजाब इत्यादिके राजोंको परास्त करके उनसे अपना आधिपत्य स्वीकार कराया था. पृथ्वीराजके वंशजोंने इधर उधर जाकर छोटे २ राज्य स्थापन करलियेथे जिनकी संतति अबतक सिरोही, रजौर इत्यादिमें राज्य करती है। महाराज पृथ्वीराजका मंत्री चंदवर्दाई बडा वीर वफादार था, उसने "पृथ्वीराज रासौ" बृहत ग्रंथ रचकर अपनी स्वामिभक्तिका पूर्ण परिचय दिया है. पृथ्वीराज महान् शूरवीर, बली तथा पराक्रमी राजा थे, शब्दभेदी तीर मारते थे और हाथ उनके इतने लम्बे थे कि पृथ्वीसे छूतेथे.

पृथुयशा-(ज्योतिर्षी) षट्पञ्चाशिका ज्योतिष ग्रंथ इन्हींका बनाया हुआ है ये वराहमिहिरके पुत्रथे (देखो वराहमिहिर).

प्रजापति-ब्रह्माजीके १० मानसीपुत्रोंको प्रजापति कहिते हैं। देव, असुर, मनुष्य इत्यादि सब उन्हींसे उत्पन्न हुये। प्रजापतियोंके नाम मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, वसिष्ठ, दक्ष, भृगु, और नारद हैं।

प्रतापसिंह राना-(चित्तौडनरेश) इनके पिता उदयसिंहके वक्तमें मेवाडराज्यका अधिकांश मुगलोंने छीन लियाथा यहांतक कि चित्तौड भी छूट गया था-वि० सं० १६२८ में राना उदयसिंहके मरनेपर प्रतापसिंहजी गद्दीपर बैठे लेकिन इनको अपने पूर्वजोंके मुल्क छिन जानेका बडा अफसोस था और अकबर बादशाहकी सेवा करना भी मंजूर नथा निदान इन्होंने मुगलोंसे लड़ाई जारी रक्खी-बादशाहने बहुत चाहा कि, अन्यराजोंकी तरह या नाममात्रको कुछ थोड़ाहीसा राना भी हुक्म उठावें, भेट भेजें और खिलत तथा मनसब लेवें परंतु रानाने यह बात बिलकुल नहीं मंजूरकी-लाचार होकर वि० सं० १६३३ में अकबरने राजा मानसिंहको रानाके दमन करनेको भेजा, हल्दीघाटपर रानाने मुकाबिला किया पर हारा और मंडलगढ तथा उदयपुर भी छूटगये और रानाको कुंभलमेरुमें जाकर रहिना पड़ा-२ वर्ष पीछे कुंभलमेरु भी छूटगया और तमाम मुल्कमें बादशाही थाने बैठगये-६ वर्षतक राना बडी विपत्तिमें रहा, मेवाड़के पहाडोंमें भी उसे रहिनेको जगह न मिली निदान आबूके पास एक पहाडीमें छिपाहुआ सेना एकत्र करतारहा-फिर मौका पाकर रानाने चित्तौड, मंडलगढ, उदयपुर इत्यादि अपना सब मुल्क जीतलिया और बादशाही थानेदारोंको मारकर भगादिया। इसके पीछे १० वर्षतक न्यायपूर्वक राज्य करके वि० सं० १६५३ में रानाका देवलोक हुआ-अंतसमय रानाका दम नहीं निकलता था तब सल्लूमरके रावतने पूछा कि, आपके प्राण काहेमें अटके हैं ? कहा कि मैंने निज पूर्वजोंके राज्यको छीननेमें बड़ा कष्ट भोगाहै सो मुझे फिक्रहै कि मुसलमान फिर न छीन लें, कुँवर अमरसिंहका तो मुझे विश्वास नहीं कि स्वतंत्रताके लिये इतना कष्ट उठावे-यह बात सुन सब सर्दारोंने उठ,

कर कहा कि तनमें प्राणरहिते ऐसा कदापि नहीं होने देंगे. यह सुनतेही रानाके प्राण मुक्त होगये. निम्नस्थ सोरठा मेवाडमें अबलों प्रसिद्ध है,

सोरठा–हिंदूपति परतापु, पति राखी हिंदुआनकी।
सहै विपत संतापु, सत्यशपथकर आपनी॥

प्रतापसिंह–(महाराजाप्रतापसिंह, इन्द्र महेंद्र बहादुर, जी. सी. यस. आई. कश्मीर व जम्बूनरेश) महाराज रणवीरसिंह, जी. सी. यस. आई. के घर स. ई १८५० में जन्मे. पिताके परमधामको सिधारनेपर स. ई. १८८५ में कश्मीरकी गद्दीपर बैठे, उस समय राजकाजकी दशा अच्छी न थी निदान आपने ५ वर्षके लिये४सर्दारोंकी कौन्सिल सहित जो ब्रिटिश गवर्नमेन्टकी तरफसे स्थापन की गई थी, राज्य करना स्वीकार किया–इस कौंसलने अनेक सुप्रबन्ध किये–फिर तबसे महाराजा साहिब बिना किसी मददके प्रशंसनीय राजप्रबन्ध कर-रहे हैं–अपने पूर्वजोंके सनातन धर्मपर आरूढ हैं–पंडित विद्वानोंका सत्कार करते हैं और प्रजापालकहैं। रियासतका विस्तार ७९७८४ वर्ग मील है और सालाना आमदनी प्रायः ९० हजार पौंडकी है–८००० फौज और१८८ तोपें हैं. महाराजकी सलामी तोपके २१ फैरोंकी है। पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंहके घरानेसे पंजाब फतेह होनेके बाद स.ई.१८४६में बृटिशगवर्नमेंटने आपके दादेसर्दार गुलाबसिंहको जो खालसा फौजके मुख्य अफसर थे,कश्मीर व जम्बूका राज्य सौंपा था। महाराज गुलाबसिंहजीके पूर्वजभी कश्मीरके राजा थे परन्तु कुछ कालसे राज्य छिन गयाथा–कश्मीरकी तारीफमें किसी फार्सी कवीश्वरने कहा है कि, पृथ्वीपर साक्षात वैकुंठ है–कश्मीरके शाल दुसाले और मेवे प्रसिद्ध हैं और वहांके मनुष्य खासकर कश्मीरी पंडितोंकी स्त्रियाँ अत्यन्त सुन्दरी हैं.

प्रतापसिंह–(महाराजा सर कर्नल प्रतापसिंह,जी. सी. यस. आई. ईडर-नरेश)ये जोधपुरनरेश महाराजा जस्वंतसिंह, जी.सी.यश.आई. के छोटे भाई हैं। महाराज तख्तसिंहके मरनेपर स० ई० १८७३ में महाराज जस्वंतसिंहजी जोधपुरकी गद्दीपर बैठे और महाराज प्रतापसिंहजी मंत्रीके पदपर नियुक्त हुये। आपके कामसे ब्रिटिश गवर्नमेन्ट तथा महाराज जस्वंतसिंहजी खूब प्रसन्न रहे. ब्रिटिश गवर्नमेंटने आपको मंत्रीके पदपर रहितेही राजोंकी समान जी० सी० यस० आई० की पदवी प्रदान की थी और महाराजा जस्वंतसिंहजीने अपने बराबर महाराजा का खिताब आपको दिया था. ब्रिटिशसेनाके आप अवैतनिक कर्नल हैं. तीराकी चढाईपर, चितरालकी लड़ाईपर तथा चीनके युद्धपर आपने ब्रिटिश गवर्नमेंटकी मददके लिये जोधपुरकी सेना लेजाकर अपनी वीरता और साहसका पूर्ण परिचय दिया था. श्रीमान् केशरीसिंहकी मृत्युसे ईडरकी गद्दी खाली होनेपर

ब्रिटिश गवर्नमेंटने महाराज । प्रतापसिंहको ईडरका राज्य स० ई० १९०२ में दे दिया. आप सुशिक्षित सहज वीरपुरुषहैं और उदारता, न्यायपरता इत्यादि सर्वगुण सम्पन्न हैं. आप सूर्यवंशी राठौर राजपूत हैं, सम्राट् एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेकमें आप इंग्लैंड बुलाये गयेथे-

प्रवरसेन प्रथम-(कश्मीरनरेश) इन्होंने सेतुबंध नामक प्राकृत महाकाव्य है, जिसका नाम बाणभट्टकृत श्रीहर्षचरितके निम्नस्थ श्लोकमें आयाहै-

श्लो०-कीर्तिः प्रवरसेनस्य प्रयाता कुमुदोज्ज्वला ।
सागरस्य परं पारं कपिसेनेव सेतुना ॥

सेतुबंधकी प्रदीप नाम्नी व्याख्यासे मालूम होताहै कि, प्रवरसेन भूपतिके निमित्त छत्रधारी राजा विक्रमादित्य हर्ष उज्जैनवालेकी आज्ञासे कवि कालिदासने सेतुबंध काव्य रचा था. हिरण्य तथा तोरमाण इनके २ पुत्र थे. हिरण्य इनके बाद कश्मीरकी गद्दीपर बैठा और ३० वर्ष राज्य करके सिधारा-पश्चात प्रवरसेन द्वितीय गद्दीपर बैठा और छत्रधारी राजा हुआ (सोदेखो)

प्रवरसेन द्वितीय-(कश्मीरनरेश). प्रवरसेन प्रथमका पोता तथा हिरण्यके भाई तोरमाणका पुत्र था. इसकी माता अञ्जना इक्ष्वाकुवंशी राजा वज्रेंद्रकी बेटी थी. जब हिरण्य गद्दीपर बैठा तो तोरमाण उसका मंत्री बना. तोरमाणने अपने नामके सिक्के ढलवाये, इसलिये हिरण्यने उसको कैद करदिया. इसके कुछही महीने बाद तोरमाणकी स्त्री अञ्जनाने हिरण्यके भयसे एक कुम्हारके घरमें छिपकर प्रवरसेन नामक पुत्र जना-जब यह कई वर्षका हुआ तो इसकी विलक्षण बुद्धि और अपने बहिनोईकी छबिसे मिलती सूरत देख राजा जयेंद्रको संदेह हुआ कि यह मेरा भांजा है. जब पता लगाकर जयेंद्र उस कुम्हारीके घर गया जहां प्रवरसेन रहिता था तो अपनी बहिनको पाया-भाई बहिन मिलकर बहुत-रोये. इसी अर्सेमें हिरण्यने तोरमाणको कैदसे छोड़ दिया, पर वह कैदसे निकलतेही मर गया- इस अवसर पर प्रवरसेनने माताको सती होनेसे रोका और आप तीर्थाटनको चलदिया. कुछही दिनबाद हिरण्यने भी अपुत्र मरकर कश्मीरका सिंहासन खाली करदिया. उस समय चक्रवर्ती राजा विक्रमादित्य हर्षका उज्जैनमें राज्यथा निदान उसने अपने दर्बारमें आये हुये एक गरीब पंडित मातृगुप्तको कश्मीरका राज्य देदिया जब मातृगुप्त प्रायः ४ वर्ष राज्य करचुकाथा तो प्रवरसेन तीर्थोंसे लौटा और त्रिगर्त (कोटकांगडा) इत्यादि देश जीतकर महाराज विक्रमसे लड़नेको आगे बढ़ा. रास्तेहीमें उसने चक्रवर्ती राजाविक्रमके मरनेके समाचार सुने और दूसरेही दिन मातृगुप्तके राज त्याग संन्यासी होजानेका हाल मालूम किया-इसके बाद

प्रवरसेन कश्मीरकी गद्दीपर बैठा, सब राजोंको जीत चक्रवर्ती राजा हुआ और महाराज विक्रमके पुत्र सिलादित्य प्रतापशीलको जिसको शत्रुओंने राज रहित करदियाथा उज्जैनकी गद्दीपर बिठाया और निज पूर्वजोंका ३२ पुतलियोंका सिंहासन जिसको विक्रम (सम्भवतः विक्रमादित्यसत्कारी) कश्मीरसे उज्जैनमें ले आयाथा फिर कश्मीरमें पहुंचादा। प्रवरसेनने झेलम नदीके तीर छोटे बड़े सब मिलाकर ३६ लाख ग्रहोंका एक विचित्र नगर बसाया था, जिसके बीचमें बड़े ऊँचे २ मकान तथा एक पहाडी और प्रवरेश्वर महादेवका मंदिरथा और नगरके दर्वाजोंपर श्रीआदि देवियोंके मंदिरथे। ६० वर्ष राज्य करनेके पश्चात जब एक दिन राजा प्रवरसेन प्रवरेश्वर महादेवपर जल चढा रहाथा तो कलशमेंसे ताम्रपत्रपर लिखा हुआ यह श्लोक गिरा.

श्लोक-कृतकृत्यं महद्दत्तं भोगा भुक्ता वयो गतम्।
किमन्यत्करणीयं ते एहि गच्छ शिवालयम्॥

श्लोकका अर्थ समझ राजा राज त्याग कलासको चलदिया। इसकी रानीका नाम रत्नप्रभाथा। इसका पुत्र युधिष्ठिर इसके बाद कश्मीरकी गद्दीपर बैठा। राजा प्रवरसेन द्वितीय रागद्वेषरहित था.

प्रवीणराय पातर-(भाषाकवि)उड़छानरेश इंद्रजीतसिंहके यहांय पातर रहिती थी-कविता करनेमें परम चतुरथी-बादशाह अकबरने इसकी तारीफ सुन दर्बारमें हाजिर होनेका हुक्म दिया-जब हाज़िर न हुई तो इंद्रजीतपर १ करोड रुपया जुर्माना किया। कवि केशवदासजीने जो इंद्रजीतके दर्बारमें रहितेथे आगरे जाकर अकबरके मंत्री राजाबीरबलको एक सवैया सुनाया और सिफारिश कराके जुर्माना माफ करादिया (देखो केशवदास), परंतु प्रवीणके हाज़िर होनेका हुक्म जारी रहा निदान प्रवीणने इंद्रजीतके साम्हने आकर निम्नस्थ कवित्त पढ़ाः-

कवित्त-आई हों बूझन मंत्र तुम्हें प्रभु शास्त्रनमें सब विधि मति गोई।
प्राण तजौं कि भजौं सुलतानें मैं न लजौं लजि है सब कोई॥
बचोरहै परमारथ स्वारथ चित्त विचार कहौ प्रभु सोई।
जामें रहै प्रभुकी प्रभुता और मोर पतिव्रत भंग न होई॥

इस कवित्तको सुनकर भी जानेहीकी आज्ञा देनी पड़ी. जब प्रवीण अकबरके साम्हने लाई गई तो अकबरने उससे कहा- "ऊँचे है सुर वश किये, सम है नर वश कीन." प्रवीणने उत्तरमें कहा "अब पताल बलिवश करन, उलट पयानो कीन।" इस प्रकारके अनेक प्रश्नोत्तर होनेके बाद प्रवीणके चित्तमें स्त्री होनेके कारण संदेह हुआ, निदान उसने अकबरसे कहा-

दो०-विनती राय प्रवीणकी, सुनियो शाह सुजान।
जूंठी पातर भखत हैं, बारी वैस और स्वान॥

यह सुन अकबरने प्रवीणको बिदा करदिया-कवि केशवदासजीने प्रवीणके नामसे "कविप्रिया" ग्रंथ बहुत उत्तम रचा है और उसके शुरूमें प्रवीणकी बड़ी तारीफ़ की है. उड़छा (बुन्देलखण्ड) में वि० सं० १६४० में जन्मी.

प्रभाकर-(मीमांसादर्शनके आचार्य). कुमारिलभट्टके प्रधान शिष्यथे. इनका समय वि० सं० ६४१ से ७०७ तक निश्चय है. जब कुमारिलभट्ट सेतुबन्ध रामेश्वरके दर्शनोंको गये थे तो दक्षिण देशमें किसी ग्रामके समीप मार्गमें सायंकालके वक्त बालकोंको खेलते देख पूंछने लगे कि "गांव यहांसे कितने कोस है"? यह सुन उनमेंसे एक लड़का हँसकर बोला कि, आप यह नहीं जानते कि सायंकालके वक्त लड़के गाँवसे कितने कोस दूर खेलनेको चले जाते हैं. कुमारिलजी लड़केका ऐसा वचन सुन विस्मित हुये और उसके मकानपर जा ठहिरे. कुछ देरबाद कुमारिलजीने भोजन बनानेके लिये उसी लड़केसे अग्नि मँगवाई-लड़केने चारों तरफ देख जब अग्नि रखनेको कुछ न पाया तो हाथ पर रेता बिछा उसपर अग्नि रखलाया-ऐसी विलक्षण बुद्धि देख कुमारिलजीने उस लड़केको उसके बापसे मांगलिया-यह लड़का प्रभाकरही था जो कुमारिलजीसे पढ़कर सब शास्त्रोंका पारगामी होगया. एक दिन कुमारिलजी स्वरचित कोई ग्रंथ शिष्योंको पढ़ारहे थे, उस समय उस ग्रंथकी "अत्र तु नोक्तं तत्रापि नोक्तमिति द्विरुक्तम्" पंक्तिको बहुत देर विचारा परंतु समझमें न आई, तब तो कुमारिलजीने मध्याह्नका समय जान उस पाठको वहीं छोड़दिया. यह देख प्रभाकरने उस पंक्तिके "अत्र तुना उक्तं तत्र अपिना उक्तम्" पदच्छेद लिख पुस्तकपर रखदिया जब कुमारिलजी फिर पढ़ानेके लिये पुस्तक देखने लगे तो पदच्छेदोंको देख तुरन्त अर्थ समझ लिया और यह भी निश्चय करलिया कि, प्रभाकरके सिवाय इसप्रकार पदच्छेद कोई नहीं कर सकता। तबसे कुमारिलजीने प्रभाकरजीका नाम गुरु प्रसिद्ध करदिया। प्रभाकर ऐसी विलक्षण बुद्धिके थे कि, इन्होंने मीमांसादर्शनके सम्पूर्ण अधिकरण कुमारिलजीसे विपरीत योजन किये हैं.

प्रतापनारायण सिंह-(आनरेबिल राजा प्रतापनारायण सिंह, के. सी. आई. ई. अवधनरेश) सं० ई० १८७५ में अपने नाना महाराज मानसिंहके बाद अयोध्याकी गद्दीपर बैठे। आप विद्वान्, प्रतिष्ठित, धर्मात्मा, गर्वरहित तथा विचारशील पुरुष हैं। गवर्नमेंटने कई दफै आपको युक्त प्रान्तके लेफ्टिनेन्ट गवर्नरकी व्यवस्थापक सभाका मेम्बर बनाया है और के. सी. आई. ई. की उपाधिसे विभूषित किया है। अयोध्यामें पुराने महिलको जगह नया राज भवन आपने उत्तम बनवाया है और उसमें गैसकी रोशनी, कलसे चलनेवाले पंखे तथा टेलीफ़ोन इत्यादिका उत्तम प्रबन्ध है। राजभवन इस रीतिसे

बना हुआ है कि, उसका प्रत्येक भाग सबकी आखोंके सामने होनेपर भी जो चीजें उसमें गुप्त रखने लायक हैं उन्हें कोई नहीं देख सकता। भवनके देखनेकी सर्व साधारणको इजाज़त है, नित्यप्रति यात्रियोंकी भीड़ लगी रहिती है जो आप सरीखे ऋषिसन्तानको "अवधनरेश" महा पवित्र नामसे विभूषित जान द्विगुण श्रद्धासहित साष्टाङ्ग दंडवत करना अपना सौभाग्य समझतेहैं। भवनके भीतर नवीनरीतिसे आपका बनवाया तथा सजाया हुआ श्रीराधाकृष्ण इत्यादि देवताओंका मंदिर है जिसकी नियत समयपर झाँकी होती है और जहाँ बैठकर नित्यप्रति आप पञ्च महायज्ञ करते हैं। झांकीके समय शृङ्गार विलक्षण होताहै दर्शकोंकेचित्त परमानन्दमें मग्न होजातेहैं और स्मरण होता है कि-"विप्रः प्रसादा द्धरणी धरोहं विप्रःप्रसादा त्कमला वरोहं"। आपके महिलके सामने मुसल्मानोंका एक प्राचीन मैला कबरिस्तान था जो रास्ता रोककर यात्रियोंको बड़े कष्टका कारण होता था, आपने नया राजभवन बनवाते समय, किसीके बिना कान हिलाये हुये, बेधड़क उसको खुदवाकर फिंकवा दिया और उसकी जगह सुंदर सड़क निकलवाकर गैसकी रोशनी तथा फुव्वारे इत्यादिका प्रबन्धकरके प्राचीन अयोध्या नगरीकी शोभा बढ़ाई और भारतको कृत्य २ किया। आपका आतङ्क असाधारण है, विना आज्ञा आपके सन्मुख कोई नहीं बोलता है और सब लोग भय, प्रतिष्ठाकी दृष्टिसे जो प्रेमसे भी रिक्त नहीं है आपको देखते हैं। अयोध्या में नये घाटकी सड़कपर भी बगीचेके भीतर आपका बनवाया श्रीराधाकृष्णका एक छोटासा अत्यंत मनोहर मंदिर है जो बिलकुल संगमरमरका है। आपके समयका अधिक भाग पूजापाठ तथा देवदर्शन करने और इलाकेके मामलातकी देख भाल रखनेमें बीतता है। आप आमदनी तथा खर्चपर सदैव दृष्टि रखते हैं।

आपके रचे निम्नस्थ ग्रंथ देखने योग्य हैं:-रसकुसुमाकर सचित्र (भाषासाहित्य, मांसदर्शादर्श (मीमांसाविषय), द्विजदेवकृत शृङ्गारलतिकाका तिलक। स० ई० १९०३ में महाराज प्रतापकी उम्र प्रायः ५० वर्षकी मालूम होताहै, अभी तक आपके कोई पुत्र नहींहै। परमेश्वर आपको चिरायुकरे और पुत्रका सुख दिखलावै।

प्रतापसिंहसवाई-(जयपुरनरेश) ये सुप्रसिद्ध राजा जयसिंह सवाईके पौत्रथे। कविता अच्छी करतेथे और वैद्यक शास्त्र पारंगतथे। अमृतसागर इन्हींका रचाहुआहै। स्नेहसंग्राम (स०ई० १७९५) इत्यादि ग्रंथ भी इन्हींके रचेहुये हैं। पदपूर्ति "व्रजनिधि" नामसे करतेथे। अलवरके राव इन्हींके समयमें जयपुर राज्य की आधीनता त्याग स्वाधीन हुये। स०ई० १८०३ में सिधारे।

प्रिन्सेप-(जेम्सप्रिन्सेप- JamesPrinsep). युवावस्थामें इंग्लैंडसे हिंदोस्तान आकर बनारस में टकसालमें नौकर हुये और " स्केचेज-आफ

बनारस " नामक पुस्तक अङ्गरेजीमें लिखी. स० ई० १८३२ में एशियाटिक सुसा-इटी कलकत्तेके दैनिक समाचार पत्रके सम्पादनका काम इनके सुपुर्द हुआ. कुछ महीने पीछे एशियाटिक सुसाइटी कलकत्तेके मंत्रीका ओहदा इनको मिला, उक्त ओहदेपर रहिकर इन्होंने संस्कृतविद्याके अनेक प्राचीन तथा गुप्त रहस्योंका खोजकिया और सिकंदर आजमसे लेकर अपने समयतकके सब बादशाहोंके सिक्के एकत्र किये. स० ई० १८४० में ४० वर्षके होकर मरे.

प्रियादासनाभा-(भक्तमालके टीकाकार) वृन्दावनके रहिनेवाले, बड़े महात्मा ब्राह्मण थे. नाभाजीकी आज्ञासे भक्तमालकी टीका भाषा कवित्तोंमें रचकर वि० सं० १७६९. की साल इन्होंने सम्पूर्ण किया.

फतेहसिंह-(महाराना सर फतेहसिंहजी. जी. सी. यस. आई. मेवाड़ न-रेश) स. ई. १८५० में जन्मे और महाराना सज्जनसिंहके बाद स० ई० १८८४ में उदयपुरकी गद्दीपर विराजे। आपके समयमें राज्यमें सड़कें तथा नहिरें जारीहुई और स्कूल, शफाखाना, कचहिरी, जेल, सिपाहियोंकी बारक इत्यादि बड़ी २ इमारतें बनवाई गई। स्त्रियोंके लिये भी कई शफाखाने खोलेगये और लेडी डाक्टर नौकर रक्खीगई- आपकी एकही शादी हुई है जिससे कई बच्चे हैं- शादी तथा गमीके खर्चोंके घटानेका श्रीमान् अपने राज्यमें उद्योग करतेहैं । क्योंकि, मध्यमश्रेणीके मनुष्य इन खर्चोंके कारण बहुधा ऋणी होजाते हैं। महाराना फतेहसिंहजी बड़े विवेकी तथा न्यायकारी हैं। रहिन सहिन साधारणहै, शिकारका शौक है और प्रजागण श्रीमान्को प्यार करते हैं। ब्रिटिशगवर्नमेन्टको मेवाड़ राज्य की तरफसे २० हजार पौंड वार्षिक राजस्व दिया जाता है। अंग्रेजी अमलदारीमें महारानाकी सलामी तोपके २१ फैरोंकी है। सवार, पैदल मिलाकर २१॥ हजार फौज रियासतमें है जिसमें भीलोंकीभी १ पलटन शामिल है। नैपाल, प्रतापगढ, डूंगरपुर, बाँसवाड़ा, अलीराजपुर, और धरमपुर इत्यादि के महाराजे, महाराना साहबके कुटुम्बी हैं-अकबर इत्यादि मुसलमान बादशाहोंके समयमें अन्य सब राजपूत राजाओंने बादशाहसे शादीसम्बंध करना स्वीकार किया था परंतु राना चितौड़ने तनमें प्राण रहिते कभी ऐसा करना स्वीकार न किया था। महाराना फतेहसिंहजी भी अपने पूर्वजोंके प्रणका विचार रखते हैं, "कुछ दिन हुये आपके इकलौते पुत्रको पक्षाघात हुआ जब अनेक उपाय करनेपर भी राजकुमारको आराम न हुआ तब सर्दारोंने महा-राना साहबको रतलामके रहिनेवाले किसी करामाती मुसलमान फकीरका पता देकर कहा कि, राजकुमारको उसके हाथसे अवश्य आराम होजायगा, परन्तु धन्य है ऐसे दृढप्रतिज्ञ नरेशको जिसने स्पष्ट कह दिया कि, मुसलमानके

हाथ जोड़ना तो हमारे वंशकी प्रतिज्ञाके विरुद्ध है" । महाराना फतेहसिंहजीका एक रानीके रहिते दूसरी शादी न करनेका दृढ व्रत है। १९ बड़े दर्जेके और ३२ छोटे दर्जेके सर्दार श्रीमान्को राजस्व देते हैं। महाराना मेवाड़ श्रीरामचंद्रजीके वंशावतंस सूर्य्यवंशी हैं, इस वंशमें होने वाले नरेश सदासे क्षत्री धर्मका पालन करके अपने वंशकी प्रतिष्ठाकी रक्षा करते आयेहैं और इसीलिये यह वंश हिंदोस्थान भरके राज्यवंशोंसे अधिक प्रतिष्ठित समझाजाता है ।

फ़र्रुखसिअर–(मुगलसम्राट् दिल्ली). जहांदारशाहके मारे जानेके पीछे स० ई० १७१३ में दिल्लीकी गद्दीपर बैठा, इसके समयमें अजीतसिंह- जोधपुर नरेशने अपने राज्यकी सब मसजिदें गिरवा दीं थीं और उनकी जगहपर मंदिर बनवा दिये थे. फर्रुखसियरके दर्बारमें ईस्ट–इन्डिया–कम्पनीकी तरफसे २ राजदूत भेजे गयेथे. जिन्मेंसे एक डाक्टर हैमिल्टन नामकने फर्रुखसियरको कठिनरोगसे चङ्गा किया था जिसके बदलेमें कम्पनीको बंगालमें ३८ गांवकी जमींदारी खरीद नेकी आज्ञा मिली और अंग्रेजी मालपर महिसूल माफ किया गया. सिक्खोंके गुरु बंदासाहब इसीके वक्तमें मारेगये, ये बड़ा बेअकल था. इसके समयमें सदैव फिसादरहा जिससे सल्तनत तबाह हो चली थी- ६ वर्ष राज्य करनेके पीछे मारडाला गया.

फातिमा–(बीबीफातिमा) मुसल्मानोंके पैगम्बर मुहम्मद साहिब की इकलौती बेटी थी प्रायः स०ई० ६०६ में मक्कामें पैदाहुई, मुहम्मद साहिबसे ६ महीने बाद स०ई० ६३२ में मदीनामें सिधारी. हजरत अलीसे इसका विवाह हुआ था. हसन और हुसेन इसीके पुत्र थे.

फाह्यान–(चीनीसन्त) ये चीनका रहनेवाला बौद्धसाधु प्रायःस०ई० ४००में मध्य एशियामें होताहुआ हिंदोस्थानआया पहिले काबुलकंधारमें ठहिरा और देखा कि बौद्ध मत खूब उन्नतिपर था पश्चात पेशावरमें आया और बौद्धमतका एक बड़ा बुर्ज देखा. बादको सिन्धुनदी पारकर मथुरा गया और देखा कि वहां उस समय ३हजार बौद्ध साधु रहितेथे पश्चात राजपूताना और मध्यहिंदमें गया और वहाँके सब राजाओंको बौद्धमतानुगामी पाया. फाह्यान लिखता है कि उक्तसब राज्योंमें अपराधियोंको जिस्मानी सजाके बदले जुर्माना किया जाता था, कईदफेके अपराधीका सीधा हाथ काटाजाता था, चांडालोंके सिवाय कोई शिकार नहीं करता था, न खाता था, न बेंचताथा, न सुअर, मुर्गे इत्यादि पालताथा, शराबकी भट्टी नाम को भी कहीं न थी और बौद्धोंके स्तूप सब जगह बने हुए थे जिनके खर्चके लिये बड़ी २ जायदादें मुकर्रर थीं, स्तूपोंमें रहिनेवाले या आकर ठहिरनेवाले साधुओं को भोजन, वस्त्र, दूध, चटाई इत्यादि आवश्यक चीज मिला करती थीं. पश्चात फाह्यान कन्नौज, अयोध्या, गया, कपिलवस्तू, पाटलीपुत्र तथा अनेक और

राजधानियोंमें, जिनके अब नामतक मिटगये हैं विचरता फिरा-पाटलीपुत्र (पटना) में फाह्यानने २ वर्ष रहिकर बौद्धमतकी अनेक धर्मपुस्तकोंका जो चीनमें नहीं मिलती थीं पालीसे चीनी भाषामें अनुवाद किया-इसके बाद एक व्यापारी जहाजपर सवार होकर फाह्यान १४ दिनमें सिंहलद्वीप पहुंचा-सिंहलद्वीपमें फाह्यानके लेखानुसार उस समय एक ४७९ फिट ऊंचाबुर्ज था तथा एक स्तूप भी था जिस्में ५ हजार बौद्धसाधु रहितेथे-सिंहलद्वीपमें ठहरकर फाह्यानने विनयपताका नामक बौद्धोंकी धर्मपुस्तककी एक प्रति लिखी-फाह्यान लिखताहै कि, पहिले सिंहलद्वीपमें कोई नहीं रहिता था, धीरे २ इधर उधरसे व्यापारीलोग आवसे और सिंहलद्वीप एक बड़ा राज्य बन गया-पश्चात् उपदेशकोंने हिंदोस्तानसे जाकर उनको बौद्धमत ग्रहण कराया-स्वदेश छोड़े हुये जब कई वर्ष होगये थे, तो एक दिन सिंहलद्वीपके किसी मंदिरमें एक व्यापारीको चीनका बनाहुआ पंखा बुद्धकी २२ फिट ऊंची जमुरदकी मूर्त्तिको भेट करते हुये देख फाह्यानको स्वदेशका स्मरण हो आया और उसके आसूं निकल आये निदान कुछेक दिनबाद वह एक व्यापारी जहाजपर सवार हो चीनको चलदिया-रास्तेमें तूफान आनेसे जहाजकी पेंदीमें छेद होगया और फाह्यानको ५ महीनेके करीब, सुमात्रा तथा जावाके टापुओंमें पड़े रहिना पड़ा. फाह्यानके लेखानुसार उक्त द्वीपोंमें उस समय वैदिकमतका प्रचार था, और गणेश, देवी, शिव इत्यादिकी पूजा होतीथी. पुनः एक व्यापारी जहाज पर सवार होकर जिसपर वैदिकमतानुगामी २०० मनुष्य और सवार थे फाह्यानने यात्रा की और ८२ दिनमें चीन पहुंचगया-उपरोक्त लेखसे प्रतीत होताहै कि, उन दिनों हिंदोस्तान और चीनके बीच खूब व्यापार होता था. इस यात्राके वृत्तान्तमें फाह्यानने एक पुस्तक रची थी जो बड़ी रोचक है-फाह्यान जब हिंदोस्तान आयाथा. तब बौद्धमत यहांपर उन्नतिके उच्च शिखरपर था, पर वैदिकमतभी बिलकुल नष्ट नहीं होगया था-

फिर्दौसी-(फार्सी कवि)पूरा नाम इनका हकीम अबुलकासिमहसन फिर्दौसी था, और इनके बाप इसहाक, तूस (ईरान) के रहिनेवाले कृषीकार थे. फिर्दौसीको शुरूहीसे पढ़ने लिखनेका बड़ा व्यसन था और कविता तारीफके लायक करतेथे, इन्होंने सुलतानमहिमूद गजनवीके हुक्मसे " शाहनामा " नामक फार्सी पुस्तक रची थी. महिमूदने प्रतिशेर (दोहा) फिर्दौसीको १ अशर्फी देने कहा था, परंतु जब ३० वर्षबाद १२०००० शेरों (दोहों) का बृहत ग्रंथ रचकर फिर्दौसीने पेश किया तो महिमूद घबराया और देने दिलानेकी कुछ बात नकी-बहुत दिनोंबाद जब फिर्दौसीने याद दिलाई तब महिमूदने १२०००० रुपये भेजे-फिर्दौसीने लेनेसे इन्कार किया और महिमूदकी निन्दा लिखी जिस-

को देख महिमूदने १२०००० अशर्फियें भेजीं लेकिन् अफसोसकी बात है कि शहिरके एक दर्वाजेसे तो महिमूदके सिपाही अशर्फियोंके तोड़ेलेकर घुसे और दूसरे दर्वाजेसे फिर्दौसीका जनाजा निकला-फिर्दौसीके कोई बेटा था नहीं, निदान सिपाही अशर्फियें लेकर उसकी इकलौती बेटीके पास गये बेटीने लेनेसे इनकार करदिया-

फिर्दौसी स० ई० १०२० में ८० वर्षके होकर मरे.

फिरिश्ता-(इतिहासकार). इसका असलीनाम मुहम्मदकासिम था. इसके बाप मौलाना अलीहिंदूशाह, ऐस्त्राबादके रहिनेवाले बड़े विद्वान् थे और इसको बचपनहीमें लेकर हिंदोस्तान चले आये थे और अहिमदनगर (दक्षिण) के नव्वाबके यहां पढानेपर नौकर हो गये थे, परंतु थोडेही समय पीछे मरगये थे। बड़े होकर फिरिश्ता नव्वाब वीजापूरके दर्बारमें गया और उन्हीं-के कहिनेसे उसने तारीख फिरिश्तालिखी-फिरिश्ता वीजापुरके नव्वाब इबराहीम आदिलशाह द्वितीयके दर्बारमें स० ई० १५८९ से १६१२ तक रहा. तारीख फिरिश्तामें स० ई० ९७५ से १६०५ तकका हिंदुस्तानका इतिहास लिखा है-इस तवारीखका अङ्गरेजी अनुवाद डोसाहिबने किया है-

स० ई० १५५० में पैदा हुआ.

स० ई० १६१२ में मरा.

फीरोजशाहतुगलक (सम्राट्दिल्ली). मुहम्मदतुगलक सम्राट्दिल्लीका चचेरा भाईथा-इसने स० ई० १३५१ से १३८८ तक दिल्लीके तख्तपर बादशाहत की-येबड़ा रहिमदिल था, फौज और प्रजा सब इससे प्रसन्नथी, अन्याय इसके समय में नहीं होने पाताथा-विद्वान् भी था, "फुतूहाते फीरोजशाही" नामक फार्सी पुस्तक इसीकी बनाई हुई है-इसके समयमें बहुतसा मुल्क फतेह हुआ था और इसके अधिक नम्र होनेके कारण बङ्गाल और दक्षिणके सूबे स्वाधीन होगये थे. अमीरोंकी साजिशोंके कारण तथा सदैव रोगी रहिनेकी वजहसेभी इसको बड़ा कष्ट भोगना पड़ाथा, इसने बहुतसे पुल, सरायें, तालाव, पाठशाला, जमुनाकी नहिर, शफाखाने और मसजिदें बनवाईथीं. पुरानी दिल्लीमें फीरोजाबादका किला इसीका बनवाया हुआहै. स०ई० १३८७ में राजपाट अपने बेटेको सौंप विरिक्त होगयाथा परंतु बेटा निकम्मा निकला और थोड़ेही दिनबाद तख्तसे उतार दिया गया निदान इसको फिर तख्तपर बैठना पड़ा-स० ई० १३८८में ८० वर्षका होकर मरा-पुरानी दिल्लीमें इसकी कबर है.

फ्रैंकलिन-देखो बेञमिन फ्रैंकलिन-

बन्दीगुरु (बंदासाहिब)-इनके बाप रामदेव राजपूत, इलाके पूंछके रजो-री ग्रामके रहिनेवाले थे. १६ वर्षकी उम्रमें वंदीगुरु, जिनका नाम प्रथम ल-क्ष्मणदेव था किसी बैरागीके शिष्य होगये और बैरागी साधुओंकी मंडलीके साथ तीर्थ यात्रा करते फिरे. पश्चात् पञ्चवटीपर रहिकर बहुत दिनातक जप तप करते रहे. फिर सिक्खोंके गुरु गोविंदसिंहजीके पास पहुँच गुरुदीक्षा ली और खालसापंथ धारण करके वन्दा नाम पाया. कुछ दिनबाद गुरुने इनको पंजाबकी तरफ मुसल्मानोंको नीचा करनेके लिये भेजा. जहाँ २ बन्दासाहिब पहुँचे वहां २ सिक्ख लोग, जो अपने गुरुओंके दुःखोंपर आंसू बहा रहे थे, हथियार ले २ कर मददको आगये. फिर तो बन्दासाहिबने लाखों मुसल्मान बूढ़े, बच्चे, औरत, मर्द कटवाडाले, लाशें जलवादीं. मसजिदें गिरवादीं, मुसल्मा नोंके गांवके गाँव फुंकवादिये और लुटवालिये. खुलासा यह है कि, मुसल्मानोंको नाक चने चबा दिये. पंजाबके पहाड़ी राजे बंदा साहिबसे डरते थे, मुसलमान इनके नामसे काँपते थे. बन्दासाहिब घोड़ेपर खूब सवार होते थे, सिकार खूब खेलते थे और करामाती साधू थे. इनके २ विवाह हुये थे और इनका वंश अबतक वजीराबाद (पंजाब) में है. फर्रुखसियर मुगलसम्राट दिल्लीने २० हजार फौज भेजकर इनको बड़े जोड़ तोड़से पकड़वा लिया और मरवाडाला परंतु इनको जो कुछ करना था करचुके थे.

स० ई० १६५० में जन्मे-

वनमालीदास मुंशी-(भाषाकवि) ये गुसांई थे और वि० सं०१७१३में पैदाहुयेथे. अर्बी, फारसी और संस्कृत खूब पढेथे-दाराशिकोहके मुंशीथे-वेदान्त विषयमें इनके दोहे बड़े चुटीले हैं देखो-

दो०-जैसे मोती ओसको, वैसे है संसार।
झलकत देखो दूरसे, जात न लागे बार॥

रघुनाथकृत राजतरङ्गिणी और विद्याधरकृत राजावलीका संस्कृतसे फार-सीमें इन्होंने उलथा कियाथा-

बल्लालसेन (भोजप्रबंधके कर्त्ता)-लक्ष्मणसेन बंगालके अन्तिम राजा इनके पिताथे। "अद्भुत सागर" नामक ग्रंथ भी इन्हींने शा० सा० ११८२ में बनाया था।

बभ्रूवाहन--अर्जुन पांडवका बेटा, मणीपुरकी राजकुमारी चित्रांगदाके उदरसे था-अपने नानाके मरनेपर मणीपुरका राजा हुआ-

वर्क-(एडमंडवर्क-Edmund Burke.) इनके बाप वकील थे और इन्होंने डबलिन यूनीवर्सिटीमें शिक्षा पाई थी, इंग्लैंडमें बहुतदिनोंतक फौजके मीरबख्शी

रहे. सर्वोमित्र, परमेश्वरसे डरनेवाले, सुन्दर स्वभावके और दानी थे. शिल्पविद्या, कृषि और इमारतका इनको शौक था. अंतमें पार्लियामेंटके मेम्बर होगये. इनकी वक्तृता प्रभावशाली होतीथी. कई ग्रंथभी अंग्रेजीमें इन्होंने रचेथे.

स० ई० १७३० में जन्मे.

स० ई० १७९७ में मरे.

वरदराज १ (तार्किकरक्षाके कर्ता)-सूक्ष्मविचारसे इनका समय वि० सं० १०४१ और ११४७ के बीच निर्णय किया जासकताहै।

वरदराज २ (लघुकौमुदीके रचयिता)-ये तैलङ्ग ब्राह्मण दक्षिणसे आकर काशीमें बसेथे। सिद्धांतकौमुदीके कर्ता भट्टोजीदीक्षित इनके विद्यागुरु थे। वि० सं० १६७६ और १७१६ के बीच इनका समय निर्णय किया जासकता है। सिद्धांतकौमुदीको बालकोंके लिये कठिन जान इन्होंने मध्यकौमुदी, लघुकौमुदी तथा सारकौमुदी रचीथीं।

वरदराज ३ (सामवेदीयकल्पसूत्रकी व्याख्याके कर्ता) ये कौशिक गोत्रि पं० वामनाचार्यके पुत्रथे। अब (स० ई० १९०३) से ५०० वर्ष पूर्व इनका समय प्रतीत होताहै।

वरदराज ४ (मीमांसक)-नैविवेकग्रंथकी टीका इन्होंने बनाई थी। इस टीकाकी एक प्रति बनारस संस्कृतकालिजमें ४०० वर्षसे कुछ अधिक पुरानी मिलतीहै। इनके गुरुका नाम सुदर्शनाचार्य और पिताका नाम रङ्गनाथ था।

वर्धमान गुरु-देखो महावीर स्वामी--

बर्नियर-(फ्रेंसिसबर्नियर-Francis Bernier). आंजू (फ्रांस) के रहिनेवाले प्रसिद्ध पथिक और डाक्टर हुये हैं. ये हिंदोस्तान आकर १२ वर्षतक औरङ्गजेबके दर्बारमें रहे थे जिसमेंसे प्रायः ८ वर्षतक औरङ्गजेबके राज्य-वैद्य रहे. अमीरदानिश्मंदखांके साथ इन्होंने कश्मीरकी सैर की थी. स्वदेश लौटकर इन्होंने अपनी यात्राके वृत्तांतमें एक पुस्तक रची.

पैरिसमें स० ई० १६८८ में मरे.

वररुचि--विक्रमहर्षके दर्बारके नवरत्न नामक ९ प्रसिद्ध पंडितोंमें इनकी गणना है. इन्होंने " प्राकृत व्याकरण " रचा था जिस में महाराष्ट्री, सूरसेनी, पिशाची तथा मगद्धी भाषाओंका, जो संस्कृतसे विगडकर बनी हैं, वर्णनहै.

वराहमिहर (ज्योतिषी)-इनके बाप आदित्यदास सिंहलद्वीपी ब्राह्मण (मगध) पटनाके रहिनेवाले बड़े ज्योतिषी थे. पिताले विद्यापढ वराहमिहरजी

आजीविकाके लिये विक्रमहर्षके दर्बारमें उज्जैन गये. यावनी भाषाभी जानते थे, विक्रमने इनकी प्रतिष्ठा की और दर्बारके नवरत्न नामक प्रसिद्ध पंडितोंमें इनको रक्खा। निम्नस्थ ग्रंथ इनके बनाये हुये हैं:-

पञ्चसिद्धान्तिका, बृहतसंहिता, बृहज्जातक, लघुजातक, योगयात्रा, विवाहपटल, समाससिद्धांत और होड़ाशास्त्र. पञ्चसिद्धांतिकामें वराह मिहरने निम्नस्थ ५ प्राचीनसिद्धांतोंके आशयको संग्रह किया है:- पौलिश सिद्धांत, रोमकसिद्धांत, वशिष्ठसिद्धांत, सूर्य्यसिद्धांत और पितामहसिद्धान्त। वराहमिहरकृत "बृहतसंहिता" में १०६ अध्याय हैं जिनमें सूर्य, चंद्र, पृथ्वी, ग्रह, मेघ, वायु, भूकम्प, उलकातारा, इंद्रधनुष, बिजली, आँधी, बनस्पति, जीव-जन्तु, अनेकधातु, जवाहरात और बाग लगाने तथा मूर्त्ति, मकान बनाने और सजानेका वर्णन है. वराहमिहरने ज्योतिषशास्त्रके कई ग्रंथ प्राकृत तथा भाषामें भी रचेथे और उनमें केवल अनुभवसिद्धबातें लिखीथीं जिन्को लोग भड्डली कहितेहैं. आजकल भड्डली शब्द उन जोशियोंके लिये इस्तेमाल किया जाता है जो उपरोक्त ग्रंथोंके अनुसार फल बताते फिरते हैं. वराह मिहराचार्यके पुत्र पं० पृथुयशभी बड़े भारी ज्योतिषी थे (सो देखो)

स० ई० ५०५ में जन्मे और स० ई० ५८७ में मरे. अनेकोंकी सम्मति है कि १०० वर्ष जीकर स० ई० ६०५ में मरे थे.

बलदेवजी (श्रीकृष्णचंद्रके ज्येष्ठ भ्राता) वसुदेवजीके पुत्र रोहिणीके उदरसे थे. मथुराके राजा कंसके डरसे रोहिणीजी गोकुलमें नन्दबाबाके घर रहिती थी. बलदेवजीका विवाह राजा रैवतकी कन्या रेवतीसे हुआथा जिससे २ पुत्र हुये. बलदेवजी बड़े बलवान् थे. हल तथा मूसल इनके हथियार थे. बलरामजी सब लड़ाई झगड़ोंमें श्रीकृष्णजी के साथ रहे और श्रीकृष्णजीसे पहिलेही द्वारकामें परमधामको सिधारे.

बलभद्रमिश्र (ज्योतिषी). कन्नोजवासी दामोदरके पुत्र थे. प्रसिद्ध ज्योतिषी रामदैवज्ञ इनके गुरु थे. ये बङ्गालके सूबेदार शाहशुजाके पास राजमहिल (बंगाल) में रहा करते थे. शाहशुजा दिल्लीके बादशाह शाहजहाँका पुत्र था. "हायनरत्न" नामक ताजकग्रंथ वर्षफल विचारमें इन्होंने शाके १५६४ में रचाथा.ज० श० १५१४.

बलभद्र-(भाषाकवि). ये प्रसिद्ध कवि केशवदास सनाढ्यब्राह्मणके भाई वि० सं० १६३७ में विद्यमान थे-इनका बनाया नखशिख सब कविकोविदोंमें प्रमाणिक है. बालकृष्णत्रिपाठी तथा काशीनाथ इनके दोनों पुत्रभी अच्छे कविथे। विशेष वृत्तान्त इनका कवि केशवदासके सम्बंधमें देखो।

वल्लभाचार्यमहाप्रभु (गोकुलस्थ सम्प्रदाय प्रवर्तक). इन केपिता लक्ष्मणभट्ट तैलङ्ग ब्राह्मण थे और इनकी माताका नाम इल्लमगारू था। जब इनके माता पिता काशीको आरहे थे तो मिती बैशाख वदी ११ को वि० सं १५३५ की साल चम्पारन–सारनके पास चौरागाँवमें इनका जन्म हुआ। काशीमें ५ वर्ष की अवस्था में इन्होंने सुप्रसिद्ध पं० माधवाचार्यसे विद्याध्ययन किया। इनके दो भाई औरथे, बडे रामकृष्ण और छोटे रामचंद्र, वे दोनों संस्कृतके अच्छे कविथे। पिताके देहांतके बाद वि० सं० १५४८ की साल १३ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने दक्षिणकी ओर गमन किया और विजयनगरके राजा कृष्णदेवकी सभामें पहुंच शाङ्कर मतवालोंको शास्त्रार्थमें जीता। डाक्टर ग्रिअर्सन अनुमान करते हैं कि ये कृष्णदेव सम्भवत' कृष्णारायलू हैं जो स० ई० १५२० में राज्य करते थे। उस समय विष्णु स्वामीकी गद्दी खाली थी, सब महन्त आचार्योंने इन्हें उस गद्दीपर बैठाया और वल्लभाचार्य इनका नाम हुआ। इस दिग्विजयके पीछे इन्होंने काशीमें जाकर वहांके पंडितोंको शास्त्रार्थमें जीता फिर व्रजगये और गिरिराजपर श्रीनाथजीकी स्थापनाकरके सेवाकी वात्सल्यभावसे एक नवीनही प्रणाली निकाली। कुछ दिन पीछे औरंगजेवके उपद्रवके कारण श्रीनाथजीकी मूर्तिको मेवाडमें उठा लेगये जहां अब उनका बडा भारी वैभव है तथा लाखों रुपया वार्षिक भोगरागमें व्यय होताहै। इसके बाद महाप्रभुने तीन दफे भारत भ्रमण करके निज मतका प्रचार किया। भारतवर्षके प्रायः सब तीर्थो तथा देव स्थानोंमें महाप्रभुकी बैठक हैं। जहां २ बैठकर एक सप्ताहमें श्रीमद्भागवतका सम्पूर्ण पारायण किया है वहीं २ बैठक स्थापित हुई। ऐसी ८४ बैठके हैं। Catalogus Catalogorum के अनुसार इन्होंने ५२ संस्कृत ग्रंथ बनायेथे। भागवतपर सुबोधिनी तिलक, ब्रह्मसूत्रपर अणु भाष्य और जैमिनिय सूत्रपर भाष्य इनके बनाये हुये हैं। इनके मुख्य शिष्य ८४ थे जिनका वृत्तान्त इनके पौत्र गोस्वामी गोकुलनाथजीने "चौरासी वैष्णवोंकी वार्ता" नामक ग्रंथमें लिखा है। इनमेंसे बहुतेरे हिंदीके प्रसिद्ध कविथे। सूरदास, परमानन्द, कृष्णदास और चतुर्भुजदास तो ऐसे प्रसिद्ध हुये कि अष्टछापमें गिनेगये। इनकी स्त्रीका नाम लक्ष्मीबहूजीथा और इनके दो पुत्र थे गोस्वामीगोपीनाथजी और गोस्वामी विट्ठल नाथजी। गोपीनाथजीका वंश नहीं चला। गोस्वामी विट्ठलनाथजी बहुत प्रसिद्ध हुये (सो देखो)। महाप्रभुने मिती आषाढ वदी २ को वि० सं० १५८७ की साल काशीजीमें हनुमान घाटपर देहत्यागी। उस समय सन्यास लेलिया था और सशरीर गंगाजीमें अपने पुत्रोंको उपदेश करते २ प्रवेश किया। महाप्रभु भाषा कविताके बड़े उन्नायकथे परंतु स्वयं भाषाकविता नहीं करते थे। व्रजवासियोंसे तथा व्रज भूमिसे महाप्रभुको बड़ा प्रेम था, बहुधा कहा करते थे कि "व्रजवासी वल्लभ सदा मेरे जीवन प्रान"।

वल्लभ रसिकजी–(भाषाकवि). ये स्वामी हरिदासजीके शिष्य थे और व्रजमें रहितेथे । जन्म इनका स० ई० १६२५ में हुआ । " माँझ " नामक छंदोंमें इन्होंने राधाकृष्णका विहार वर्णन किया है ।

वल्लभन्यायाचार्य–(न्यायलीलावतीके कर्ता). बनारसकालिज के मासिकपत्र " पंडित " में इनका समय स० ई० की ११ वीं तथा १४ वीं शताब्दीके बीच निर्णय कियाहै ।

बलि–(राजाबलि) पौराणिक कथानुसार ये वैरोचनके पुत्र थे-प्रल्हाद इनके पितामह थे और हिरण्यकश्यप प्रपितामह-ये दैत्यवंशोत्पन्न पाताल (अमेरिका) के राजाथे विष्णुने वामनरूप रखकर इनसे ३ पैग पृथ्वी मांगी थी–परंतु तीनही पेगमें सब पृथ्वी नापली ।

वशिष्ठऋषि–१० प्रजापतियों तथा सप्त ऋषियोंमें इनकी गणना है-ऋग्वेदमें लिखाहै कि, ऋषि मित्रावरुणके वीर्यसे जो उर्वशी अप्सराको देखकर पतनहुआ वशिष्ठ तथा अगस्त्य ऋषि जन्मे थे–सूर्य्यवंशकी पुरोहिताई६१ पीढीतक इनके वंशमें रही और इनकी सन्तति अनेक पीढीतक वशिष्ठनामसे पुकारी जाती रही. योगवासिष्ठ ग्रंथ इन्हींका बनाया हुआहै- ये राजा दशरथ तथा रामचंद्रमहाराजके समयमें मौजूद होकर पुरोहित के पदको प्राप्तथे और यज्ञ कराया करते थे तथा मन्त्रीका भी काम देते थे । नन्दिनि गऊके पिछे इनसे और राजा विश्वामित्रसे लड़ाई हुई थी (देखो विश्वामित्र)–एकज्योतिष सिद्धांत इनका बनाया हुआहै और ऋग्वेदका सातवाँ मंडल इन्हींने प्रगट किया था–इनके गोत्रके ब्राह्मण अबभी बहुतेरे हैं–इन्होंने ऋग्वेदीय धर्मसूत्र भी रचेथे. तपोबल द्वारा इन्होंने उच्च बुद्धि प्राप्तकी थी, ये त्रिकालदर्शी थे संसार इनके करतल पदार्थ की भांतिथा ।

वसुदेव–(श्रीकृष्णके पिता) शूर नामक यदुवंशीके पुत्रथे-पांडवोंकी माता कुन्ती इनकी बहिन थी–इन्होंने कंसके चचा आहुककी ७ लड़कियोंसे, जिनमेंसे सबसे छोटी देवकीथी विवाह किया-देवकीके उदरसे श्रीकृष्ण जन्मे थे और दूसरी स्त्री रोहिणीके उदरसे बलदेवजीका जन्म हुआथा– इनका घर मथुरामें था परंतु श्रीकृष्णके द्वारकाको सिधारनेपर यहभी कुटुम्बसहित द्वारका चलेगये थे–वहीं इनका देहांत हुआ और ४ स्त्रिय इनके साथ सती हुई ।

बहिरामगोर (ईरानका बादशाह) स० ई० ४२० में विद्यमान था–२३वर्ष राज्य करके एकदिन शिकारकरते हुये घोड़ासहित गढ़ेमें गिरकर मरगया–गोरख-रके शिकारका इसको बड़ा शौक था इसलिये बहिरामगोरनामसे मशहूर हुआ–

वाकपति (गौड़वध प्राकृत महाकाव्यके रचयिता) विक्रमकी ७ वीं शताब्दीमें हुये. ये कन्नौजके राजा यशोवर्म्मनकी सभाके अलङ्कार थे–गौड़वध काव्यमें राजा यशोवर्म्मनहीके दिग्विजयका वर्णन है–

वाग्भट्ट (आयुर्वेदकी अष्टाङ्गहृदय संहिताके निर्माणकर्त्ता)-" रसरत्न समुच्चय" वैद्यक ग्रंथभी इन्हींका बतायाहै. इनकी बनाई अष्टाङ्गहृदयसंहितामें सूत्रस्थान आदि छः स्थान और काय आदिवैद्यकके ८ अंगोंका वर्णन है. पुरातत्ववेत्ता डाक्टर रायल साहिबने लिखाहै कि, भारतमें वाग्भट्टकी चिकित्सा सर्व्वोत्तम है और अरब देशके हकीमोंने यह विद्या इसीसे सीखीथी. रायट आनरेबिल एलफिन्सटन साहबने अपने सुविख्यात भारतवर्षके इतिहासमें लिखा है कि "भारतवर्षहीके वाग्भट्टसे यूनानी आदि यूरोपदेशवासियोंने हिकमत सीखीथी". वाग्भट्टजी विक्रमकी १२ वीं शताब्दीसे पहिले हुये क्योंकि इनकी रची वैद्यक संहिताके सबसे प्राचीन टीकाकार पं० हेमाद्रिथे जो वि० सं० के १२ वें शतकमें हुये.

वाचस्पति मिश्र (न्यायवार्तिक तात्पर्यके कर्ता)-ये वि० सं० १०३२ में जीवितथे।"खण्डनोद्धार" नामक ग्रंथ भी इन्हीं का रचा हुआ है जिसमें श्रीहर्षकृत "खण्डनखण्डखाद्य" का समाधान किया है।

बाजीराव प्रथम-(द्वितीय पेश्वा) निजपिता बालाजी विश्वनाथके बाद स० ई० १७२० में पूनाकी गद्दीपर बैठे. इन्होंने दक्षिणदेशवर्त्ती उस सब मुलकको, जिससे चौथ वसूल करनेका अधिकार दिल्लीदरबारने इनके पिताको दिया था, अपने राज्यमें पूर्ण रीतिसे मिला लिया और १५ वर्ष निरन्तर लड़कर स० ई० १७३६ में मालवेका सूबा तथा विन्ध्याचल पर्वतके उत्तरोत्तर चम्बल और नर्मदानदियोंके बीचका मुल्क अपने अधिकारमें करलिया. स० ई० १७३९ में पेश्वाने पुर्तगालवालोंसे वैसीनका शहिर छीन लिया. अंतमें पेश्वाने निजाम हैदराबादपर चढ़ाईकी पर सन्धिकरने पड़ी-स० ई० १७४० में पेश्वा बाजीरावका देहांत हुआ-

बाजीराव २ (अन्तिम पेश्वा) यह रघुनाथराव पेश्वाके पुत्र थे. और षष्ठम पेश्वा माधवराव नारायणके आत्मघात करनेपर स० ई० १७९५ में पूनाकी गद्दी पर बैठे. इतिहास प्रसिद्ध नाना फर्नवीस ब्राह्मण इनका वजीर था. इनके समयमें हुल्कर आदि मरहठा सरदारोंने जो पेश्वाके आधीन होकर राजस्व दिया करते थे ज्यादह सर उठाया, निदान इन्होंने बृटिश गवर्नमेंटके साथ अहिद नामा कर्के २६ लाख रुपये सालाना अंग्रेजीफौजके खर्चके लिये देना स्वीकार किया और अंग्रेजोंनें इनकी मदद करने तथा इनके शत्रुओंको परास्त करनेका वचन दिया. हुल्कर, संधिया और भोंसला नामक मरहठा सर्दार मिलकर उक्त अहिदनामाके तोडनेको कटिबद्धहुये-इसी वजहसे अंग्रेजों और मरहठोंमें युद्ध ठना, जो स० ई० १८०३ से १८०४ तक जारी रहा और जिसका नतीजा यह हुआ कि, संधिया तथा भोंसला आदि मरहठा सर्दारोंको परास्त

होकर अपने २ मुल्कका अधिकांश अंग्रेजोंको देना पड़ा-इसके बाद कुछ समय तक सब झगड़े दबगये परंतु स० ई० १८१८ में पेश्वा, हुल्कर और नागपुरके भोंसलाने पृथक्२ बृटिश गवर्नमेंटसे फिर युद्ध ठाना पर परास्त हुये. पेश्वाने परास्त होकर बृटिश गवर्नमेंटकी शरणली, निदान उनका राज्य सूबे बंबईमें मिला लिया गया और उनको ८ लाखकी पेन्शन देकर कान्हपुरके समीप विठूरमें रहिनेका हुक्म दिया गया जहां उन्होंने अपनी बाकी उम्र आरामसे काटी-नाना साहिब जिनका स० ई० १८५७ के गदरके बाद कुछ पता नहीं पेश्वा बाजीरावके दत्तक पुत्र थे। "राजच्युत होनेपर पेश्वा बाजीरावके पास वह भारी सेना तथा वीर मंडली नथी जो उनको सदा घेरे रहा करती थी परंतु वह विप्र मंडली साथथी जिसने उनके प्रचंड प्रतापका समय अपनी आंखोंसे देखा था और जो उनकी उदारताके सामने भूमंडलके राजामहाराजाओंको कुछ नहीं समझतेथे। दूर २ से बड़े २ पंडित विद्वान आते थे और योग्यताके अनुसार पेश्वासे पुरस्कृत होते थे, वेदपाठकी ध्वनिसे विठूर इनके समयमें भरपूर रहिता था"।

बाणभट्ट-(प्रसिद्ध उपन्यासकार) इनके बापका नाम चित्रभानु और माताका नाम राज्यदेवी था। भद्रनारायण, ईतान इत्यादि इनके बालापनके मित्रथे। १४ वर्षकी उम्रमें इनके पिताका देहांत होगयाथा. बडे। होकर इन्होंने सिलादित्य हर्षबर्धन महाराज कन्नौजके दर्बारमें प्रतिष्ठा पाई। सिलादित्य हर्षबर्धन का राजकाल स० ई० ६१० से ६५० तकहै इसीसे इनका समयभी निर्णय होसक्ता है। निम्नस्थ ग्रंथ इनके रचे हुये हैं:-

रत्नावली, नागानन्दनाटक, कादम्बरी, हर्षचरित्र, चंडिकाशतक और पार्वती-परिणय नाटक।

इन सब ग्रंथोंमें कादम्बरी बहुतही ललितहै उसके विषयमें विद्वान् लोग कहिते हैं कि "कादम्बरीरसज्ञेभ्य आहारोपि न रोचते." नलचम्पूके टीकाकार गुणविनय नामक जैनने कादम्बरीको "मुकुटताड़का" नामसे लिखाहै-

सूर्यशतकके कर्ता पं० मयूर भट्टकी बेटी पं० बाणभट्टको विवाही थी। ये ससुर जमाई दोनों महाराज श्रीहर्षकी सभामेंथे (देखो मयूरभट्ट तथा श्रीहर्ष)। श्रीहर्षने बाणको कादम्बरी तथा श्रीहर्षचरित लिखनेके पुरस्कारमें "महाकवि चक्रचूड़ामणि" की उपाधि दीथी।

वात्सायन-पद्मपुराणमें इनका नाम अकसर आया है-आधुनिक तत्त्ववेत्ताओंके मतानुसार वात्सायन नामक ऋषि स०ई० ६००में विद्यमानथे जिनका दूसरा नाम मल्लनागथा. वात्सायन ऋषिने कामसूत्र रचेथे-

बादरायण-देखो व्यास।

बापूदेव शास्त्री, पंडित महामहोपाध्याय, सी० आई० ई० (गणितशास्त्र

पारंगत)-इनके परदादे प० चिन्तामणिदेव परांजपे, कोंकणप्रदेशसे रत्नागिरि जिलेके वेलणेश्वर नामक ग्राममें आकर बसे थे। वेलणेश्वरसे कुछ दिनों बाद गोदावरी तट अहिमदनगरके टोंका गाँवमें जा रहे थे। चिन्तामणिदेवके पुत्र सदाशिवदेव हुये जिनके पुत्र सीतारामदेवके घर सत्यभामाके उदरसे स० ई० १८१९ की साल नृसिंहदेव नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका उल्लापन नाम बापूदेव शास्त्री है। पं०सीतारामदेव अच्छे विद्वान् थे और लेन देन तथा अन्यान्य व्यापार करनेके निमित्त कभी पूना और कभी नागपुरमें रहिते थे। इनके ३ पुत्र थे जिनमें बापूदेव सबसे छोटे थे। १६ वर्षकी उम्रतक बापूदेवको अष्टाध्याई, अमरकोष, सिद्धांतकौमुदी, पिंगलसूत्र, ऋग्वेद, शिक्षा तथा रघुवंश पढ़ाया गया था जिससे व्युत्पत्तिज्ञान वास्तवमें इनको अच्छा होगया था। बादको ये पूनाकी महाराष्ट्री पाठशालामें गणित पढ़नेके लिये गये, गणितमें इनका खूब मन लगा, गुरुकी सब विद्या थोड़ेही दिनोंमें हरली। पश्चात् ये पिताके साथ नागपुरको चले आये और पं० ढुंढिराज मिश्रसे भास्करकृत लीलावती तथा बीजगणित पढ़ने लगे। फिरतो इनको गणितशास्त्रका व्यसन लगगयाथा अहिर-निश उसीमें लवलीन रहिते थे। स० ई० १८४० में सीहोरके पोलीटिकेल एजेन्ट विलिकिन्सन साहबने इनकी ख्याति सुनी और परीक्षा करनेके बाद सीहोरकी पाठशालामें व्यक्ति गणित पढ़ानेकी २०) रु० मासिककी जगह इनको दी और हुक्म दिया कि, सिद्धांती पंडित सेवारामजीसे सिद्धांत शिरोमणि पढ़ाकरो। हररोज तीसरे पहिरको साहबभी खुद इनको रेखागणित तथा पदार्थ विज्ञान पढ़ाया करते थे। इस प्रकार दोवर्षमें इनकी खूब विद्योन्नति हुई। स० ई० १८४२ में विलिकिन्सन साहबने सिफारिश करके बनारस संस्कृत कालिजमें नेचुरल फिलासोफी तथा गणितका प्रोफेसर इनको करादिया। बनारसमें आकर इन्होंने अंग्रेजी पढ़ी और दामोदरशास्त्रीसे षटदर्शनकी शिक्षापाई। स० ई० १८५० में मैकलौड साहब बनारसके कलेक्टरकी आज्ञानुसार इन्होंने हिंदी बीजगणित रचकर लोकलगवर्नमेंटसे दोहजार रुपये इनाम पाया, इसी बीज-गणितको जब दूसरी दफे छपवाया तो म्यूरसाहब लफ्टिनेन्ट गवर्नरने १ हजार रुपया तथा १ दोशाला इनाम दिया। लन्डनकी रायल एशियाटिक सुसायटी, बंगालकी एशियाटिक सुसायटी और कलकत्ता तथा प्रयागके विश्वविद्याल-योंने इनको अपनी २ सभाओंका मेम्बर नियत किया था। बृटिशगवर्नमेंटने अपूर्वविद्याके पुरस्कारमें इनको महामहोपाध्याय तथा सी० आई० ई० की उपा-धियें दी थीं। वि० सं० १९३५ के साल काशीके सब लोगोंने सभाकरके इनको अभिनन्दनपत्र दिया था जिससे प्रतीत होता है कि, जैसी प्रतिष्ठा इनकी सर्कारमें थी वैसेही लोकसभामें भी आदर था। स० ई० १८७३ में चंद्र तथा सूर्य ग्रहणका शुद्ध गणित करके इन्होंने महाराजा काश्मीरके पास भेजा था जो

ठीक घड़ीसे मिला, महाराजने प्रसन्न होकर१हज़ार रुपये तथा५०० रु० का एक दोशाला इनाममें दिया । वि० सं० १९३३ से काशी नरेशकी आज्ञानुसार ये प्रति वर्ष पञ्चाङ्ग बनाकर२००रु० इनाम पाया करतेथे।काशीकी पंचक्रोशी यात्रामें कई वर्षसे गड़बड़ थी, लोग भिन्न २ मार्गोंसे यात्रा करने लगे थे, एवं काशी नरेश तथा इञ्जिनियर साहबकी आज्ञासे यंत्रादिद्वारा इन्होंने शुद्ध मार्ग निर्णय किया । स० ई० १८५८ में इन्होंने भास्कराचार्यकृत सिद्धांत शिरोमणिके कतिपय उदाहरणोंको चलगणितसे उत्पन्न कर सिद्ध किया था कि, भारतके प्राचीन लोग चलगणितसे भी खूब वाकिफथे।स०ई०१८६१में बंगाल एशियाटिक" सुसाइटीकी " बिबलीओथीकाइन्डीका " नामक ग्रंथमालामें इन्होंने "सूर्यसिद्धांत सोपपत्ति तथा सटिप्पण" छपवाया था । स० ई० १८८९ में १०० रु० मासिककी पेन्शनली और १४ महीनेबाद ७ जून स० ई० १८९० को परलोक गामी हुये । ३ स्त्रियोंके निस्सन्तान मरनेपर इन्होंने चौथा विवाह किया था जिससे दो पुत्र और१कन्या है।पं०बापूदेवशास्त्री वक्तके बड़े पाबन्द थे,शरीर वृद्धावस्थातक दृढ रहा,प्रात३बजेका गंगास्नान मरणतक नहीं छोड़ा।वे स्वभावके सीधेथे,अहंकार का स्पर्शभी उनमें नहीं था और अपनेको यहांतक तुच्छ जाना करतेथे कि बातचीतमें विद्यार्थियों तकसे आप कहकर बोलतेथे । घरपर भी विद्यार्थियोंको पढ़ाते रहिते थे, पं० महामहोपाध्याय सुधाकर दुबे, पं०चंद्रदेव पांड्या, विनायक शास्त्री इत्यादि काशीके वर्त्तमान विद्वान् आपहीके शिष्य हैं । एक दिन विनोदमें आपने एक यंत्र निर्माण कियाथा और उसका नाम अतुलयंत्र रक्खा था. निम्नलिखित पद्यमें उक्तयंत्रका उपयोग दिखायाहैः-

दिनमिति यथाभीष्टं कालं नतं च समुन्नतं । निरयणतनुं सांशां भानोश्चराय-मदिग्लवान् । सपदि नरभाग्रेक्षामाभादवैतिनरोयतस । तदिदमतुलं यंत्रं काश्यां जयत्यनिशं स्फुटम् ।

निम्नस्थ ग्रंथ बापूदेव कृत हैं:- विचित्र प्रश्न संग्रह, तत्त्वविवेक परीक्षा ज्योतिषाचार्याशयवर्णन, सायनावाद, फलित विचार और मानमंदिर वर्णन ।

बापूदेव शा० की ज० कुं०



बाबरशाह-(हिंदोस्तानमें मुगल राज्यके संस्थापक). इन्होंने वि०सं०१५५० में फरगाना(मध्यएशिया)का राज्य अपने बाप उमरशेख मिर्जासे पाया। इसके बाद १वर्ष पर्य्यंत तुर्किस्तानमें अपने सपिंडियों तथा उज़बक जातिके सर्दारोंसे इनका झगडारहा। अंतमें इनके पैर वहांसे उखड़गये और ये भागकर काबुलमें आये वहां कुछ दिन ठहिरकर इन्होंने फौज एकत्र की और अपने दादा अमीरतैमूरकी राजधानी समरकंदको विजय किया, परंतु उज़बक लोगोंने इनको कुछ दिन बाद वहांसेभी निकाल दिया तब तो इन्होंने अपने पूर्वजोंके मुल्कका ख्याल छोड़ हिंदोस्तान फ़तेह करनेका इरादा किया-हिंदोस्तानमें उस वक्त आपधापथी, आपसमें फूट थी, बाबरने इसको सुअवसर जान हिंदोस्तानपर चढ़ाई करदी और वि० सं १५८१ में सुलतान इबराहीम लोधीको पानीपतके मैदानमें परास्त करके दिल्लीका राज्य छीन लिया और आगरेकी तरफ कूंच किया। राजपूत राजाओंमेंसे चित्तौड़नरेश राना सांगाके सिवाय और कोई साम्हने न चढ़ा। रानाके राजपूतोंने बाबरकी फ़ौजके दांत खट्टे करदिये तब तो बाबरने अपने सर्दारोंके साम्हने कसम खाई कि, अगर रानापर फ़तेह पाऊं तो शराब पीना छोड़दूं और दाढ़ीबढ़ाऊं। अंतमें फ़तेहपुर सीकरीके मैदानमें कई नमकहराम सर्दारोंके बिगड़ जानेसे रानाकी हार हुई। दूसरेही वर्ष बाबरने चंदेरीका किला मेदनीरायसे फ़तेह किया। कुछ दिनोंबाद पठानोंने पूर्वमें इकट्ठे होकर फ़िसाद करना चाहा निदान बाबरको उनके दमन करनेके लिये भोजपुर और पटनातक जाना पड़ा। इसके कुछ दिन-बाद शाहिजादे हुमायूंके, जो अपनी जागीर सम्भलमें रहिताथा, बीमार होनेकी खबर आई। बादशाहने तुरंत उसको राजधानी आगरेमें बुलालिया, जब उसके बचनेकी कोई सूरत न देखी तो बाबर उसके पलंगका परिक्रमाकरके ऊपरको मुख और दोनोंहाथ उठाकर ईश्वरसे प्रार्थी हुआ कि, "या मौला! इसको आरामकर और मुझको ले." उसी घड़ीसे हुमायूंको आराम हो चला और बाबर बीमार पड़कर मरगया. ये बड़ा न्यायकारी, ज्योतिष तथा रमलविद्याका जाननेवाला और प्रजापालक बादशाहथा. रात तथा दिनको अकसर वेष बदल २ कर प्रजागणका हाल दरयाफ्त किया करताथा. अपने बच्चोंसे इसको अधिक प्रेमथा. मरतेवक्त अपने ज्येष्ठपुत्र हुमायूंसे कहिगया था कि, अपने छोटे भाइयोंको किसी तरहकी तकलीफ़ न देना-

इसने स०ई० १५२६ की साल अयोध्याके रामकूट मंदिरको विध्वंसकर रघुवंशियोंकी जन्मभूमिपर मसजिद बनवाई थी जो अबतक मौजूद है।

वि० सं० १५८७ में ४८ वर्षकी उम्रमें मरा-

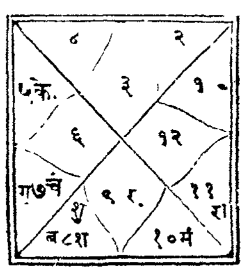
वामन पंडित--इन्होंने वृत्तिसहित काव्यालंकार सूत्रोंको रचा था. काश्मीर राजतरङ्गिणीके लेखानुसार वामनजी कश्मीरनरेश जयापीड़के मंत्रीथे.

विक्रमकी ८ वीं व १० वीं शताब्दीके बीच इनका समय है. काशिकाके भी कुछ अध्याय वामनजीके बनाये हुये हैं. काशिका उस सरलवृत्तिका नाम है जो पाणिनीय सूत्रोंपर सूत्रक्रमके अनुसार है-

बालशास्त्री (काशीवासी वेद वेदाङ्गके अद्वितीय पंडित). गोविन्दभट्ट रानाडे नामक ब्राह्मण कोंकणप्रदेशसे काशीमें अस्सीघाटपर आकर रहे थे, इनके घर वि० सं० १८९६ में काशीबाईके गर्भसे विश्वनाथ नामक पुत्रका जन्म हुआ जो बालशास्त्री नामसे जगत्में विख्यात हुआ। गोविंदभट्ट अपने पुत्र बालको ५ वर्षका छोड़कर मरगये, घरमें कोई और था नहीं एवं मरती समय उन्होंने अपने मित्र पं० रामकृष्ण दीक्षितको बुलाकर कहा कि "भाई ! हमतो अब जाते हैं, ये लड़का नादान है घरमें जो है सो तुम जानतेही हो, अब तुम्हारा ही भरोसा है, जहांतक होसके इनको पीठ नहीं देना"। यह कहि गोविन्दभट्ट ५ वर्षके लड़के और २३ वर्षकी विधवाकी नौका मँझधारमें छोड़ चलबसे। पं० रामकृष्णने मैत्रीधर्म खुब निबाहा, पिताका सबकार्य यथासाङ्ग कराके बालकको अपनी शिक्षामें लिया और उसको तथा उसकी माताको कोई कमी न रखकर किसीके द्वारपर नहीं जाने दिया। बालकी बुद्धि तथा धारणाशक्ति ऐसी प्रबलथी कि, बहुत थोडी उम्रमें चारोंवेद उसे कंठाग्र होगयेथे औरपं०रामकृष्णके साथ राजच्युत पेश्वा वा बाजीरावके दरबारमें बिठूरजाकर उसने अपने वेदगानसे बडे २ पंडितोंको चकित कियाथा। पेश्वाने भी प्रसन्न होकर उसको "बाल सरस्वती" कहिकर पुकाराथा और कुछ आर्थिक सहायता भी दीथी। चित्रकूटके पेश्वा विनायक रावके दर्बारमें भी इसी प्रकार उसका आदर हुआथा। इसीसमय विद्याधरभट्टने ज्योतिष्टोमयज्ञ कियाथा और बाल सरस्वतीकी विलक्षण ख्याति सुन यज्ञमें मैत्रावरुणका कठिन प्रयोग उनको दियाथा जो उन्होंने बड़ी तारीफ़के साथ कियाथा। पश्चात् बालसरस्वती माता सहित ग्वालियर गये, वहांके चीफ़जस्टिस पं० कृप्पाशास्त्रीने उनका कुछ निबंध कर दिया और शास्त्र तथा व्याकरण पढनेका उपदेश किया निदान उन्होंने बाबाशास्त्री बापटसे सिद्धांतकौमुदी और पूनाके मोरशास्त्रीसे, जो उन दिनों ग्वालियरमें थे, न्याय तथा मीमांसाशास्त्र पढे। उस वक्त बालसरस्वतीकी उम्र १६ वर्षकी थी निदान ग्वालियरके सामुद्रिक पंडित बच्चाशास्त्रीने अपनी कन्या उनको विवाह दी। पश्चात् काशीमें आकर उन्होंने पं०राजाराम शास्त्रीसे समस्त व्याकरणके ग्रंथ पढे और वि०सं०१९१९में संस्कृत कालिज बनारसमें साङ्कके असिस्टेंट प्रोफ़ेसरका पद पाया तथा वि० सं० १९३१ में तरक्की पाकर धर्मशास्त्रके प्रोफ़ेसर उक्तकालिजमें होगये। शास्त्रीजी घरपरभी विद्यार्थियोंको पढाते रहितेथे। म० म० पं० शिवकुमार शास्त्री, म० म० पं० गंगाधर शास्त्री सी. आई. ई, म० म० पं० दामोदर शास्त्री तथा तात्याशास्त्री आदि आजकलके अपूर्व

विद्वान् अपनेको बालशास्त्रीका शिष्य बतलाते हैं। काशीमें आनेवाले राजे महाराजे बाल शास्त्रीजीका दर्शन किये बिना नहीं जातेथे, काशीराजके यहांभी इनकी निर्णीत व्यवस्थाका आदर होताथां, काशीस्थ ब्राह्मणदलके यह शिरमौरथे, यज्ञ करानेवाला दूसरा पंडित इनके समान नहीं था, यज्ञके सब बड़े २ प्रयोग इन्होंने किये थे, एक निर्धनी दक्षिणी ब्राह्मण इनके उपकारसे यज्ञ करनेमें समर्थ हुआ था। जब विद्यासागरके उद्योगसे बंगालमें और वहांकी देखा देखी दक्षिणमें विधवा विवाहकी चर्चा अत्यंत प्रबलहुई थी तौ इन्होंने देश देशांतरोंमें पूज्यपाद गुरु पं० राजाराम शास्त्री तथा अनेक शिष्योंके सहित जाकर धर्मविरुद्ध चर्चाके प्रवाहको रोका था। वि० सं० १९३१ में पं० राजाराम शास्त्रीकी मृत्युसे इनको वैराग्य उत्पन्न हुआ, वि० सं० १९३४ में इन्होंने कालिजकी नौकरी छोड़दी और व्याकरण तथा न्यायादिशास्त्रोंके बदले वेदान्त पढ़ाने तथा अग्निसेवा करनेमें शेष समय बिताया। मण्डी (पंजाब) के राजा विजयसेन शिष्य होकर आपको आर्थिक सहायता देते थे। सन्तानके सिवाय आपको कोई दुःख नथा, दो स्त्रियें मर जानेपर इन्होंने तीसरा विवाह किया था लेकिन् सन्तान नहीं थी। वि० सं० १९३७ में शास्त्रीजीने शीतला घाटपर यज्ञशाला बनवाई और अग्निष्टोम याग किया। वि० सं० १९३९ में शास्त्रीजी बीमार पड़े साथही पतिव्रता पत्नी भी बीमार होगई। शास्त्रीजीको तौ आराम हो गया लेकिन् वह चलबसी। मृत्युसे पहिले सब लोगोंने शोच विचारकर एक ब्राह्मणके ४ वर्षके लड़केको उसकी गोदमें बिठाल विष्णुदीक्षित नाम रक्खा। इसके बाद शास्त्रीजीने समय निकट समझ यज्ञशालामें पुष्पवाटिका तथा शिवमंदिर बनवाया और १ महीना ८ दिनबाद आप भी चलबसे। माता काशीबाई जो २३ वर्षकी उम्रमें विधवा हुई थी अपुत्र हुई और घर छोड़ दत्तकको लेकर यज्ञशालामें आरहीं। शास्त्रीजीके शिष्योंने यज्ञशालामें "बालसरस्वतीभवन" नामक पुस्तकालय स्थापन किया और उसमें शास्त्रीजीकी सब पुस्तकोंको रख दिया।

बालशास्त्रीकी ज० कुं०



बालाजीविश्वनाथ (प्रथम पेशवा)-मुगल सम्राट् औरंगजेबके मरनेपर महाराज शिवाजीके पौत्र राजाशाहु मुगलोंकी कैदसे छूटकर तथा दिल्लीके तख्तका आधिपत्य स्वीकार करके अपने राज्यमें लौटकर आये लेकिन् प्रजागण थोडेही दिनोंमें उनसे उकता उठे निदान घोर उपद्रव रोकनेके लिये राजा शाहूने ई० स० १७१२ के साल महाराष्ट्र देशका सर्वत्र राज्य अपने मंत्री (पेशवा) बालाजी विश्वनाथ नामक विद्वान् तथा राजनीति निपुण ब्राह्मणको दे दिया। पेशवाने राज्याधिकार पाय पूनामें अपनी राजधानी स्थापन की और ऐसे न्याय तथा योग्यतासे राजकाज चलाया कि,पेशवाका पद पुश्तैनी होकर ७ पीढ़ीतक उसके वंशमें चला। शाहू तथा उनके उत्तराधिकारी सतारामें रहकर नाम मात्रके राजाथे, महाराष्ट्र देशका शासन यथार्थ में पेशवा पूनामें रहकर करता था। स० ई० १७१८ में बालाजी विश्वनाथने मुगल सम्राट् दिल्लीको फौजकी मददकी थी, इसके बदलेमें दक्षिण देशसे चौथ उघानेकी आज्ञा तथा पूना और सताराके बीचका मुल्क पाया था। स० ई० १७२० में इनका देहान्त हुआ।

बालाजी बाजीराव (तृतीय पेशवा)--यह द्वितीय पेशवा बाजीरावके ज्येष्ठ पुत्रथे। इनके समयके समान मरहट्टाराज्यकी उन्नति किसी पेशवाके समयमें नहीं हुई। हुलकर, संधिया, भोंसला तथा गैकवाड़आदि मरहट्टा सर्दार इनको राजस्वदेतेथे और इन्हींकी कृपासे बहुत नीचे दर्जोंसे उच्च पदोंको प्राप्तहुये थे। निजामहैदराबादने भी परास्त होकर अपने मुल्कका उत्तरी- पश्चिमी भाग इनको दे दिया था तथा वार्षिक भेंट भी देना स्वीकार किया था। स०ई०१७६१ में काबुल कन्धारके बादशाह अहिमदशाह अब्दालीने मरहट्टोंको पानीपतके मैदानमें पराप्त किया। इसी शोकसे पेशवा बालाजी बाजीरावजो बड़े साहसी वीर शासक थे. परलोक गामी हुये। स०ई० १७४० में राज्य सिंहासन पर बैठे और स०ई०१७६१ में परलोक गमन किया।

बालादित्य (काश्मीरके गोनर्द वंशका अन्तिमराजा)--यहराजा रणादित्यका पुत्र वि० सं०५३० में काश्मीरका राजाहुआ। बंगालदेश विजय करके वहांपर इसने एक पथिकाश्रम बनवाया था तथा काश्मीरमें भी एक अग्रहार बनवाया था और इसकी रानीने विश्वेश्वर नामक शिव मन्दिर निर्माण किया था। राजाबालादित्यके अनङ्गलेखा नामक एक अत्यंत सुंदरी कन्या थी जिसकी जन्मपत्री देख किसी ज्योतिषीने राजासे कहा था कि "आपके पीछे आपका जामात्रकाश्मीरका राजा होगा"। इस फलादेशको सुन राजाने अनङ्गलेखाका विवाह अपने अश्वशालाके दरोगा दुर्लभवर्द्धन नामक एक स्वरूपवान् परन्तु सामान्य कायस्थसे करदिया। अनङ्गलेखा निज पतिको कुछ न

गाठकर मुख्यमंत्री खड्गसे फँसीहुई थी और पुंश्चलीके निम्नस्थलक्षण उसमें पाये जाते थेः-

"पीछे हँसते खेलते रहना और पतिके आतेही उदासीनहो जाना। विना-कारण उठ खडे होना और मुसकुराके मार्गकी ओर देखने लगना। पतिके कोपकरनेपर भौं, नेत्र, ठोड़ीनचानेकी चेष्टाकरके अवज्ञा करना। पतिकुछ बुराकहैं तौ हँसकर आँखें मीचलेना। पतिके गुण सुन उदास होना और उसके शत्रुकी स्तुतिमें प्रसन्न होना। पतिके कहनेपर ध्यान न देना। पतिके चूमने पर गर्दन ढलका देना और उसके आलिङ्गनसे घबराके भागना। पतिके संगसे क्लेशमानना और उसकी शय्या पर लेटतेही सोजाना।"

एकदिन रात्रिके समयै जब दुर्लभवर्द्धन महलोंमें आया तौ मंत्री खड्ग और अनङ्गलेखाको पलँग पर पड़े एकसाथ सोते पाया। कुचों तथा अन्यान्य अङ्गोंके फड़कनेसे विदित होता था कि, रतिक्रीड़ासे छुट्टी पाकर अभी सोये हैं। पहिले तो दु० वर्द्धनने खड्गके मारनेका इरादा किया परंतु कुछ शोच विचार उसके दामनपर निम्नस्थ अक्षर लिख छुपकेसे चला आयाः- "स्मरण रखना कि आज तुझको बध योग्य होनेपर भी छोड़ दिया है"। होनी अमिट है, थोड़ेही दिन पीछे राजाबालादित्य निर्वंश मरगये और कृतज्ञमंत्री खड्गने जोड़ तोड़ लगाकर दु० वर्द्धनको काश्मीरका राजा बना दिया। दुर्लभवर्द्धनसे काश्मीरका कर्कोटक राज्यवंशचला।

वाल्मीकिऋषि(आदि काव्य रामायणके कर्ता)-किसी भीलने एक तुरंतके जन्मे बालकको घासपर पड़ा देख उठालिया और निःसन्तान होनेके कारण पुत्रवत उसको पाला बड़े होनेपर उसका विवाह होगया जिससे कई बच्चेहुये और वह चिडी-मारका पेशाकरनेलगा। एकदिन अकस्मात उसकी कई ऋषियोंसे भेंट हुई जिन्होंने उसको ज्ञान उपदेश किया और उसने भी एकाग्र चित्तहो "राम" मन्त्रके जपनेमें मन लगाया। चित्तके स्थिर होनेसे उसकी बुद्धि निर्मल होगई और तभीसे उसका नाम वाल्मीकि जगतमें प्रसिद्ध हुआ। वाल्मीकि ऋषिने २४ हजार श्लोकोंमें उत्तरकाण्ड सहित रामायण रची, उत्तरकाण्डमें जो कुछ लिख दिया था उसीके अनुसार रामचंद्र महाराजने अंततक सब काम किये। वाल्मीकिजी मिथिलाके राजा जनकसे भाईका नाता मानते थे और राजा दशरथसे भी उनकी मित्रताथी, इसी कारण महाराज रामचंद्रने लोकापवादके भयसे सीताजीको त्यागकर उनके आश्रमके समीप छुड़वा दिया था, उन्होंने भी गर्भवती सीताको पुत्रीके समान रक्षाकी थी और उनके कुश व लव नामक जुड़िंहा पुत्रोंका पालन पोषण करके अनेक शास्त्रोंकी शिक्षा दी थी। जब रामचंद्र महाराजने नैमिषारण्यमें अश्वमेधयज्ञ किया तब वाल्मीकिऋषि भी सीताजीको तथा लव व कुश दोनों

बालकोंको साथ लेकर आये थे । सीताजीने तो उस अवसरपर देहत्याग किया था और कुश तथा लवके मुखसे वाल्मीकि ऋषिने स्वर सहित रामायण २० अध्याय प्रति दिनके हिसाबसे ३० ॥ दिनमें रामचंद्र महाराज को सुनवाई थी जिससे सन्तुष्ट होकर महाराजने उन दोनोंको १८ । १८ हजार अशर्फियें देनेकी आज्ञा की थी लेकिन् उन्होंने लेनेसे इनकार किया था और कहा था कि, हम ऋषि आश्रमपर वनमें रहनेवाले धनको लेकर क्या करेंगे । यज्ञके अन्तमें महाराज रामचंद्रने वाल्मीकि ऋषिके समझाने पर अपने दोनों पुत्रोंको अङ्गीकार किया था । वाल्मीकिऋषिकी जन्मभूमि प्रयागके समीप कड़ामानकपुरमें थी । पश्चात गंगातट विटूर जिला कानपुरमें इन्होंने अपना आश्रम नियत किया था जिसके निकट अनेक ऋषि मुनि बालबच्चों सहित पर्णशाला बनाकर रहतेथे । रामायणके लेखोंसे ज्ञातहोताहै कि " उससमय बिन्ध्या पर्वतके उत्तरोत्तर आर्य्यावर्तदेशमें पंजाब, मध्य, कौशल, मिथिला आदि मंडलोंके भिन्न २ आर्य्यराजे थे जिनकी अयोध्या, अवन्ती आदिराजधानियें सबप्रकारकी सम्पत्तियोंसे भरपूरथीं और देशके शेषभागमें जहां तहां ऋषि मुनियोंके आश्रम थे, विन्ध्यासे दक्षिणका देश पशुओं तथा गोंड, भील आदि असभ्य जातिके मनुष्योंका निवासस्थान होकर सर्वत्र जंगलसे ढका हुआ था । सबसे पहिले महाराज रामचंद्रहीने दक्षिण देशके असभ्य राक्षसादिकोंको जीतकर सर्वत्र हिंदोस्तानका एकछत्र राज्य किया । उस समय वेद शास्त्रमें अत्यंत कुशलता तथा स्त्री पुरुष दोनोंहीकी विद्यामें तत्परता और कला कौशलादिमें निपुणता पाईजातीहै और यहभी ज्ञान होताहै कि, उस समय आर्य्यपुरुष संस्कृतभाषण करते थे और असभ्यलोग कोई अन्यभाषा " ।

वास्तुपालतेजपाल—इन दोनों भाइयोंने आबूपर्वतपर देवलवाड़ेमें जैनियोंके तीर्थंकर नेमिनाथ तथा पार्श्वनाथका मंदिर स. ई. १२३६ में बनवायाथा । विमलशाहके मंदिरको छोड़कर कोई दूसरा जैनमंदिर इसके समान नहीं है देखो विमलशाह । कहितेहैं कि जिस स्थानपर यह मंदिर बनाहै वहांपर पहिले एक प्राचीनशिव मंदिरके खण्डेर थे । वास्तुपाल तेजपालने बड़ी कठिनता सहित सिरोही दर्बारसे उक्त स्थानको खरीदा, रुपयेभर जमीनका एक रुपया देना पड़ा । पश्चात् उक्त स्थानको सीधे कराने तथा भरवाने में ५६ लाख रुपये खर्च हुये और उसपर मंदिर बनवाने में १८ करोड़ रुपये उठे । मंदिर सुंदरता तथा कारीगरीमें निहायत उमदाहै, उसमें संगतराशीके १० हाथी हैं जिनपर मंदिर बनवानेवालोंकी तथा उनके चाचा आदि अन्य कुटुम्बियोंकी मूर्तियें सवारहैं । यह मंदिर १४ वर्षमें बनाथा । वास्तुपालतेजपाल दोनोंभाई अनहिल (पट्टन) के रहिनेवाले पोरवाल वैश्य थे और गुजरातके बघेलाराजाके यहां दीवानके ओहदेपर नियुक्तथे ।

विक्टोरिया कैसरे हिन्द (Victoria Empress of India)-आपका जन्म स० ई० १८१९ की साल २४ तारीख मईको एडवर्ड ड्युक आफ केन्टकी पत्नी मेरीलुयजाके गर्भसे हुआ था। जन्मसे एकवर्षके भीतरही आपके पिताका देहांत होगया था और जार्ज ४ तथा विलियम ४ नामक उनके दो बड़े भाईयोंने क्रमशः राज्य भोगकर स० ई० १८३८ की साल निःसन्तान मरकर इङ्गलैण्ड इत्यादिके राज्यका वारिस आपको बनाया था। छः वर्षकी उम्रसे आपको शिक्षा देना आरम्भ करदिया गयाथा और तबहीसे पार्लियामेन्टने आपके वार्षिक व्ययके लिये छः हजार पौन्ड नियत किये थे। वंशमें सिवाय आपके कोई दूसरा बालक न होनेके कारण प्रथमहीसे आशा की जाती थी कि, किसी दिन आपको तख्त मिलेगा और इसीलिये देशकी वर्तमानस्थितिके अनुसार आपको शिक्षा दीगई थी। ग्रीक, जर्मन, लैटिन तथा इटेलीकी भाषायें और गणितशास्त्र, नाचना, गाना, तीरन्दाजी, घोड़ेपरचढ़ना आदि आपको सिखाया गया था। स० ई० १८४० में श्रीमतीने राजरीतिके अनुसार पार्लियामेन्टसे आज्ञा लेकर अपने फुफेरे भाई प्रिन्स ऐल्वर्ट आफ सैक्सीको वर्ग ऐन्डगोथाके साथ शादी की (देखो ऐल्वर्ट)। दम्पत्तिमें अत्यंत प्रेमहुआ और प्रिन्सऐल्बर्ट बहुधा श्रीमतीको राजकाजमेंभी मदद देते थे। सन ५७ के गदरके बाद पार्लियामेन्टने हिंदोस्थानका राज्यभी ईस्ट इन्डिया कम्पनीके अधिकारसे निकालकर श्रीमतीको सौंपा। उन दिनों श्रीमतीको सब सुख प्राप्त थे। धन, प्रभुत्व, सुहाग, सन्तति, स्वास्थ, देशप्रियता इत्यादि सब कुछ प्राप्त था लेकिन् सुखके बाद दुःखकी बारी आई अर्थात् स० ई० १८६१ में राज्ञीपति ऐल्वर्टका देहांत होगया, यह दुःख श्रीमतीके शरीरके साथहीगया। पश्चात् ४ पुत्र तथा ५ पुत्रियोंमेंसे दोपुत्र १ पुत्री तथा कई पौत्र पौत्रियोंका दुःख श्रीमतीको सहना पड़ा। स० ई० १८७७ में श्रीमतीने कैसरेहिन्द (Empress of India) का खिताब धारण किया। कैसरेहिन्दका राज्य पृथ्वीके प्रत्येक भागमें इतना बढ़गया था कि "उसपर सूर्य कभी नहीं छिपताथा"। आपके बृहत् राज्यका प्रत्येक स्थान रेलकी सड़क, भापसे चलनेवाले जहाज तक बिजलीके तारसे जोड़ागयाथा। यूरोप, अमेरिका, एशिया, अफरीका, आष्ट्रेलिया तथा अन्यान्य द्वीपोंमें सबही जगह आपका राज्य होगयाथा जिसके चिरस्थाई रहनेकी सबप्रकार पूरण आशाहै। विद्या, शिल्प तथा व्यापारकी असाधारण उन्नति आपके समयमें हुई। प्रजागणके रहिन सहिनमें पहिलेकी अपेक्षा जमीन आसमानका फर्क पड़गया। बृटिशगवर्नमेन्टकी सेना आपके वक्तमें ७॥ लाख थी। आप बड़ी दयामयीथीं,

सेनापतियों तथा अन्यान्य कर्मचारियोंको आपसे बड़ी उत्तेजना मिलती थी और प्रजाके दुःखपर आप आँसू बहातीथीं। लेडीडफरिनने आपहीसे उत्तेजना पाकर हिंदोस्थानमें जनाना हस्पताल खोलेथे (देखोडफरन)। स० ई० १९०१ में अशक्ति बढजानेसे श्रीमतीका देहांत हुआ, ३५॥ हजार पौन्ड अन्त्येष्टिक्रियामें लगे, पतिकी समाधिके पास समाधिपाई, ज्येष्ठ पुत्र एडवर्ड सप्तम उत्तराधिकारी हुये और राज्यभरमें आपके,स्मार्कचिह्न स्थापित हुये।श्रीमतीके समयमें जितने युद्ध हुये उनमें बृटिशगवर्नमेन्टकी पराजय बहुत कमहुई। इंग्लैंडमें राजकोशका धन प्रजाका समझा जाताहै, इसी प्रथाके अनुसार श्रीमतीको ३७१८०० पौन्ड वार्षिक वेतन मिलताथा और राज्यघरानेके अन्य पुरुषोंकाभी इसीप्रकार वेतन नियतथा। टेलीफोन, माइक्रोफॉन, गैसकी रोशनी, गैसके पंखे. गैससे चलनेवाली गाडियें तथा फोनोग्राफ़ आदिकाभी आविष्कार आपहीके समयमें हुआथा जिससे पृथ्वीकी काया पलट होगई। आपका शासनकाल असाधारण उन्नतिका समय था।

विक्रमादित्यशकारी (सम्वतकार)-यह धारानगरीके राजा धारके दौहित्रथे, भर्तृहरि इनके बड़े भाई थे और इनके पिताकानाम गंधर्वसेन था। धारानरेश अपुत्रथे एवं उन्होंने अपने दौहित्रोंको पालकर राजकी शिक्षा दिलवाई थी। धारा नरेशके मृत्युको प्राप्त होनेपर भर्तृहरि राजा हुये और विक्रमादित्य राजमंत्री। भर्तृहरि स्त्रैण थे, राजकाजकी ओर कुछ ध्यान नहीं देते थे विक्रमादित्यने उनको जब सचेत करना चाहा तो रानीकी कुमंत्रणा मान उन्होंने विक्रमका अपने पास आना भी बन्दकर दिया। इसप्रकार अपमानित हो विक्रमादित्य देशाटनको चलेगये और विविध जातीय शिल्पशिक्षा तथा राजनीति सीखते फिरे। उन्हीं दिनों ढाकके दक्षिणभागमें जाकर विक्रमपुर बसाया था। इससे थोड़ेही दिनों पीछे राजा भर्तृहरि योगी होगये। यह समाचार पाकर विक्रमादित्य लौटे और राज्यसिंहासनपर बैठकर उज्जैनको उन्होंने अपनी राजधानी बनाया। फिर तो महाराज विक्रमने बंगाल, कूचबिहार, गुजरात, सोमनाथ तथा उड़ीसा प्रभृति नानादेशोंको जीतलिया और दिल्ली, मगध तथा कन्नौजके राजाओंको परास्त करके अपने आधीन बनाया तथा शक, यून म्लेच्छ जातियोंको स्वदेशसे बाहर निकालकर शकारी नाम प्राप्तकिया और अपने नामका सम्वत चलाया जो अबतक जारी है। अन्तमें प्रतिष्ठानपुर (प्रयागके समीप) के राजा शालिवाहन से विक्रमका युद्ध ठना जिसमें वृद्ध राजा विक्रमादित्य मारेगये। छत्रधारी राजा होनेपर भी विक्रमादित्य सामान्य शय्यापर सोते थे, मट्टीके बर्तनोंमें खान पान करते थे, शिप्रानदीसे जल भर लाते थे,

प्रजाका हाल जाननेके लिये रात्रिमें वेश बदलकर घूमा करते थे और ऐसे न्यायसे शासन करते थे कि, जिससे उनकी विमल कीर्ति आजतक प्रकाशित है। राजा विक्रम बड़े वीर, साहसी, विद्वान्, स्वरूपवान्, दानी, चतुर तथा धार्मिक नरेशथे। प्राचीन अयोध्या नगरीका उन्होंने जीर्णोद्धार किया था। पुराणोंसे पता लगाकर अयोध्या, मथुरा, काशी आदि पवित्र स्थानोंमें तीर्थस्थापन किये थे और बहुतसे मन्दिर बनवायेथे जो महमूदगजनवी तथा शहाबुद्दीन मुहम्मदगोरी आदि बादशाहोंके द्वारा नष्ट किये गये। उन्होंने कालिदास प्रथमको अध्यक्ष नियतकर्के पंडितोंकी एकसभाके द्वारा प्राचीन ग्रंथोंको शुद्ध श्रेणीबद्ध कराया था। सिंहासन बत्तीसी आदि ग्रंथोंमें लेख है कि इन्द्रने कञ्चन की ढली हुई ३२ पुतलियोंका सिंहासन राजा विक्रमको दिया था और कल्हण कृत कश्मीर राज तरङ्गिणीके अनुसार उक्त सिंहासन महाराजा काश्मीरके यहांसे विक्रमको प्राप्त हुआ था। इससे प्रतीत होताहै कि कश्मीर नरेशोंको पूर्वकालमें इन्द्र कहते थे। आयोध्यामें रघुवंशियोंकी जन्मभूमिपर रामकूट नामक मन्दिर, मथुरामें श्रीकृष्णकी जन्मभूमिपर कृष्णकूट नामक मन्दिर और बनारसमें बिश्वेश्वरनाथका मन्दिर जिनको बाबर तथा औरंगजेब बादशाहोंने विध्वंस किया महाराज विक्रमही के बनवाये हुये थे। बैताल पचीसी तथा सिंहासन बत्तीसीकी कहानियें इन्हींके विषयमें हैं।

विक्रमादित्य हर्ष (उज्जैननरेश)-यह विक्रम शकारीके वंशमें राजा श्रीहर्षके पुत्रथे। स० ई० ५१५ में उज्जैनकी गद्दीपर बैठे हिंदोस्थानके अनेक राजे इनके आधीन थे, इस कारण यह छत्रधारी राजा थे।

यह बडे विद्वान, दानशील, गुणग्राही तथा स्वच्छंद गामी नरेश थे। पंडित मातृ गुप्तको इन्हींने कश्मीर मण्डलका राज्य दिया था (देखो मातृ गुप्त)। नवरत्न नामक ९ प्रसिद्ध पंडित इन्हींके दर्बारमें थे। उनके नाम कालिदास, वररुचि, शङ्कु, बेतालभट्ट, धन्वन्तरि, घटकर्पार, क्षपणक, वराहमिहर और दण्डीथे। इनके समयमें पदार्थ, साहित्य, काव्य, गणित तथा शिल्पादि विद्याओंकी असाधारण उन्नति हुई थी। नग्रद्वार नामक चित्रकारने इन्हींके राज्य दर्बारको सुशोभित करनेके लिये जगत्की प्रसिद्ध सुंदरियोंके चित्र खींचे थे। विक्रम हर्षने एक भूगोलका ग्रंथ रचा था, यह शिवपूजकथे परंतु बौद्धों तथा ब्राह्मणोंका समान आदर करते थे। इनके पश्चात् शिलादित्य प्रताप शील इनके पुत्रको शत्रुओंने राजरहित करदियाथा लेकिन कश्मीर नरेश प्रवरसेनने मदद देकर इनको फिर उज्जैनकी गद्दीपर बिठलाया

था और विक्रम शकारिको निज पूर्वजोंका दिया हुआ ३२ पुतलियोंका सिंहासन उज्जैनसे कश्मीरको लेगया था।

विक्रमसाह (उड़छानरेश)-देखो विजयबहादुर।

विग्रहराज-अजमेरके राजा अरण्यराज इनके पिताथे और अन्तिमहिन्दू राजा पृथ्वीराज चौहानके बाप सोमेश्वरराज इनके भाईथे। इनके विषयमें दिल्लीशिवालकपर अंकित शिलालेखका आशय यहहै कि, "राजा विग्रहराजने हिमालय और विन्ध्याके बीचका देश जीतकर कईदफे म्लेछोंको नष्ट कियाथा और इस देशको आर्य्यावर्त बनायाथा"।

विचित्र वीर्य्य-यह चंद्रवंशी राजा शान्तनुके पुत्र थे। अपने बड़े भाई चित्राङ्गदके निःसन्तान मरनेपर हस्तिनापुरकी गद्दीपर बैठे काशी नरेशकी अम्बिका तथा अम्बालिका नामक दो राजकुमारियों से इनका विवाह हुआ था विवाहसे ९ वर्ष बाद इनका देहांत होगया। वंश नष्ट होता देख इनकी माता सत्यवतीने अपने सौतेले पुत्र भीष्मकी सम्मतिके अनुसार इनकी विधवा रानियोंमें व्यासजीसे गर्भाधान कराया जिससे धृतराष्ट्र तथा पाण्डु दो पुत्र जन्मे।

विजयबहादुर (भाषाकवि)-विक्रमसाहि बुंदेला चरखारीनरेशका उपनाम विजयबहादुर था। इन्होंने विक्रमाबिरदावली तथा विक्रमसतसई नामक ग्रंथ भाषापद्यमें रचेथे। स० ई० १७८५ में जन्मे, स० ई० १८२८ में मरे। भाषा-कवि बेताल इनके दर्बारका कवीश्वरथा।

विट्ठलनाथ गोस्वामी-गोकुलस्थसम्प्रदायके आचार्य्य महाप्रभू वल्लभाचार्यजी इनके पिताथे। वि० सं० १५७२ में इनका जन्म चिनार जि० मिर्जापुरमें हुआथा यह बड़े विद्वान् महात्मा थे। Catelogus Catalogorumके अनुसार इनके बनाये ४९ संस्कृत ग्रंथहैं। भाषा कविता यह नहीं करतेथे परंतु भाषाकाव्यका प्रोत्साहन इनके द्वारा बहुतकुछ हुआ। इनके मुख्य शिष्य २५२ थे जिनका चरित्र इनके पुत्र गोकुलनाथजी ने "२५२वैष्णवभक्तोंकी वार्ता" नामक ग्रंथमें कियाहै। इनशिष्योंमेंसे गोविन्ददास, छीतः स्वामी, चतुर्भुजदास और नंददास भाषाके प्रसिद्ध कवीश्वरथे। गो० विट्ठलनाथजीने इनचारोंको तथा अपने पिताके सूरदासादि ४ शिष्योंको अष्टछापकी उपाधि दीथी जो अबतक सर्वमान्यहै। श्रीनाथजीके मंदिरका वैभव इनके समयमें बहुत कुछ बढ़ा। दोविवाहोंसे इनके ७ पुत्र थे जिन्मेंसे प्रत्येकके भागमें श्रीवल्लभाचार्य्यके सात मुख्यठाकुरद्वारोंमेंसे १। १ आया और श्रीनाथजीके मंदिरपर सबका अधिकार रहा। इसप्रकार गोकुलस्थियोंकी ७ गद्दियें स्थापित हुई

जिनमेंसे मेवाड़में ३, कोटामें १, कामवनमें १, और गोकुलमें १ है। प्रत्येक गद्दीका खर्च अबतक ५०। ६० हजार रुपया वार्षिकहै, इनगद्दियोंके मंदिरोंमें पहिलेतौ पूजासेवाके समय सबलोग केवल संस्कृतही बोलतेथे अब प्रायः व्रज भाषा बोलतेहैं विधर्मियोंका नामतक नहीं लियाजाता, गाजीपुरको गुलाबका गाँव, मिर्जापुरको मिर्चका गाँव, मुसलमानोंको बड़ीजाति और ईसाइयोंको टोपीवाले कहितेहैं। गो० विट्ठलनाथजी बड़े क्षमाधारी और सहन शील थे, वि० सं० १६३१ में परलोकगामी हुये। कृष्णदास तथा छीतः स्वामीके सम्बंधमें इनका कुछ विशेष वर्णन है सो देखो।

विद्यारण्यस्वामी--इन्होंने वेदाँत शास्त्रका पंचदशीनामकग्रंथ १५ प्रकरणमें निर्माणकिया था। ये सन्यासीथे, पूर्वनाम इनका सायणाचार्यथा सो देखो।

विदुर-(प्रसिद्धनीतिज्ञ)--चंद्रवंशी राजा विचित्रवीर्यकी शूद्रादासीके उदरसे इनका जन्म हुआ। यह बड़े ज्ञानी, विद्वान् और चतुर हुये, महाराज पांडु तथा धृतराष्ट्रने क्रमशः इनको अपना मंत्री नियत किया। महाभारतके युद्धमें पांडवोंकी तरफसे लड़े. अंतमें महाराज धृतराष्ट्रको नीति सुनाई और उन्हींके साथ वनको चलेगये और वहाँ अग्निमें जलकर मरे। श्रीकृष्णजीको इनसे बड़ा प्रेमथा।

विप्रगुप्त--ब्रह्मगुप्तज्योतिषीका दूसरा नाम विप्रगुप्तहै (देखो ब्रह्मगुप्त)॥

विवेकानन्दस्वामी--कलकत्तेमें एक नामी वकीलके घर जन्मेथे। पूर्वनाम इनका नरेन्द्रनाथथा, अंग्रेजीमें बी. ए. पासथे और रामकृष्ण परमहंसके शिष्य होगयेथे। गुरुके समाधिस्थहोनेके पीछे भारतके अनेक स्थलोंमें भ्रमण करतेहुये ये मद्रासमें गये, वहाँ सर्व मिलकर इनसे संसारके समस्त धर्मोंकी पार्लियामेंटमें जो शिकागो (अमेरिका) में होनेवालीथी हिंदूधर्मका प्रतिनिधिबनाकर जानेका अनुरोध किया जिसको इन्होंने स्वीकार किया। इनका विवाह नहीं हुआ था, ब्रह्मचर्य अखंडथा काव्यसंगीत वेदादि विद्याओंके ज्ञाताथे और नाचना तसवीरें व नक्शे बनाना जानतेथे। ढंगचाल दिव्यपुरुषोंकीसी और सूरत लुभानेवालीथी। अमेरिका पहुँचनेपर वहाँके सर्वसाधारणका अनुराग इनकी ओर बहुत कुछबढा, लोग अहर निश इनको घेरे रहतेथे, पार्लियामेंटमें इनके लिकचर सर्वोत्तम ठहिराये गये, वहांके समाचार पत्रोंने भी बड़ी प्रशंसा की, पक्केसे पक्के क्रिश्चियन भी यह विना कहे न रुकसके कि " विवेकानन्द मनुष्यमंडलीमें राजाके सदृशहैं।" पार्लियामेंट हो चुकनेपर अमेरिकन लोगोंने स्वामीको आग्रहपूर्वक ठहिराया, शीघ्रही इनके प्रेमियोंकी एक मंडलीका संगठन हुआ और स्वामीने अमेरिकाके अनेक नगरोंमें भ्रमणकरके वेदवेदाँतका उपदेश किया। पश्चात् न्यूया

केमें ठहरकर वेदांत फिलासोफी तथा भगवद्गीता आदि ग्रंथोंकी शिक्षाके लिये एक स्कूल जारी किया जिसमें छात्रोंकी योग्यताके अनुसार ४ दर्जे नियतकिये, इस स्कूलमें शिक्षा ग्रहणकरनेवालोंकी इतनी भीड़ हुई कि स्थानका अभाव होगया जो लोग प्रथम प्रेमी बनेथे उन्होंने सबसे पहिले स्वामीजीके शिष्योंकी सूची में नाम लिखाया, फिर पीछे तो हजारों स्त्री पुरुष विश्वास लाये। २ वर्षपर्यंत इसतरह अमेरिकामें रहिकर स्वामीने निरंतर परिश्रम किया। वेदांत स्कूलमें शिक्षा देने, धर्मोपदेश करने, दुनियाके अनेक भागोंसे आये पत्रोंका उत्तर देने, जिज्ञासुओंका भ्रमोच्छेदन करने, और विश्वासियोंके लिये धर्मसम्बंधी सरल पुस्तकें रचनेमें रातदिन बीतताथा। स्वामी योगकी शिक्षाभी देतेथे, प्रसिद्ध डाक्टर स्ट्रीट साहब योगी होकर ज्ञानानन्दनामको प्राप्त हुयेथे। पश्चात् स्वामी इङ्गलैंडको पधारे और लन्डनमें ठहिरे.यहांभी शिक्षा और उपदेशोंकी वैसीही धूम रही जैसी अमेरिकामें हुईथी। सब श्रेणीके मनुष्य धाये और वैदिक मतके ग्रंथोंका अंग्रेजी अनुवाद ढूंढ २कर पढ़ने लगे।बड़े २ पादरी तथा रईसोंने लिकचर सुनकर स्वामीकी प्रशंसा की. अंग्रेजी अखबारोंके कालमके कालम स्वामीकी प्रशंसा और करतूतसे भरे हुये निकलने लगे।लन्डनके डेलीक्रानीकेलने छापाथा कि "विवेकानन्द स्वामी नामक महाशय जो भारतके अत्यंत प्राचीन धर्मका उपदेश करने शिकागो(अमेरिका) कीधर्मसम्बंधी महासभामें जाकर बड़ा नाम पाचुके हैं आज कल इङ्गलैंडमें ठहिरे हैं और आगामी सितम्बरमें भारतको लौटेंगे। इस महत्पुरुषकी स्थिर ढंगचाल. प्रतिष्ठित सूरत, सरलतासे गूढ़ ब्रह्मविद्याके प्रकट करनेकी शक्ति और अंग्रेजी भाषा पारङ्गत होनेकी योग्यताने अमेरिकन लोगोंसे ऐसा असाधारण आदर सत्कार स्वयंही करालिया ..."। पश्चात् स्वामी हिंदोस्तानको लौटे और कोलम्बो (लंका) में जहाजसे उतरे, स्वदेशियोंने स्वामीके आगमन पर देशहितका परिचय दिया। फिर स्वामी हिमालय पर्वतांतर्गत अनेक स्थलों तथा पंजाब में भ्रमणकरके अमेरिकाको फिर चलेगये। पैरिसफ्रांस की प्रदर्शिनीमें विद्यमान रहिकर स्वामीने अनेक लिकचर दियेथे। पैरिससे कान्स्टेन्टीनोपिल होते हुये स्वामी बम्बई को पधारे और वहांसे कलकत्ते पहुँचकर सन् १९०२ की साल सिधारगये।स्वामीके निरंतर उद्योग से न्युयार्क, ब्रुकलिन, कैलीफोरनिया, सैनफ्रान्सिस्को, शिकागो तथा लन्डन इत्यादि नगरोंमें वेदांतशास्त्रके स्कूल जारी हुये जो चलते रहेंगे। कैलीफोरनियामें एक शान्ति आश्रमभी खोलाथा तथा वहां एक मंदिर बनवानेका इरादा कियाथा परंतु कालकी गति कराल है। अमेरिकामें स्वामीके रोपण किये हुये धर्मोपवनका कार्य अब गुरुभाई अभयानन्द फरासीस तथा तुरीयानन्द रूसी सम्पादन करतेहैं। मुर्शिदाबादमें एक अनाथालय, बनारसमें १ अतिथ्यालय, अलमोड़ा इत्यादि स्थानोंमें वेदांतशिक्षाके केंद्र और हरिद्वारके समीप कनखल व हृषीकेश नामक ग्रामोंमें रोगि

साधुओंको अन्नवस्त्र तथा औषधि देनेके लिये "रामकृष्ण सेवाश्रम" स्वामीजीके उद्योगसे खुले थे। स्वामीके अमेरिकन तथा फिरंगी शिष्य जो गुरुभाई या गुरु बहिन कहिलाते हैं हिंदुओंकी तरहैं नाम धारण करतेहैं, तिलक लगातेहैं,भक्ष्या भक्ष्यका ख्याल रखकर चौकेमें भोजन करतेहैं, धोती बांधते और वेद शास्त्र तथा उपनिषदोंके वाक्योंको मानतेहैं। स्वामीने पुराणोंकी शिक्षा नहीं की। लोग आक्षेप करतेहैं कि,स्वामीकी शिक्षामें बौद्ध मतके सिद्धांतोंका सम्मिलन है परंतु स्वामीने स्वयं एकदफे अपने व्याख्यानमें कहाथा कि "मैं बौद्ध नहीं हूं लेकिन महात्मा बुद्धसे विमुख भी नहीं जिनको हिंदूलोग विष्णुका अवतार मानकर बुद्ध भगवान् कहिते हैं"।

विमलशाह–इन्होंने आबू पर्वतपर देवलवाड़ेमें जैनियोंके प्रथम तीर्थंकर ऋषभ देवजीका मंदिर बनवाया था जो वि० सं०१०८८ की साल बनकर तैयार हुआ। ये मंदिर संगममरका बना हुआ है। लोग कहिते हैं कि आगराके ताज महिलको छोड़कर भारत वर्षमें कोई दूसरी इमारत इसके समान नहींहै। मंदिरके आगे एक मंडपमें प्रायः ४ फीट ऊंचे संगममरके ९ हाथी हैं जिनपर विमल शाह तथा उसके वंशके लोगोंकी मूर्तियें सवार हैं। विमल शाहकी मूर्तिको मुसल्मानोंके वक्तमें खंडित करदियाथा, वर्तमान मूर्ति चिकनी मट्टी की बनी हुई है। उक्त हाथियोंपर नकाशीकाकाम है, पत्थर काटकर विचित्र फूल पत्तियें निकाली गई हैं विमलशाह गुजरातके रहिनेवाले जैनी व्यापारी बड़े धनाढ्य थे।

विष्णुशर्मा (पंचतंत्रके रचयिता)–यह नीतिज्ञ ब्राह्मण स. ई. की छठी शताब्दीमें दक्षिणदेशमें हुएथे। इनका रचा ग्रंथ पंचतंत्र राजनीतिसे भरपूर है। पंचतंत्रका फारसी अनुवाद ईरानके बादशाह नौशेरवाँने करायाथा। फारसी से अरबीमें और अरबीसे प्रायः स० ई० १०८० की साल ग्रीक भाषामें इसका अनुवाद हुआ। ग्रीकसे लैटिनमें और लैटिनसे हेबरुभाषामें स० ई० १२५०.के लगभग इसका अनुवाद कियागया। पश्चात् सब फिरङ्गी मुलकोंने अपनी २ भाषोंमें इसका अनुवाद करलिया। अनवारसुहेली कलैलादमना और हितोपदेश इसीके फारसी, अरबी तथा संस्कृतअनुवादोंके नामहैं।

विश्वनाथसिंह महाराजारीवाँ (भाषाकवि)–आपके पिता महाराजा जयसिंह बघेलेने एक बृहत् ग्रंथ "हरिचरितामृत" नामक भाषापद्य में रचाथा जिसमें विष्णुके २३ अवतारोंकी कथा वर्णितहै। महाराजा विश्वनाथ सिंह भाषाके सुकविहोनेके सिवाय संस्कृत विद्याके भी अपूर्व विद्वानथे तथा ग्रंथ रचनामें सिद्धहस्तथे। आप कवियोंके कल्पतरुथे और आपके आश्रयसे उत्तमोत्तम ग्रंथ रचे गयेथे। निम्नस्थग्रंथ आपके रचेहुयेहैं:–

सर्वसंग्रह (संस्कृत), कबीरके बीजक तथा तुलसीकृतविनय पत्रिका का तिलक, रामचंद्रकी सवारी, परमतत्त्वप्रकाश, आनन्दरघुनंदन नाटक, रिवाई गद्यमें धनुर्विद्या का तिलक, अष्टजामका आह्निक (वि० सं० १८८१), गोस्वामी जमुनादास उपमान ब्रजजीवन कृतगीत रघुनन्दन पर "प्रमाणिका" नामक टीका (वि० सं० १९०१)।आपके पुत्र जगत् प्रसिद्ध महाराजा रघुराज सिंहदेव स० ई० १८३४ की साल आपके उत्तराधिकारी हुये (सो देखो)। महाराज विश्वनाथसिंहने स० ई० १८१३ से १८३४ तक राज्यभोगा।

बिसाहूराम–(भाषाकाव्य कृष्णायणके कर्ता) इनका उपनाम रसिक शिरोमणि दासहै। जन्म इनका स० ई० १८६८ की साल रायपुर (मध्य प्रदेश) के किसी ग्राममें बंखारी पोतदारके घर हुआ। सिमगा जि० रायपुरके वरनेक्यूलर स्कूलमें अब (स० ई० १९०३) में हेडमास्टरहैं। बचपनही से हरिकथा तथा कीर्तनके प्रेमीहैं। तुलसीकृत रामायणके ढंगपर इन्होंने निम्नस्थ ७ काण्डों में कृष्णायण रची है:-

बालकाण्ड, रहस्यकाण्ड, मथुराकाण्ड, मंगलकाण्ड, पाण्डवकाण्ड, उद्धवकाण्ड और उत्तरकाण्ड।

यद्यपि भाषा पद्यमें श्रीकृष्णचंद्रकी लीलाओंके निरूपक ब्रजविलासादि अनेक ग्रंथ हैं लेकिन कृष्णायण अपने ढंगकी निराली होकर उन सबसे अधिक आदरणीयहै।

बिस्मार्क शाहिजादा (Prince Bismark)–यह प्रुशिया अर्थात जर्मनीराज्यके मुख्य मंत्रीथे। बर्लिनके विश्वविद्यालयमें इन्होंने विद्या पढीथी और पश्चात फ्रांस तथा आस्ट्रियामें जर्मनराज्यकी तरफसे राजदूत रहेथे।स.ई.१८६१में जर्मनीके महाराजाने इनको विदेशी विभागका मंत्री नियत किया और स.ई.१८६५में कौन्टकी पद्वी इनको दी। आस्ट्रिया तथा जर्मनीके राज्योंमें जो घोर युद्ध हुआथा उसमें बिस्मार्कने बड़े २ साहसपूर्ण काम करके असाधारण उपाधि प्रिन्स (शाहिजादा) की पाई। प्रिन्स बिस्मार्क बड़े चतुर और दूरदर्शी थे,महाराजा जर्मनी सदैव इनकी सम्मतिसे काम करतेथे।इनका कथनहै कि आजकलके राज्यसम्बन्धी झगड़े बातोंसे नहीं वरन् खड्गसे फैसलकरनाचाहिये। स. ई. १८१५ में जन्मे।

विश्वामित्र (ब्रह्मर्षि)–वाल्मीकीय रामायण बालकाण्ड सर्ग ५१–६५ में लिखाहै कि, प्रजापतिके पुत्र कुश हुये, कुशके पुत्र कुशनाभ, कुशनाभके पुत्र कन्नौजके राजा गाधि और राजागाधिके पुत्र विश्वामित्र हुये। राजा विश्वामित्र बहुत दिनोंतक बड़े धर्म्म तथा न्यायसे राज्य करनेके बाद एकदफे देश देशान्तरोंमें दौरा करते हुये वशिष्ठजीके आश्रमपर पहुंचे। वशिष्ठजीने सेना सहित उन-

की दावत की । चलते समय राजाने वशिष्ठजीसे नन्दिनीगौ मांगी जिसका त्याग करना उनको स्वीकार न हुआ निदान गौको बलपूर्वक छीन लेनेकी राजाने आज्ञा दी किसीतरह न मानने पर वशिष्ठजीने ब्रह्मबलसे राजाकी सब सेना तथा उसके १०० पुत्र नष्टकर दिये। परास्त होकर राजाने अपने एक पुत्रको राज्य सौंपदिया और आप तप करणार्थ हिमालयके समीप चलेगये वहां रहकर साङ्गोपाङ्ग उपनिषद्, रहस्य सहित धनुर्वेद और देव,दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षसादिकोंकी युक्तियें तथा उनके अस्त्र शस्त्र चलाने की रीतियोंका पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया। ऐसा होनेपर राजा विश्वामित्र को अहंकार हुआ एवं वशिष्ठजीके आश्रम पर जाय उसके नष्ट करनेके लिये अस्त्र शस्त्र बरसाने आरम्भ किये लेकिन वशिष्ठजीने एक ब्रह्म दण्डहीके द्वारा उन सबका निवारण किया और राजाको परास्त किया। यह देख राजाने ब्रह्मबलकी अपेक्षा क्षत्रिय बलको तुच्छ जाना और रानी सहित दक्षिण दिशाकी ओर तप करने पधारे जिसके प्रभावसे राजर्षि पद पाया और हविष्यन्द, मधुष्यन्दादि अनेक महारथी पुत्र उत्पन्न किये। उन्हीं दिनों वशिष्ठजीसे सूर्यवंशी राजा त्रिशंकु कोई ऐसी यज्ञ क्रिया करानेका प्रार्थी हुआ कि जिससे वह सशरीरस्वर्गमें चलाजाय। वशिष्ठजीने ऐसा होना असम्भव बतलाया एवं उसने वशिष्ठजीके १०० पुत्रोंके पास जाकर, जो दक्षिणमें तप करते थे, अपनी इच्छा प्रकट की। इस बातसे पिताके वचनका अनादर होता जान वशिष्ठ पुत्रोंने त्रिशंकु को चांडाल होजानेका शापदिया। ऐसी दशामें त्रिशंकुने ऋषि विश्वामित्रकी शरण गही, विश्वामित्रको उसपर दया आगई निदान उन्होंने वशिष्ठपुत्रोंको डोम होजानेका शाप दिया और गुरुशापित त्रिशंकुका स्वर्गमें स्थान पाना असम्भव जान दक्षिण दिशामें एक नया स्वर्ग स्थापन किया और उसके लिये नये सप्त ऋषि तथा अनेक छोटे २ नक्षत्रों सहित अश्विन्यादि २७ नक्षत्र कायम किये और उन सबके बीच नीचे को शिर किये हुये एक देदीप्यमान त्रिशंकु नाम नक्षत्र रूप ठहिरा दिया। त्रिशंकु अपने साथके अन्य नक्षत्रों सहित जो उसके पीछे घूमतेहैं दक्षिण दिशामें स्थितहै और ज्योतिषशास्त्र वर्णित नक्षत्रोंके विचरनेके "वैश्वानर" नामक सनातन मार्गसे बाहरहै। ऋषि विश्वामित्रके तेजसे डरकर सबने त्रिशंकु आदि उनके स्थापन किये हुये नक्षत्रोंको स्वीकार कियाथा। पश्चात् विश्वामित्रने साथके सब ऋषियों मुनियों सहित पुष्करमें जाकर तप किया। उन्हीं दिनों सूर्यवंशी राजा अम्बरीषने यज्ञ करना आरम्भ किया और उसमें बलिदानदेनेको वह ऋचीकमुनिसे मोल लिये हुये उनके शुनःशेफनामक मँझले पुत्रको साथ लियहुये पुष्करमें आया। शुनश्शेफने दौड़कर ऋषि विश्वामित्रके चरण पकड़ लिये और शरण चाही निदान ऋषि विश्वामित्रने मधुष्यन्दादि अपने पुत्रोंमेंसे किसी एकको राजाके साथ जाकर शुनश्शेफकी जान बचानेकी आज्ञा दी। ऋषिपुत्रोंने पिताकी आज्ञाका निरादर किया

जिससे अप्रसन्न होकर विश्वामित्रने वशिष्ठ पुत्रोंकी सदृश निजपुत्रोंकोभी डोम होजानेका शाप दिया और शुनश्शेफको ऐसी युक्ति बतलाई जिससे राजाक तो यज्ञ पूरा होगया और उसकेभी प्राण बंचगये । पश्चात् मेनका नामक अप्सराने पुष्करमें पहुंचकर विश्वामित्रको कामसे मोहित किया और शकुन्तलानामक कन्या उत्पन्न कराई मदन मद घटनेपर अपना तप क्षीण होता जान विश्वामित्र पुष्कर से चलकर उत्तराखण्डमें कौशिकी नदीके तीर पहुँच ब्रह्मचर्य्य सहित ब्रह्मर्षि बननेके लिये पुनः तप करने लगे । कुछदिनों बाद रम्भा अप्सराने जाकर उनको मोहित करना चाहा लेकिन् बुद्धिमानों (देवताओं) की चाल समझे हुये ऋषिविश्वामित्रने क्रोधमें आकर उसको फटकार दिया । फिर ऋषिविश्वामित्र यहांसे भी चल दिये और पूर्व दिशामें जाय घोर तप करने लगे और क्रोधको तपकी क्षीणताका कारण जान भोजन करना, बोलना तथा सांसतक लेना बन्दकर दिया और अनेकविघ्न उपस्थित होनेपरभी अन्तःकरणमें क्रोध न आने दिया । ऐसाकरनेसे ब्रह्मर्षि पद तथा बड़ी आयुष उनको प्राप्त हुई और वशिष्ठ जीसे भी मेल होगया । महर्षिविश्वामित्र वेदविद्या वायव्यकला, धनुर्वेद तथा सङ्गीत शास्त्रके पूर्ण ज्ञाताहोकर बड़े वीर्यवान् थे और बुद्धि उनकी ऐसी निर्मल थी कि कोई काम उनके लिये कठिन नहीं था। सर्वत्र पृथ्वीपर उन्होंने भ्रमण किया था और रामलक्ष्मणको धनुर्विद्या सिखाईथी । सहस्त्रोंऋषि मुनि तथा राजे महाराजे उनको शीशनवातेथे।अनेकतरहके फल फूल तथा अन्नभी उन्होंने प्रकट कियेथे और ऋग्वेदके तीसरे मण्डलकी ऋचाओंको संग्रह कियाथा ।

विरजानन्द सरस्वती (प्रज्ञाचक्षु)—यह पंजाबप्रदेशान्तर्गत करतारपुरके गंगापुरनामक ग्राममें नारायणदास सारस्वत ब्राह्मणके घर जन्मेथे । ५ वर्षकी उम्रमें चेचक निकलनेसे अन्धे होगये थे, ११ वर्षकी उम्रतक पिताने इनको सारस्वतचंद्रिका पढाईथी । १२ वर्षकी उम्रमें इनके मातापिताका देहांत होगया और १५ वर्षकी उम्रमें भावजसे दुःखित हो घरसे निकल हृषीकेश पहुँचे । वहाँ तीनवर्षपर्य्यंत रहकर इन्होंने अपने दग्ध हृदयको शान्त किया और पश्चात् हरिद्वारमें आकर पूर्णानन्दसरस्वतीसे सन्यासधर्ममें दीक्षा ली और विरजानन्द सरस्वती नाम पाया । हरिद्वारमें कुछकालतक ठहरकर स्वामीजीने विद्यार्थियोंको पढाया और स्वयं मध्य तथा सिद्धांतकौमुदीका विचार किया। हरिद्वारसे स्वामीजी गंगाके किनारे २ बनारसको गये और वहाँ रहकर उन्होंने मनोरमा, शेखर, न्याय तथा वेदान्तके ग्रन्थ पढे और प्रज्ञाचक्षु उपाधि पाई बनारससे चलकर गया होतेहुये कलकत्तागये और वहाँसे लौट कर सोरों जिलो एटामें कुछदिनोंके लिये ठहिरे । पश्चात् अलवर, भरतपुर, मुर्सान इत्यादिमें बिचरते हुये स्वामीजी वि० सं० १८९२ की साल मथुरा पहुँचे और वहाँ पाठ-

शाला स्थापन करके अष्टाध्यायी, महाभाष्य, निरुक्त, निघण्टु आदिग्रंथोंके पठनपाठनमें आयु बिताई । वि० सं० १९१७ में स्वामी दयानन्दसरस्वती इनके पास विशेषविद्या पढ़ने आए, कईवर्ष बाद जब शिक्षा सम्पूर्ण हुई तो सुफलमें उनसे स्वामी विरजानन्दजीने यह बात चाही कि,स्वार्थपरता तथा मूर्खताफैला-ने वाले सम्प्रदाईग्रंथोंकी जड़पर कुलहाड़ीफेरकर ऋषिकृत ग्रंथोंका प्रचार करना और अन्धकारको मिटाना । वि० सं० १९२९ की साल ७५ वर्षकी-उम्रमें स्वा० विरजानन्दका देहान्त हुआ, स्वा० दयानन्दने यह समाचार सुन कहा कि"आज भारतसे विद्याका सूर्य अस्त होगया"और उसरोज़ दिनभर जल तक नहीं पिया । स्वा० विरजानन्दकी स्मरणशक्ति ऐसी निर्मलथी कि, जो ग्रंथ एकदफे ध्यानसे सुनलेतेथे वह उनको याद होजाता था । भिन्न २ ऋतु ओंमें स्वामीजी वैद्यकशास्त्रानुसार कोई २ विशेषवस्तु खाना छोड़देतेथे ।

बिल्वमंगलसूर--देखो सूर ।

बिल्हणइतिहासकार--यह कश्मीरवासी ब्राह्मण प्रायः स० ई० १०८३ में विद्यमानथे । विक्रमाङ्कचरित्र १८ सर्गोंमें इनका रचा ग्रंथ उत्तम है । विक्रमाङ्कचारित्रमें कश्मीरके बड़े २ शहरों, प्रसिद्ध पुरुषों और कश्मीरके चालोक्यराजवंशका सविस्तर वृत्तांत है ।

विशाखदत्त (मुद्राराक्षसनाटकके कर्ता)--यह सावन्तवटेश्वर दत्तके पौत्र तथा महाराज पृथुके पुत्रथे । राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द लिखते हैं कि पृथु दिल्लीके अन्तिम हिंदूपति पृथ्वीराज चौहानका दूसरा नाम है । वि० सं० की १२ वीं शताब्दी में विशाखदत्तका जीवनकाल है । मुद्राराक्षस अन्यनाटकों की अपेक्षा अधिक विलक्षण है क्योंकि उसमें राजनीतिका अंश बहुतही उत्तमतासे दरशाया गयाहै ।

विशुद्धानन्दसरस्वती(भारत विख्यात विद्वान् सन्यासी)--संगमलालशुक्ल कान्यकुब्ज ब्राह्मण जिला सीतापुरके वाड़ी नामक ग्रामसे आजीवन तथा देशभ्रमणके लिये दक्षिणकी तरफ गयेथे । हैदराबादके समीप कल्याणीमें पहुँच वहांके नवाब मोहनशाहके सेनानायक लछीरामसे इनकी भेट हुई । लछीरामभी अवध प्रान्तके रहिनेवाले कान्यकुब्जब्राह्मणथे निदान उन्होंने अपनी बहिन यमुनाका विवाह इनके साथ कर दिया जिसके गर्भसे बंसीधर नामक पुत्रका जन्म हुआ जो देशमें स्वामी विशुद्धानन्द सरस्वतीके नामसे विख्यात है।संसारभरके बालक प्रथम जिन शब्दोंका उच्चारण करते हैं वे गृहस्थोपि योगी "मामा बाबा"आदि शब्द इन्होंने नहीं बोलेथे किन्तु सबसे पहिले एकदिन अकस्मात् यह कहा था कि"मेरी पुस्तक कहां है"और फिर कई मासतक यही रट लगी

रहीथी । ११ वर्षके होनेके पहिलेही माता पिताका देहांत होगया और निःसंतान मामा मांई ने इनको पुत्रवत् पाला था।लड़कपनमें ये बड़े उद्दण्डथे और नवाब मोह मशाहके लडकोंके साथ कई वर्षतक कुश्ती, दण्ड, पटा, तीरन्दाजी, कोटखाई दीवार आदिका फांदना और घोड़ोंका फेरना इत्यादि फौजी व्यवसाय सीखते रहेथे । उनदिनों इनकी उम्र १६ वर्षकी थी, लेकिन सुंदर सुडौल बलिष्ठ शरीरके देखनेसे २५ वर्षके जवान मालूम देतेथे और नवाबके लडकोंसे सब कसरतोंमें बाजी माराकरतेथे,इसीकारण एकदिन द्वेषवश उन्होंने एक घोड़ा मरजानेके अपराधमें इनको थोड़ी देरके लिये हवालात करादी । यद्यपि मामा सुनतेही इनको छुडा लायेथे लेकिन इस घटनासे इनकामन संसारसे उदास होगया निदान उसीरातको चुपचाप घरसे निकल नासिकक्षेत्र को चलते हुये । वहां पहुंच ३ वर्षमें इन्होंने संहिता, अष्टाध्यायी, अमरकोष आदि ग्रंथ कंठ किये । पश्चात् विशेष विद्यापठनार्थ उत्तरकी ओर गमन किया और दौलताबाद, ओंकारनाथ, उज्जैन तथा, ग्वालियर होते हुये बिठूर (कानपुर) में आये। समय उनदिनों आजकलकासा नहीं था एवं इनको इस सफरमें बड़े २ कष्ट सहन करने पड़े, लेकिन कभी नहीं घबराये, मूल मंत्र सदैव येही रहा कि "कार्य्यं वा साधयेयं,शरीरं वा पातयेयं" । बिठूरमें ३ वर्ष रहिकर प्रसिद्ध पंडित राघवेंद्राचारीसे व्याकरणके समस्त ग्रंथपढ़े और अपने एक सपाठीको बडीबहादुरीसेगंगामें डूबनेसे बचाया । बिठूरसे उत्तराखण्डको सिधारे और जोशीमठ, हृषीकेश,कनखल तथा हरिद्वारमें३वर्षपर्य्यंत ठहिरकर स्वामी गोविन्दाश्रम आदि महात्माओंसे योग तथा ब्रह्मविद्याका अभ्यास किया । इन तीनवर्षोंमें इन्होंने अनेक तीर्थोंके दर्शन,बहुतसे योगियों सन्यासियोंका सत्संग, अनेक प्रकारके चांद्रायणादि व्रत तथा गायत्री आदि मंत्रोंका जप भी कियाथा कि जिससे अन्तःकरणकी शुद्धि होकर बुद्धि निर्मल हो और हृदयमें विद्याका प्रकाशहो । स. ई. १८५० के साल उत्तराखण्डसे लौटकर काशीमें आये और महात्मा गौड़ स्वामीसे सन्यास धर्मकी दीक्षा लेकर अनेक शास्त्रोंका अध्ययन उनसे किया । वि. सं. १९१६ में सब लोगोंके कहिनेसे गौड़ स्वामीकी गद्दीपर बैठना तथा दशास्वमेध घाटपर अहल्याबाईकी धर्मशालामें रहिकर विद्यार्थियोंको पढ़ाना इन्होंने स्वीकार किया (देखो गौड़स्वामी) । इनके पढाये हजारों विद्वान् आजकल देशभरमें वर्तमान हैं । भारत विख्यात वक्ता पं० दीनदयालु शर्म्मा तथा महामहोपाध्या पंडित शिवकुमार शास्त्री सरीखे अद्वितीय विद्वान् अपनेको स्वामी विशुद्धानन्द का शिष्य बतलाने में गौरव समझते हैं । स्वामीजी धनिकोंसे सदैव दूर भागे लेकिन वे अन्ततक उनके साथही रहे, इसीको कहितेहैं "भोक्ताके भोगकी प्रबलता" । कश्मीर, जयपुर,इन्दौर, दरभंगा आदिके राजेमहाराजोन शिष्य होकर स्वामीजी की पाठशालाके खर्चके निमित्त लाखों रुपये दिये पाठशालामें सैकडों सन्यासी

वेदान्तका सूक्ष्म विचार करते तथा अन्नवस्त्रपातेथ। सैकडो ब्रह्मचारी तथा गृहस्थभी अनेक शास्त्रोंकी शिक्षा पातेथे और आवश्यकता होनेपर उनको भी भोजन वस्त्र दिया जाताथा। काशीके सब ब्राह्मण तथा साधू अपना अग्रगण्य समझ स्वामीजीके कहेमें चलतेथे। उनके होते हुये कोई विद्वान शास्त्रार्थमें काशी से जीतकर नहीं गया। उनकासा तेजस्वीपन तथा आतङ्क काशाक किसी दूसरे विद्वानका नहींथा। वि० सं० १९५६ की साल ९३ वर्षकी उम्रमें स्वामीजीका देहपात हुआ, कलकत्ता आदि नगरोंमें उनके नामसे विद्यालय खोले गये। उनके मृत्युकी खबर सुनकर सबने येही कहा कि " विद्याका सूर्य अस्त होगया! काशीका कलश गिरगया !! "

बिहारीमल कछवाहा (जयपुरनरेश)—इनको भोरूमल तथा पूरणमलभी कहतेथे, आमेर इनके वक्तमें राजधानी थी, यह निज पिता पृथ्वीराजके बाद गद्दीपर बैठेथे और दिल्लीके तख्तको राजस्व देतेथे।नारनौल इन्होंने गुलामशेरखाँसे फतेह कियाथा और हेमूवक्कालकी पराजयके समयभी यह मौजूदथे।पहिले पहिल जब मुगलसम्राट् अकबरने इन्हें अपने दर्बारमें बुलाया तो यह पागलहाथी पर सवार होकर गयेथे, अकबरको इन्होंने अपनी बेटीका डोला दियाथा और पञ्च हजारी मनसब पायाथा।राजाभगवानदास इनके पुत्रथे और दर्बार अकबरीके नवरत्न महाराजा मानसिंह इनके पौत्रथे (सो देखो)। बिहारीमलकी रानी मथुरामें दशावतारकी गलीके साम्हने जमुनातट जहां सतीहुईथी वहांपर लालपत्थरका ५० फीट ऊचा सतीबुर्ज अबतक मौजूदहै। उक्तबुर्जको मुगलसम्राट् औरंगजेबने ऊपरसे तुड़वादियाथा।जिसके चिन्ह अबतक पायेजातेहैं।

बिहारीलाल (भाषाकवि) परम्परासे इनके विषयमें प्रसिद्धहै कि-

दो० जन्म ग्वालियर जानिये, खण्ड बुंदले बाल।
तरुणाई आई सुभग, मथुरा बस सुसराल॥

खड्ग विलासप्रेस बाँकेपुरसे मुद्रित बिहारीलालके जीवनचरित्रकी पुस्तकमें सुयोग्य लेखकने उपरोक्त दोहे तथा सतसईके अनेक प्रमाणोंके आधारपर सिद्धकियाहै कि यह भाषा कवि केशवदासके पुत्र वर्णके ब्राह्मण नानाकेघर ग्वालियरमें जन्मेथे। अनुमान १८ वर्षकी उम्रतक पिताके पास उड़छा (बुंदेलखण्ड) में रहे, जब इनके पिताका देहान्त होगया और उनके सत्कारकरनेवाले नरेशकी जगह भी दूसरा राजा उड़छाकी गद्दीपर बैठगया तो बिहारीलालजी अपनी कविताका यथार्थ आदर नपाय उड़छासे अपनी सुसरालको मथुरामें चलेआए।पश्चात् मथुरासे जयपुरनरेश जयसिंहके दर्बारमें गये, राजासाहब उनदिनों अपनी नवयौवना रानीके प्रेममें ऐसे मुग्ध थे कि रातदिन रनवासमें रहकर राजकाजकी ओर कुछ ध्यान नहीं देतेथे। यह देख बिहारीलालने निम्नस्थ दोहा लिख राजाके पास पहुंचा या:-

दो०नहीं पराग नहिं मधुरमधु, नहिं विकास यह काल।
अली कलीहीसों रम्यो, आगे कौन हवाल ॥

इसदोहेका मतलब समझ जयसिंहनरेश तुरंत बाहिर निकल आये और विहारीलालको १०० मुहरे इनामदी। बादको विहारीलालजी जयपुरमें रहते रहे और समय २ पर दोहे बनाकर सुनातेरहे तथा इनाम पातेरहे। स० ई० १६६२ में ७०० दोहे बनजानेपर विहारीलालजीने सबको एकत्राकिया और सतसईनाम रक्खा। सतसईके दोहोंपर 'अक्षरकामधेनु' की कहावत घटतीहै, ४८ मात्राके छंदमें ऐसी सुंदरतासे इतने गम्भीरभावोंको भरकर मूर्तिमान बना आंखके साम्हने खड़ाकरदेना सहजकाम नहीं है, विद्वानलोग कहतेहैं:--

दो० सतसैयाके दोहरा, ज्यों नावकके तीर।
देखनके ओछे लगें, करें घाव गम्भीर ॥

राजा जयसिंहका प्रेम विहारीलालके साथ इतना बढ़गयाथा कि,बहुधा युद्धके अवसरपरभी वह इनको अपने साथही रखतेथे। स० ई० १६२५ में काबुलकी चढ़ाईपर दोनों साथहीसाथ गयेथे और विहारीलालजीने उसअवसरपर कहाथा कि–

दो० यों दलकाढे वलखतें, तैं जय साह भुआल।
वदन अघासुरके परे, ज्यों हरि गायग्वाल ॥

स० ई०१६६६ में राजा जयसिंहके उद्योगसे शिवाजीमरहटा और औरंगजेबमें सन्धि होकर बड़ा भारी युद्ध मिटाथा,उस अवसरपर विहारीलालजीने कहाथाकि–

दो० घर २ हिन्दुनितुरकनी, देहि असीस सराहि ॥
पतिनराख चूंदर चुरी, तैंराखीं जयसाह ॥

स० ई० १६६७ में राजा जयसिंहका देहांत हुआ और इसके बाद विहारी लालजीका भी कुछ पता नहीं लगता। सतसईको विचारसहित पढ़नेसे ज्ञात होताहै कि, विहारीका स्वभाव उच्च और खराथा। झूंठे खुशामदी नथे। कृष्णोपासकथे,हृदय उदार भावोंसे परिपूर्णथा,मतमतांतरोंके झगड़ों तथा दुराग्रहको नापसंद करतेथे। संस्कृतके पूर्णविद्वान्थे,फारसीभी भलीभाँति जानते हों तौ कुछ आश्चर्य नहीं क्योंकि, फारसीके शब्द बड़े सौंदर्य और मौकेसे इनकी कवितामें पायेजातेहैं और हिंदीमें तौ ऐसी बोलचाल तथा ऐसे गठेहुये शब्द किसी अन्यकविकी कवितामें मिलतेही नहीं। निम्नलिखितदोहेमें जिससरीखे सतसईमें सैकड़ों हैं विहारीने सागरको गागरमें भराहै:–

दोहा-कितीन गोकुलकुल वधू, काहिन केहि सुखदीन।
कौनै तजी न कुल गली, है मुरली स्वरलीन॥

विज्ञानेश्वर-(नीतिविशारद) यह बड़े महात्मा थे, धर्मशास्त्र तथा राजनीतिके मर्मोको खूब जानतेथे।याज्ञवल्क्यस्मृतिका मिताक्षरा नाम तिलक इन्होंने रचाथा । मिताक्षराका बना राजा भोजके समयसे पहिले सिद्धहै क्योंकि भोजके समयमें मिताक्षराका व्यवहार सर्वत्र न्यायालयोंमें था। पांडित्य इनका मिताक्षराके देखनेसे प्रकट होताहीहै और इसमेंभी कुछ शक नहीं कि, यह वर्णके ब्राह्मण थे।

बीकासिंह(राव बीकाजी बीकानेर राज्यके संस्थापक)-मारवाड़नरेश राउजोधाजी इनके बापथे। बीकाजीने पिताके किसी कटुवचनपर नाराज होकर अपने पूर्वजोंके राज्यका दावा छोड़दियाथा और निजभुजबलसे माड़वाड़का उत्तरीयभाग जैसलमेरूके भाटियोंसे विजयकरके वि० सं० १५४२ में बीकानेर बसायाथा और इधर रेवाड़ी फतेहकरके दिल्लीकी तलहिटीतक और उधर हाँसीहिसारतक स्वराज्यको बढ़ायाथा और कईलड़ाइयोंमें मुगलसम्राट दिल्लीपरभी विजय पाई थी । राउजोधाजीके पश्चात् भाइयोंकी मददपर जाकर इन्होंने अजमेरके सूबेदारको परास्त कियाथा । इनका देहान्त वि० सं०१५६१ में हुआ । श्रीमहाराज गंगासिंहजी वर्तमान बीकानेरनरेश आपहीके वंशावतंसहैं ।

बीरवर-देखो बीरबल.

बीरबल(अकबरके मंत्री)-यह जिला हमीरपुरके किसीग्राममें और अनेकोंकी सम्मतिके अनुसार काल्पीमें स० ई० १५६० की साल एक साधारण कान्यकुब्जब्राह्मणके घर जन्मेथे और महेशदास इनका नाम पड़ाथा। माता इनको ७ वर्षका छोड़कर मरगईथी और पिताने इनको बचपनहीमें अनेक कवित्त तथा श्लोक ऐसे कंठकरादियेथे जो राजा महाराजाओंके साम्हने पढ़े-जातेहैं। कईवर्षबाद इनके पिताका भी देहान्त होगया और तब इन्होंने सुन्दरलाल एक विद्वान् ब्राह्मणसे अल्पकालहीमें संस्कृत तथा फारसीके बड़े २ ग्रंथ पढ़े। एकदिन सुंदरलाल छतपरसे गिरकर मरगये, इसके बाद इन्होंने जयपुर-नरेश भगवानदासके दर्बारमें कवीश्वरोंमें नौकरी करली। भगवानदासने इनकी विलक्षणबुद्धिपर रीझकर तोहफेके तौरपर इनको बादशाह अकबरकी भेंट करदिया । अकबरने प्रथम इनको कविरायकी पदवी दी और कुछही दिनोंबाद इनको सर्वगुण सम्पन्न पाकर अपना मुशीरेआला बनालिया और पञ्चहजारीका मन्सब तथा साहिबदानिश्वर राजा बीरबलका खिताब दिया। इन्हींदिनो कांगड़ेके राजा उद्योतचंद किसी, कारण कदकियेगये, अकबरने उनका राज्य जागी-

रमें इनको देनाचाहा लेकिन् इन्होंने स्वीकार न किया निदान कालिंजरके समीप एक बड़ी जागीर इनको दीगई । गुजरातकी लड़ाईमें बीरबलने अपना समरनैपुण्य दिखलाकर बड़ी प्रशंसा पाईथी, यह अकबरके साथही रहतेथे और जब कोई भारीसेभारी काम आनपड़ताथा तौ वह इन्हींको सौंपाजाताथा । स० ई० १५५६ में काबुलके अफगानोंने सरउठाया, अकबरने एक सैनिकदल उनकी सरकोबीको बीरबलकी मातहितीमें रवाना किया, काबुलपहुंच बीरबल संयोगवश पहाड़की एक घाटीमें फँसगये और मुंहमोड़ना स्वीकार नकर सेनासहित कटमरे । अकबर अपने सखाकी मृत्युके समाचार सुन शोकाकुलहो ज्ञानशून्य होगया, कईदिनतक खाना नखासका और सच्च पूंछो तो मरणपर्य्यंत इसदुखको नभूला, 'जब कभी बीरबलकी याद आजातीथी तो कहाकरताथा कि "सब शोभा दर्बारकी गई बीरबल साथ" बीरबलकी लाश नहीं मिलीथी, इसी आधारपर बादशाहका शोक घटानेके लिये लोगोंने कईदफे यह बात उड़ाई कि, बीरबल मारेनहीं गयेहैं किन्तु संन्यासीके भेषमें कांगड़ेमें विचरतेहैं । अकबरने विश्वासकरके अनुसन्धान कराया परंतु यह सब खबरें गप्प निकलीं । मौलवीन साहब अपने हिंदोस्तानके इतिहासमें लिखतेहैं कि " बीरबल बड़ा सुप्रबन्धकर्ता, राज्यका स्तंभ, सभ्य, दृढचित्त और दीर्घआशयवान पुरुष था । मधुरभाषी था पर सुप्रतिष्ठाका बड़ा ध्यान रखताथा । स्वभाव प्रहसनयुक्त था लेकिन ऐसा प्रहसन नहीं करता था जो सभ्यता और राज्यप्रतिष्ठासे बाह्यहो. " ऊँचे २ मनसबधारी अमीर, बेगमें और शाहिजादेतक बीरबलकी कृपादृष्टिको अपना सौभाग्य समझतेथे क्योंकि, यह बादशाहके मुंहलगेये थे और बादशाह इनकी सिफारिशको मानताथा । बीरबल अनेक शास्त्रोंके ज्ञाता होकर शीलके समुद्र, दानमें कर्ण, धर्मकर्ममें जमदग्नि और बुद्धिमें बृहस्पतिके सदृशथे । कविगंगको छप्पयमें १ लाख रुपया इन्होंने इनाम दियाथा और इंद्रजीत उड़छानरेशका १ करोड़रुपया जुर्माना कविकेशवदासकी सिफारिशपर अकबरसे कहिकर माफ़करादियाथा (देखो केशवदास) । जि० कान्हपुरमें बाराअकबरपुर इन्हींका बसायाहुआहै; इनके उद्योगसे गोवध बंदहोकर हिंदूमुसलमानोंमें मेलझोल बढाया, लेकिन् मुसलमान इनसे सदैव जलतेरहितेथे क्योंकि, उनको गुमानथा कि, यह अकबरको हिन्दूमतकी तरफ झुकाते हैं । इनके टूटे फूटे महल तथा, इनकी बेटीके, जो बड़ी चतुराथी, माहिलोंके खँडैर अबतक फतेपुरसीकरी जि० आगरामें पड़े हैं और इनका इकलौता बेटा लाल इनसे कुछही दिन पीछे अपना सर्वस्व लुटाकर संन्यासी होगयाथा । यह कवितामें अपना भोगब्रह्म कहितेथे । प्रसिद्ध है कि-

दो०-उत्तम पद कविगंगको, उपमाको बलवीर।
केशव अर्थगंभरिको, सूर तीनगुण धीर॥

राजा बीरबलकी मृत्युके शोकमें कविकेशवदासजीने कहाथा कि-

पापके पुंज पखावज केशव, शोकके सँख सुने सुखमामें।
झूटकी झालर झाँझ अलोककी, कौतुक भो कलिके कुनवामें।
भेदकी भेरि बड़ेडरके डफ, आवत जुत्थन जानी जमामें।
जूझतही बलबीर बजे बहु, दारिदके दर्बार दमामें।

वीरसिंह (बुंदेलोंके मूल पुरुष)-इनके पिता हेमकरन जो बनारसमें राज्य करतेथे मुसलमानोंसे परास्त होकर स. ई. के १३ वें शतकमें इधर आयेथे। वीरसिंहने बड़े होकर "बुन्देला गोत्र" धारण किया और इसी कारण इसदेशका नाम बुंदेलखण्ड पड़ा। इनके वंशज अबतक पन्ना, अजयगढ, चर्खारी, बिजावर, उड़छा तथा दतिया इत्यादिमें राज्य करते हैं।

वीरसिंहदेव बुंदेला (उड़छानरेश)-मुगलसम्राट जहाँगीरके वक्तमें बडे प्रतापी हुयेथे, इन्होंने शहर झांसीको फिरसे बसायाथा और ३३ लाख रुपयेके खर्चसे मथुरामें केशवदेवजीका मंदिर बनवायाथा। इनके पिताका नाम मधुकरसाहि था (सो देखो)।

वीरसेन (बंगालका राजा)-इन्होंने स. ई. ९८६ से स. ई. १००६ तक बंगालमें राज्य किया, राजधानी इनकी ढाकाके समीप विक्रमपुरमें थी। डाक्टर राजेंद्रलालमित्र, एल. एल. डी. के मतानुसार इन्हीका दूसरा नाम अदीसुर था। कहितेहैं कि, अदीसुरनरेशने कन्नौजसे ५ ब्राह्मण तथा ५ कायस्थ बुलाकर बंगालमें बसायेथे जिनकी औलादमें बंगालके कुलीन ब्राह्मण और कुलीन कायस्थहैं। राजा लक्ष्मणसेन जो स. ई. १३०२ में बख्तियारखिलजीसे परास्त होकर पुरीको भागगये, इसीवंशके अन्तिम राजाथे।

वीसलदेव चौहान (महाराजा अजमेर)-शाकम्भरी भूपति अविल्लदेव इनके पिताथे और दिल्ली अजमेरके राजा पृथ्वीराजचौहान इनकी छठी पीढ़ीमें हुयेथे। कवि नरपतनाल्ह "वीसलदेवरासौ" में लिखताहै कि, वीसलदेवकी ६० रानियोंमेंसे एक धारानगरीके राजा भोजकी कन्या राजमतीभी थी, जिसके दहेजमें वीसलदेवको सँभर, टोंक तथा गढ़मंडलके इलाके मिलेथे। "पृथ्वीराजरासौ" में कविचंद लिखताहै कि "वीसलदेवने वि. सं. १०२२ से १०८६ तक अजमेरकी गद्दीपर बड़ी अनीतिसे राज्य किया। इन्होंने गुजरात विजय किया था, उड़ीसाके राजाको परास्त कियाथा

और अनेक अप्रियरानियोंने मिलकर किसीतरकीबसे इनको नपुंसक करादियाथा। इस दशामें वीसलदेवने बहुत दुःखीहो गुजरात जाय गोकर्णेश्वर महादेवके दर्शन किये जिसके प्रभावसे पुंस्त्वको पुनः प्राप्त होकर वहाँ एक देवदर्शन मठ बनवाया और अपने नामका वीसलनगर बसाकर नागरब्राह्मणोंको दान किया। अजमेरके समीप एक तालाव इनका बनवाया अबतक मौजूदहै और जयपुर राज्यांतर्गत राजमहलके निकटभी "वीसलपुर" नामक ग्राम इन्हींका बसाया हुआ है अंतमें वाजीकरणकी औषधियोंके खा कुकर्मोंके करने तथा साँपके काटनेसे वीसलदेव पागल होगयेथे और उस हालतमें अपने इकलौते पुत्र सारङ्गदेवको वध कियेथे। वीसलदेवके बाद सारङ्गदेवका पुत्र आनाराजा गद्दीपर बैठा जिसका बनवाया आनासागर अबतक अजमेरके समीप विद्यमान है।

बुकरातहकीम(Hippocrates)-प्राचीन इतिहासोंमें लेख है कि बुकरातके वंशमें ३०० वर्षसे हिकमतका पेशा होताथा। इनके पूर्वज एस्क्युलापियस प्रथमने यूनानी चिकित्साकी मूल रोपणकीथी जिसका पूर्णतया सुधार बादको इन्होंने किया। एस्क्युलापियस प्रथमके पहिले रोगियोंका इलाज मन्त्र तन्त्रादिद्वारा हुआ करता था। बुकरातने पथ्य निदान, जर्राही इत्यादिके नियम अन्वेषणकरके ७२ पुस्तकें रचीथी और इसकारण येही प्रचलित यूनानीहिकमतके प्रथम आचार्य गिने जाते हैं। बुकरातके कथनानुसार रोगके दोकारण हैं, एक तो ऋतु तथा स्थानका प्रतिकूल होना; दूसर भोजन और निद्रामें फर्क पड़ना। स. ई. से ४६० वर्ष पहिले यूनानमें जन्मे; स. ई. से ३५७ वर्ष पहिले मरे।

बुद्ध (बौद्ध मतके आचार्य)- शाक्यसिंह, साक्यामुनि, सर्वार्थ सिद्ध तथा गौतम बुद्ध इन्हींके नाम हैं। पृथ्वीके धर्मप्रचारकोंमें इनका दर्जा सबसे ऊंचा है। किसी समय तो इनके मतका प्रचार सर्वत्र भूमंडलपर होगयाथा लेकिन अब भी दुनियाके एकतिहाईलोग इसमतपर चलते हैं। चीन, जापान, लंका, ब्रह्मा और तिब्बतमें इसीमतके माननेवाले हैं। यह कपिलवस्तुके सूर्यवंशी राजा शुद्धोदनके घर स० ई० से ५५७ वर्ष पहिले जन्मेथे, माता मायादेवी इनको ७ वर्षका छोड़कर मरगईथी निदान मौसी गौतमीने इनको पालाथा। बड़े होकर धनुर्वेदादि अनेक विद्या इन्होंने थोड़ेही कालमें सीखली,संसारकी तरफ़से इनका चित्त शुरूहीसे विरक्त मालूम पड़ताथा निदान पिताने शीघ्रही संसारके बन्धनोंमें फ़सानेके लिये इनके विवाहकी फ़िक्र की राजा सोमराजकी कन्यासे इनका विवाह स्वयंवर विधानसे होगया जिसके बाद १०वर्षतक इन्होंने राजसी सुख भोगा पर मनमें यही विचार रहा कि, संसार

असार है और मनुष्यके जीवनका कुछ ठिकाना नहीं। ३० वर्षकी उम्रमें इनके एक पुत्र हुआ, इससे कुछही दिन पीछे एकराज आधीरातके वक्त अपनी स्त्री तथा पुत्रको सोते छोड़, राजसीसुखसे मुँह मोड, घोडेपर सवारहो यह तपोवनको सिधारे। घरसे कुछ दूर पहुंच इन्होंने अपने वस्त्र किसी पथिकके चिथडोंसे बदललिये थे, घोडा तथा आभूषण नौकरके हाथ पिताके पास भेज-दिये और आप चलते हुये। गयामें पहुंच ५ वर्षतक तप किया और बुद्धपदको प्राप्त हुये। ४० वर्षकी उम्रमें काशीमें आये और निजमन्तव्योंका उपदेश करना प्रारम्भ किया। कौशल तथा मगधके राजे इनके चेले होगये और मगधकी राज-धानी राजगृहमें ठहरकर इन्होंने बहुतदिनोंतक धर्म्मोपदेश किया। स०ई०से ५२१वर्ष पहिले ये गेरूआ वस्त्र पहिने अपने पितासे मिलनेके आये, पिता इनकी दशा देख अप्रसन्नहुये लेकिन इन्होंने कुछ ख्याल न किया। इनके आगमनकी खबर सुन सब नातेदार तथा प्रजागण दर्शनोंको धाये केवल इनकी धर्मपत्नी ने मान किया लेकिन उसके चित्तकी बात समझ यह उसके पास खुदही चलेगये पतिव्रतापत्नीके नेत्रोंसे स्वामीको देखतेही अश्रुधार बहनिकली और वह दौड़ कर इनके चरणोंको लिपटगई। राजा शुद्धोदनके मरनेके पीछे इनकी पत्नी तथा मौसीने बौद्धमत ग्रहण करलिया और इनके पुत्र रहूलानेभी ९ वर्षपीछे राजपाट त्यागदिया ८० वर्षकी उम्रमें बुद्धजी किसीगाँवमें उपदेश करनेगये थे, वहां मीठे चाँवल रोटी खाकर उदरशूलसे पीडितहुये और निर्वाणपदको प्राप्त हुये। इनका मुख्यस्थान गयामें उस जगह था जहाँ अब बुद्धगयाका मंदिर बनाहुआहै, वर्षातके ४ महीने गयामें रहिते थे और वर्षके शेष ८ महीने देशदेशान्तरोंमें उपदेश करते विचरतेथे। भिक्षाकरके भोजन करतेथे और अनेक चेलेभी इधर उधर उपदेकरणार्थ भेजेथे। बौद्धमत जो साङ्ख्ययोगशास्त्रानुकूलहै इनके जीवनकालहीमें दूर२ फैलगयाथा और बादको अशोक, कनिष्क तथा सिलादित्य प्रतापी नरेशोंने होकर उसका प्रचार बहुत कुछ किया। इसमतमें वर्णव्यवस्था नहीं मानीजाती, कर्म प्रधान समझाजाता है और सच्चाई, सफाई, ईमान्दारी, दान देने और प्राणीमात्रकी रक्षाकरनेका उपदेश कियाजाताहै। पुराणोंके अनुसार बुद्धजी विष्णुका अवतार श्रीकृष्णजीके बाद हुये लेकिन बुद्धजीने स्वयं ऐसा कभी नहीं कहा।

बुअलीसईना हकीम (Avisina) यह मुसलमानोंमें सबसे पहिले हकीम हुये हैं। वलखके समीप किसी गाँवमें स०ई० ९८५ का साल जन्मे और शहिर बुखारामें रहकर इन्होंने विद्या पढी तथा वैद्यक (तिबाबत) सीखी। २० वर्षकी उम्रमें एक औषधालय खोला और अनेक असाध्यरोगियोंका जिनमें से वलख खाराका हाकिमभी था चङ्गाकरके बडी प्रतिष्ठा पाई। बादको

हाकिमोंसे वलख बुखाराके कतुबखानेके देखनेकी आज्ञा मांगी । जिस दिन यह कुतुबखानेकी सब पुस्तकोंको पूर्णरीतिसे देख चुके, दवयागसे उसमें आग लगी जिससे वह जलगया । लोगोंने हाकिमको बहुत कुछ उभाड़ा कि, बुअलीने अपनी रची हिकमतकी पुस्तकोंका प्रचार करनेके लिये कुतुबखानेको नष्टकिया है लेकिन हाकिमने यह बात कान नहीं की । इससे कुछही दिन पीछे हाकिम मरगया, तब तो बुअली ख्वारज्मके हाकिमके दरबारमें जाय सत्कार प्राप्त करनेमें समथ हुए । बहुत समय नहीं बीतने पायाथा कि, सुलतान महिमूदगजनवीने ख्वारज्मपर चढ़ाई करके वहाँके हाकिमको परास्तकिया और हकाम बुअलीको शियामतानुगामीहोनेके कारण वधकरडालना चाहा लेकिन यह भाग बचे और नेशापूर आदिस्थानोंमें बहुतदिनोंतक छिपेरहे । इन्हींदिनों इन्होंने शाहकाबूसक एकनातेदारको आराम किया उसका रोग किसीकी समझमें नहीं आताथा । निदान इन्होंने उसका नाडीपर उंगलरिख शहिरके सब मुहल्लोंके नाम लिये । उस मुहल्लेके नाम पर कि जिसमें रोगीका प्रेमी रहिताथा नाड़ी भड़कउठी । फिर एक जानकार आदमीसे उस मुहल्लेके स्त्रीपुरुषोंके नाम लिवाये । जिस स्त्रीके नामपर नाड़ी भड़की इसीके कटाक्षसे रोगीको घायल हुआ जान हकीमजीने पलक मारतेमें इलाज करदिया क्योंकि, रोगी लज्जाके कारण अपना हाल किसीको बतलाता नहीं था । शाहकाबूसने हकीमजीका उचित सत्कार किया और अपने दरबारमें रखलिया लेकिन कुछ कालपीछे शाहकाबूसको प्रजागणके उपद्रवसे राज्यरहित होनापड़ा । इसके बाद हकीमजी हुमेदाँ तथा अस्फहानके हाकिमोंके दरबारमें रहे लेकिन किसीको इनका आगमन शुभ न हुआ । अंतमें ६१ वर्षकी उम्रमें ज्वरसे पीड़ित होकर मरे । प्रायः १०० पुस्तकें इन्होंने भिन्न २ शास्त्रों पर रचीथीं ।

बेञ्जामिनफ्रेंकलिन (Benjamin Franklin)- यह एक साधारण अमेरिकावासी अंग्रजके १७ बच्चोंमेंसे थे । दरिद्रताके कारण स्कूलमें नहीं पढ़ायागयाथा । जो कुछ विद्या इनको आतीथी वह निजके तौरपर परिश्रम करके इन्होंने सीखलीथी । इनके बड़े भाईने एक छापाखाना खोलाथा । निदान पिताने इनको १२ वर्षकी उम्रमें समय बितानेके लिये बड़े भाईको सौंपदिया । दिन भरतो यह छापेखानेमें काम करतेथे और आधीराततक पढ़ा करतेथे । अन्नवस्त्रके लिये जो दाम इनको बड़े भाईसे मिलता था यह उसमेंसे कुछ बचाकर पुस्तकें मोललेलेतेथे और जो पुस्तकें नहीं खरीद सकतेथे उनको औरोंसे मगनई ले आतेथे । लेकिन इनका भाई निठुर था एवं इनको कुछही दिनबाद नौकरीकी खोजमें फिलेडेलफियानगरको जाना पड़ा और वहाँसे लन्डननगरमें जा

किसी छापेखानेमें नौकर होगये। समयपर उपस्थित रहकर ध्यान तथा फुर्तीसे काम करनेके कारण स्वामी इनसे सन्तुष्ट रहताथा। इसीतरह प्रायः डेढ़वर्ष लन्डनमें रहकर इन्होंने खर्चके बन्धेजसे कुछ धनसञ्चय करलिया औरफिलेडेल्फियामें जाकर एक छापाखाना खोला तथा एक समाचारपत्र जारी किया। फिर तो दिनप्रतिदिन इनकी आय बढ़तीगई। जितना धन इनके पास बढ़ता गया यह उतनेही नम्र होगये और कभी न इतराये बादको इन्होंने अपना विवाह किया, स्त्री शीलस्वभावकी अच्छी मिली और दम्पतिमें खूब प्रेम रहा। पश्चात् इन्होंने एक पुस्तकालय स्थापनकिया जिसमें चन्दादेनेवालों को पुस्तकें मिलतीथी और जो अपनी भाँतिका पहिलाही पुस्तकालयथा फिर इन्होंने पुलिसविभागकी दशा सुधारनेके लिये अनेक चेष्टायें कीं और आगका बीमाकरनेवाली सभायें स्थापन कीं, एक स्कूलभी खोलाथा और स्वदेशरक्षाके लिये गवर्नमेंटसे प्रयत्नकरके सेना रखवानेमेंभी सफलता पाईथी। इसी समय इन्होंने "दी वेंट्र वेल्थ" नामक ग्रंथ छपवाया जिसकी खूबही बिक्री हुई। अंतमें इन्होंने विज्ञानकी तरफ मन लगाया और सिद्धकर दिखाया कि,कृत्रिम तथा अकृत्रिमबिजलीमें कुछ भेद नहीं है। जब यह बात निश्चय होगई तो इन्होंने बड़े २ मकानोंको बिजलीसे बचानेकी युक्ति सोची। युक्ति यहथी कि, मकानोंमें कच्चेलोहेकी छड़ लगाईजावे जिसका एक सिरा धरतीमें गड़ारहे और दूसरा मकानके ऊपर निकलारहे, बिजली ऊपरके सिरेपर गिरकर मकानको हानिपहुंचायेबिना छडकी रास्ताधरतीमें समजायगी।विद्वान् तथा वैज्ञानिक होनेके अतिरिक्त यह देशहितैषी भी पक्केथे। यूनायटेड स्टेट (अमेरिका) की राजकीयसभामें इनको कुर्सी मिलतीथी और सन्धि तथा विग्रहमें भी इनकी अनुमति लीजाती थी।अमेरिकावासी अंग्रेजोंपर प्रथम इङ्गलेंडका आधिपत्य था लेकिन इन्होंने उद्योग करके उनको स्वतंत्र कराया निदान उनसबने एकमत होकर इनको अपना प्रेसीडेन्ट (प्रधान) नियतकिया, इसस्वतंत्रताके विषयमें जो सन्धिपत्र लिखागयाथा उसपर फ्रैंकलिनहीने हस्ताक्षरकियेथे। एकदफे किसी परदेशीमनुष्यने इनको खतलिखकर सहायता माँगी , इन्होंने उसको १० अशर्फियें भेजीं और लिखा कि जब तुमको उऋणहोनेकी सामर्थ्यहो तो यह रकम किसी ऐसेही मनुष्यको देदेना जो तुम्हारीसी वर्तमानदशामें हो और जो कुछ मैंने तुमको लिखाहै सो उसको भी जतादेना। ऐसा करनेसे तुम उऋणहोजाओगे और इसरकमसे बहुतों का काम निकलेगा। स० ई० १७९० में ८५ वर्षके होकर मरे।

वेतालभट्ट–यह विक्रमादित्य हर्ष महाराजा उज्जैनके दर्बारके नवरत्ननामक ९ प्रसिद्ध पंडितोंमेंसे थे। "नीतिप्रदीप" नामक संस्कृत ग्रंथ इनका रचा हुआहै। वेतालपंचविंशतिका जिसका लल्लूलालजीने भाषानुवाद करके वेतालपच्चीसी नाम रक्खाहै, इनकी रचीहुई नहींहै, उसके कर्ता कोई शिवदासकवि हुयेहैं।

वेताल (भाषाकवि)-यह भाट स. ई. १८२० में राजा विक्रमसाह डडछा नरेशके दरबारमें थे। इनका पूरानाम सन्तोष राय वेतालथा और ये उर्दू-भी खूब जानतेथे। इनके बनाये नीति सामयक छप्पय सुन्दरहैं।

वेदपाय-यह ब्राह्मण पंडित नौशेरवाँशाहईरानके दरबारमें स. ई. की छ-ठीशताब्दीमें था। वजीर बुजुर्चेमेहरने इसके द्वारा हिंदोस्तानसे पंचतंत्र नामक ग्रंथ मंगाकर उसका अनुवाद पहिलुईभाषामें कराया। शतरंजके खेळका प्रचार भी प्रथम इसीने ईरानमें किया।

वेनीमाधवदास (भाषाकवि)-यह महात्मा ब्राह्मण जि०गोंडाके रहनेवाले वि. सं. १६५५ में जन्मे। गो० तुलसीदास इनके गुरुथे और इनदो-नोंने साथ २ बहुतदिनोंतक भ्रमण किया था। तुलसीदासजीका जीवनचरित्र इन्होंने "गुसाँईचरित्र" नामक पुस्तकमें लिखाहै। पदपूर्तिकेलिये यह अपना नाम "दास" लिखतेथे। वि. सं. १६९९ में सिधारे।

वेनीसिंह हुजूरी-यह पन्नानरेश हिन्दुपतिके दरबारमें दीवानके पदको प्राप्त थे और बड़े साहसी, दानी तथा वीर होकर कविकोविदोंके सन्मानीथे। मरहटों तथा बाँदाके मुसलमानौंको इन्हौंने कई दफे परास्त किया। बुंदेलखण्डी भाट तथा कवीश्वर अबतक इनका यश गातेहैं। विजयराघौगढ (मध्यप्रदेश) के ठाकुर जगमोहनसिंह इन्हींके वंशज हैं।

वेला (रायपिथौराकीबेटी)-यह महोबेके राजा परमालके पुत्र ब्रह्माको विवाहीगईथी। इसके गौनेकी विदापर परमाल तथा पृथ्वीराज (राय-पिथौरा) की फौजोंमें घोर संग्राम हुआ जिसमें राजा परमालका सर्वनाश हो-गया और वेलाका पति ब्रह्माभी मारागया। वेलाके कई भाईभी मारे गये और पृथ्वीराजके बड़े २ वीरसावन्त चौंडियारायइत्यादि रणशाई हुये। वेला निजप-तिका सिर गोदमें लेकर सतीहोगई। जिसस्थानपर सती हुईथी उस जगह वेलौन नामक नगर बसगया है और वहांपर एक मठमें प्रतिवर्ष लाखों मनुष्योंसे वेलाभवानीनामसे पूजी जातीहै। दिल्लीमें एक लाटकी बुनियाद इसने रख-वाईथी लेकिन मुसल्मानोंके हमलेके कारण वह पूरीतौरसे न बनसकी पश्चात् कुतु-बुद्दीनने उसको पूराकिया (देखो कुतुबुद्दीन.)

वैकन (फ्रेन्सिस बैकन-Francis Bacon)-यह इङ्गलैंडवासी सरनि-कोलसबैकनके पुत्र परमनीतिज्ञ, सुप्रबन्धकार तथा चतुरथे। बचपनहीसे होन-हार मालूम देतेथे,बड़े होकर अंग्रेजी भाषाके प्रसिद्ध विद्वान हुए और ब्रिटिश-गवर्नमेंटकी चाकरीमें हाई चेन्सेलरके पदको प्राप्त हुए। स० ई० १६२० में इनका रचा अंग्रेजीग्रंथ "नोवेम आरगेनम" छपा, इनके लिखे वि धभी

अंग्रेजी साहित्यमें अनुपम सामग्रीहैं, उक्त निबन्धोंका आशय कठिनहै। लार्ड-की पदवीभी इनको ब्रिटिशगवर्नमेंटने प्रदान कीथी। अन्तमें नमकहरामनौकरोंके कारण इनको घूंसलेनेका दोषी ठहरनापड़ाथा।

बैजाबाई (दौलतरावसेंधियाकी रानी)—यह मरहटा सर्दार श्री-जीरावघटकेकी बेटी ग्वालियरनरेश दौलतराव सेंधियाको व्याहीथी। सेंधियाने-यह विवाह ऐसी धूमधामसे कियाथा कि, खज़ानेमें फौजकी तनख्वाह चुकाने तकको रूपया न रहाथा। बैजाबाई बड़ी मोहनीरूपथी एवं महाराजासेंधिया की उसपर बड़ा प्रेमथा। स० ई० १८२८ में बैजाबाई विधवा होगई, उसके कोई पुत्र न था और उसकी उम्रभी उससमय बहुतथोडीथी, सेंधियाने अपने जीतेजी किसीको गोदभी नहीं लियाथा, बाईकी इच्छा अपने पिताके वंश-मेंसे किसीको गोदलेकर गद्दीपर बिठलानेकी थी परंतु सेंधियाके वंशमेंसे सुगत रावको उसे गोदलेनापड़ा। सुगतरावके वचपनमें बाई राजकाज बड़ीबुद्धि-मानीसे करतीरही लेकिन जब बडे होकर सुगतरावने सबकाम अपने अधिकारमें करनाचाहा तो रानीको यह स्वीकार नहुआ निदान सुगतरावने ब्रिटिशगवर्नमेंटकी शरण ली, उक्तगवर्नमेंटने बीचमें पडकर निबटारा किया और सुगतरावको आलीजाह जनकोजीसेंधियाके नामसे गद्दीपर बिठलादिया। बाई अपना धन, दौलत, सिपाहीलेकर आगरेमें आवसी, पश्चात् ब्रिटिशगवर्नमेंटने बाईके उच्चपदके अनुसार पेन्शन नियत करादी और फर्रुखाबादमें उसे रहिनेका हुक्म दिया। कुछसमयपीछे ग्वालियरदरबार ने बाईको कुछ और अधिक वार्षिक देनेका ठहराव इस शर्तपर किया कि वह द-क्षिणमें अपनी जागीरपर जावसे। बाई यह बात मानकर वहीं जारही। स० ई० १८५७ के गदरमें बाईने बागीयोंसे सेंधियाके कुलवालोंकी रक्षा की और उनके प्राण बचाकर क्षिप्रानदीके किनारे भागगई और थोडेही दिनोबाद परलोक सिधारी। फेनीपार्क साहिबकी मेम अपनी यात्राके ग्रंथमें लिखतीहै कि "जब मैं बाईसे मिलनेगई वह सुनहरी गद्दीपर बैठीथी, एकतरफ उसकी पौत्री गज-राज साहिबभी विराजमानथी, नौकरनियें दोनों ओर दुशाले तथा सुनहरी वस्त्र पहिरे आदरपूर्वक खडीथीं, सेंधियाका खड्ग बाईके समीप गद्दीपर रक्खाथा, बाईके बाल सुफेदथे, मुसकान अत्यंत प्रियथी, निस्सन्देह युवावस्थामें वह ब-डीही मोहनीरूप रही होगी, हाथमें सुवर्णकी एक चूडीके सिवाय वह कुछ आभूषण नहीं पहिनेथी और विधवा होनेके कारण बहुतसे शारीरक कष्ट सहती तथा नेमव्रत रखतीथी। उसके मुखपर दैवीज्योति दीप्तमानथी और उसकी चाल ढाल अत्यन्त प्रशंसनीयथी"। रानीबैजा बाईने बनारसमें गंगा-तट पत्थरका घाट बनवाना शुरू किया था लेकिन वह अधबनाही पीछेकी

और धसक गया। धसका हुआ घाट अबतक पड़ा है, उसके देखनेसे मालूम होता है कि, यदि बनकर तैयार होजाता तौ पृथ्वीपर अद्वितीय घाट होता। जब उज्जैनकी लूटका माल ग्वालियरमें लाया गया था तौ रानी वैजाबाईने उसको अपने कोषमें इस विचारसे नहीं रखने दिया था कि, उसमें ब्राह्मणों तथा साधुओंकाभी धन अवश्य ही था और इसी कारण उस अटूट धनको अपने खजाँची गोकुलदास उपनाम पारखजीको देकर देवमन्दिर इत्यादि निर्माणकरानेकी आज्ञा दीथी। उसीधनसे पारखजीने मथुरामें द्वारिकाधीशका मंदिर बनवाया तथा मथुराके सेठ वंशकी मूलरोपण की।

बैजूबावरा (प्रसिद्ध संगीतज्ञ)—मशहूर गवैयोंकी सूचीमें इसका भी नाम है। यह बादशाह अकबरके वक्तमें हुआ कुछ पागलसा था और हर वक्त मन्दस्वरसे गाता रहताथा। जातिका ब्राह्मण था और पूरानाम इसका बैजनाथ था।

वैवस्वतमनु (भूमण्डलके प्रथमनरेश)—यह महाराजा सूर्यके पुत्र तथा कश्यपजीके पौत्र सब प्रजाओंके पति सबसे प्रथम राजा हुए। इनके पुत्र इक्ष्वाकुने ४८ कोस लम्बी तथा १२ कोस चौडी अयोध्यानगरी वसाकर उसको अपना राजधानी बनवायाथा(देखोवाल्मीकीयरामायणबालकाण्ड७०सर्ग)। वेदोंके अनुकूल राजा तथा प्रजाके हितार्थ वैवस्वतमनुने "मानवधर्मसूत्र" रचेथे जिनके आशयपर बादको भृगुऋषिने "मनुस्मृति" बनाई। वशिष्ठ तथा गौतमकृतधर्मसूत्रोंमें मानवधर्मसूत्रोंका नाम आयाहै। मानवधर्मसूत्र लुप्तहोगये, अब नहीं मिलतेहैं। मनुका नाम थोड़े हेरफेरसे अनेकदेशोंकी प्राचीनपुस्तकोंमें मिलताहै जिससे ज्ञातहोताहै कि यह, पृथ्वीके पहिले चक्रवर्ती राजाथे। मिश्रदेशकी प्राचीन पुस्तकोंसे पता लगताहै कि वहांका सबसे पाहिला बादशाह मैनुस बड़ा उपकारीथा। इसीप्रकार यूनानीभी कहितेहैं कि, मनुस ईश्वरका पुत्र सबसे पहिला हाकिम हुआ। मनुष्यशब्द मनुहीके सम्बंधसे बनाहै। पृथ्वीपर प्रथम इन्हींने खेतीकरने, मकानबनाने, कपड़ेवुनने, भोजनबनाने तथा आपसमें सभ्यताका बर्तावकरनेका प्रचार किया। मत्स्यपुराणके प्रथम अध्यायमें तथा महाभारतवनपर्वके १८७ अध्यायमें लिखाहै कि,महाराज वैवस्वत मनुके समयमें पानीका तूफान आयाथा जिसमें सब सृष्टिडूबकर नष्ट होगईथी केवल सप्त ऋषियों सहित महाराजा मनु जीते बचेथे। इस तूफानका अन्यदेशोंके प्राचीन ग्रंथोंमेंभी उल्लेखहै। ईसाईलोग स. ई. से३०१६ वर्ष पहिले इस तूफानका आना मानतेहैं; महाराज मनु बड़े सत्यव्रत थे।

वैरमखाँ खानखाना-इसके पूर्वजोंने जो तुर्किस्तानके रहिनेवालेथे कईपीढीतक तैमूरवंशमें चाकरी कीथी, इसने बड़े होकर मुगलसम्राट्हुमायूंकी चाकरी स्वीकारकी और सेनापतिके पदको प्राप्तहुआ। तैमूरकी सप्तम पीढ़ीमें हुमायूं हुआहै, इसने हुमायूंका हरहालतमें साथ दिया और इसीके बल पराक्रमसे हुमायूं अपना हिंदोस्तानी राज्य अफगानोंसे वापिसलेनेमें समर्थहुआ। जब हुमायूं शेरशाहसूरसे हारकर ईरानको भागा तो उस अवसरपर वैरम उसके साथ था, ईरानपहुंचनेपर हुमायूंको वहांके बादशाहतहिमास्पने फौजकी मददकी और वैरमखाँको खानखानाका खिताब दिया।फौज लेकर हुमायूं तथा वैरम हिंदोस्तानको वापिसआये, वैरमने मच्छीवाडेके मैदानमें सिकन्दरसूर तथा उसके अफगानोंको परास्तकरके और पानीपतके मैदानमें हेमूंको परास्तकरके स. ई. १५५६ की साल हुमायूंको पुनः हिंदोस्तानका बादशाह बनादिया, पश्चात् हुमायूंने वैरमको अपने पुत्र अकबरका अतालीक नियतकिया और खानबाबाका खिताव दिया। इसके थोड़ेहीदिनबाद हुमायूं मरगया. अकबरकी उम्र उससमय १३ वर्षकी थी निदान राजकाज वैरम करतारहा। वैरमका राज्यप्रबन्ध अच्छाथा, परंतु वह अत्यन्तघमन्डी तथा निर्दई होचलाथा, इसलिये सबलोग उससे बिगड़उठेथे। १८ वर्षकी उम्रमें अकबरने सब राजकाज अपने अधिकारमें करलिया, वैरमको यह बात बुरी लगी, एवं उसने सर उठाया लेकिन परास्तहुआ। पश्चात् अकबरने उसे माफकरदिया और पेन्शनदेकर मक्काकी यात्राकेलिये भेजदिया। जब वैरम गुजरातके समीप पहुंचा तब एक मनुष्यने उसे मारकर अपने बापका बदला लिया। दर्बार अकबरीके नवरत्न अब्दुलरहीम खानखाना इसके पुत्रथे, इसका बनाया एक फार्सीदीवानभी मिलताहै पहिले इसकी कबर गुजरातमें बनवाईगईथी बादको इसके, नश्यमानपदार्थोंको उखाड़कर मशहद (तुर्किस्तान) में दफनायागया, जहाँ कबर अबतक मौजूदहै। कहतेहैं कि एकदफे शेरशाहसूरसे हारकर वैरमखाँ गुजरातको भागाजाताथा, अबुलकासिम एक आधीनकर्मचारी साथमेंथा, रास्तेमें शेरसूरके एक सेनापतिने आकर घेरलिया और अबुलकासिमकी दिव्यसूरत देख जाना कि यही वैरमहै। वैरमने तुरंत आगे बढ़कर कहाकि "नहीं मैं वैरमहूं"। इसपर अबुलकासिम बोला "कि ये मेरा स्वामीभक्त सेवकहै और मेरे बदलेजानदेना चाहताहै" निदान अबुलकासिम मारा गया और वैरम बचगया।

वैलेन्टायन (डाक्टर जे.आर. वैलेन्टायन-Dr. J. R. Wallantyne)-ये २६ भाषाओंके ज्ञाता विद्वान स० ई० १८६४ में इंगलैन्डसे कीन्सकालिज बनारसके प्रिन्सिपिल नियत होकर आयेथे। संस्कृतके अच्छे पंडितथे। इनकी पूरीतस्वीर अबतक क्वीन्सकालिज बनारसमें मौजूद है।

बोपदेव—यह वैदिक धर्मके विरुद्ध चलताथा, वि० सं० की १२ वीं शताब्दीमें हुआ। महाभारतभाष्य, भागवतभाष्य, मुग्धबोध व्याकरण तथा पदार्थदर्श इसके रचे ग्रंथहैं। इसका रचा व्याकरण पाणिनीय मतके विरुद्ध है और इसके रचे महाभारत तथा भागवतभाष्यका मतलब भी असली आशयके प्रतिकूलही है। इस रचनासे अभिप्राय यह था कि व्यासकृत भागवत तथा महाभारतका प्रचार उठजाय पर ऐसा न होसका।

बौद्धायन—इन्होंने वेदान्त सूत्रकी संक्षेपसे एक वृत्ति बनाईथी जो अब नहीं मिलती लेकिन उसका किसीसमय अधिक प्रचारथा।

व्यासमहर्षि—यह पराशरमुनिके पुत्र महाभारतके युद्धके समयमें हुए। कविचंद "पृथ्वीराजरासौ" में लिखताहै कि महाभारतका युद्ध ८१४ गतकलिमें हुआ और काश्मीरराजतरङ्गिणीकार पं० कल्हण ३५० गतकलिमें इस युद्धका होना सिद्ध करतेहैं जिससे व्यासजीका जीवनकाल निर्णयहोसकताहै। यह यमुनानदीके किसी द्वीपमें उत्पन्नहोकर कृष्णवर्णके थे इसीलिये कृष्णद्वैपायन इनको कहते हैं यह वेदविद्यापारङ्गतथे और इसी कारण वेदव्यास कहिलायेथे। बदरिकाश्रममें भी ये बहुत दिनोंतक रहे थे जिससे इनका नाम बादरायण प्रसिद्ध होगयाथा। चारोंवेदोंको संग्रहकरके इन्होंने श्रेणीबद्ध कियाथा, इनसरीखा ब्रह्मज्ञानी विद्वान् तथा बृहत् ग्रंथकार भूमण्डलपर दूसरा नहीं हुआ कविहोनेके सिवाय यह इतिहासकार, सूत्रकार, भाष्यकार, स्मृतिकार तथा ब्रह्मविद्याप्रचारक भी थे। दिव्य, अदिव्य तथा दिव्यादिव्य सबही चरित्रोंका इन्होंने स्वरचितग्रंथोंमें निःशेष करदियाहै। जैमिनि, वैशम्पायन तथ उग्रश्रवा सूत सरीखे३५०००अद्वतीय विद्वान् इनके शिष्यथे और शुकदेवजी इनके पुत्रथे। इन्होंने वेदोक्त देवासुरसंग्राम तथा ऋषिप्रक्रियादिभेदके आशयपर पुराणसंहिता रचकर अपने शिष्य लोमहर्षणसूतको पढ़ाईथी, पश्चात् लोमहर्षणके पुत्र उग्रश्रवाने पुराणसंहितामें अपने प्रश्नोत्तर मिलाकर निम्नस्थ १८ पुराण पृथक् २ रचे:—मत्स्य पु० मार्कंडे पु० भविष्यत पु० भागवत पु०ब्रह्मवैवर्त पु०ब्रह्माण्ड पु० ब्रह्म पु० वाराह पु०अग्निपु०विष्णुपु० वामनपु० लिङ्गपु० गरुड़पु० कूर्मपु० स्कन्दपु० पद्मपु० शिवपु० औरनारद पु०। भारतनामइतिहासभी इन्होंने २४००० श्लोकोंमें बनायाथा पश्चात् विद्वानोंने भिन्न २ समयमें होकर बहुतसे और उपाख्यान उसमें मिलादिये, तब १ लक्षश्लोकोंसे युक्त होकर वह महाभारतनामको प्राप्तहुआइसीप्रकार उपरोक्त१८पुराणोंमेंभी जैनीआदि धर्मविरोधी पंडितोंने पीछेसे ऐसीही २ बातें मिलादीहैं कि जिनसे पुराणोंकी ओरसे चित्तमें घृणा उत्पन्नहोतीहै। उन्हीं विधर्मियोंने पुराणोंकी कथाके अनेकस्थलोंमें गाथाके हेरफेरसे परस्परका विरोधभी करदियाहै कि, जिससे पुराण विश्वास

योग्य दृष्टि गोचर नहोकर आधुनिक प्रतीत होते हैं। वर्तमान कालतक इसतरह की मिलावट पुराणोंमें होतीरहीहै क्योंकि, पद्मपुराणमें अत्यंत नवीन माधवआदि कोंकी प्रशंसाहै। विजयमुक्तावली तथा वेदान्त सूत्रभी व्यासकृतहैं और १८ उप पुराणोंमें वर्णित अनेकविषयभी व्यासप्रणीतहैं परंतु इसमें भी शक नहीं कि, एक हजार वर्षके भीतरही भीतर उपपुराणोंका परिवर्तन अनेक विद्वानोंके द्वारा वर्त मान दशामें हुआहै। पार्सियोंकी धर्मपुस्तक जेन्दावस्तामें लिखाहै कि महर्षि व्यास, जरदश्तसे शास्त्रार्थ करने बलखबुखारा गयेथे, शास्त्रार्थमें शाहईरान मौजूदथा और विषय यह था कि "यदि मनुष्य अन्याय कर सकता है तौ देहधारियोंमें सर्व्वोत्तम क्यों है" । इन्होंने एक दूरदर्शक यंत्रभी बनायाथा, हिन्दूलोग इनकी गणना अवतारोंमें करतेहैं, वास्तवमें इन्होंने ऐसे कामकिये जो मनुष्यको करना कठिनहै। बड़े२ राजा महाराजाओंकी गादियें नष्ट होगई परंतु व्यासगद्दी भारतमें लगी हुईहै, प्रत्येकवर्ष आषाढ शु० १५ के दिन घर २ व्यासपूजा होतीहै और "नमोऽस्तुते व्यासविशालबुद्धे" की ध्वनि गूंजतीहै । व्यासजी दीर्घजीवीहुये, चंद्रवंशकी प्रायः ५ पीढियोंने इनके सामने राज्यकिया, धृतराष्ट्र तथा पांडूने इन्हीके वीर्यसे राजा विचित्रवीर्यकी विधवा रानियोंके उदरमें गर्भधारण कियाथा (देखो भीष्म पितामह)।

बृजवासीदास (भाषाकवि)—यह वृन्दावनवासी ब्राह्मण स० ई० १७५३ में जन्मे यह बड़े श्रीकृष्णोपासकथे, स. ई. १७७० में इन्होंने ब्रजविलास ग्रंथ भाषापद्यमें रचा ब्रजविलासमें श्रीकृष्णचंद्रकी अनेक लीलायें वर्णित हैं।

ब्रजनिधिकवि—देखो प्रतापसिंह सवाई।

वृन्दकवि (वृन्दसतसईकेकर्ता)—इन्होंने ७५१ नीतिके दोहे बना कर उनके संग्रहका नाम वृन्दसतसईरक्खा। वृंन्दसतसई वि० सं० १७६१ की साल ढाके में सम्पूर्ण हुई । "भावपंचाशिका" नामक ग्रंथ भी इन्हींका रचा हुआ है।

ब्रह्मकवि—देखो बीरबल।

ब्रह्मगुप्त (ज्योतिषी)—इनके बापका नाम जिष्णु था, उज्जैनके रहनेवालेथे और चापवंशी राजा व्याघ्रमुखके समयमें हुएथे। मिस्टर बैन्टली साहब स० ई० ५२७ में इनका होना सिद्ध करतेहैं। ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त तथा खण्डखाद्य नामक ग्रंथ इनके रचेहुयेहैं। इन्होंने ब्रह्मकल्पकी गणनाका प्रकार स्थापनकिया कि, जिसपर आधुनिक ज्योतिषका आधारहै और ऐतिहासिक सम्वतोंका भी जिसके अनुसार परिवर्तन हुआहै (vide Asiatic Researches Vol. VIII, P. P. 236-7).

ब्लेवैटस्की (मैडम ब्लेवैटस्की)–यह थियोसोफी धर्मकी मूल रोपणकर्ता एक फौजी अफसरके घर स.ई. १८३१ की साल मुलकरूसमें पैदाहुईथी बचपनमें यह बहुधा बीमार रहितीथी, १७वर्षकी उम्रमें इनकी शादी अमेरिकाके एक गवर्नरके साथ जो६० वर्षका था हुई लेकिन उक्त सम्बन्ध इनको पसन्द नहीं आया एवं विवाहका बन्धन तोडना पड़ा । पश्चात यह देशाटनके विचारसे हिंदोस्तानको आई और तिब्बतमें कईवर्षतक रहकर महात्मासिद्धोंसे योगकी शिक्षा पाई तथा अध्यात्मविद्या (मेस्मेरिज्म) सीखी । बादको मिश्र तथा रूस होती हुई अमेरिकाको वापिस गई और वहाँके लोगोंको अनेक करिश्मे दिखलाये, स० ई० १८७४ मे कर्नल आलकट साहब इनके शागिर्द हुये जिनकी मददसे इन्होंने थियोसोफिकेल सोसाइटी स्थापन की लेकिन पादरीलोगोंने सफलता नहीं होनेदी । निराशहोकर यह कर्नल आलकटसाहबसहित स. ई. १८७९ की साल हिंदोस्तानको वापिसआई, बड़े २ शहरोंमें जाकर उपदेश दिये और हिन्दूधर्मकी बड़ी प्रशंसा की तथा अनेक करिश्मे दिखलाये, इन सबबातोंके प्रभावसे मदरास इत्यादिनगरोंमें थियोसोफिकेलसमाजें स्थापनहोगईं जिनमें बड़े २ विद्वान् शरीकहोगये हिंदू मुसल्मान् पार्सी ईसाई सबही रुजूहुये । हजारों रुपये फीसके आनेलगे, बड़ी २ किताबें तथा समाचारपत्र छपने लगे, और हरतरफ टेबिल टरनिङ्, प्लांचेट तथा मेस्मेरिज्मकी चर्चा फैली । हिंदोस्तान, लंका तथा अमेरिकामें इनके मतानुगामी बहुत हैं । थियोसोफिकेल सोसाइटीके " थियोसो फिष्ट " नामक मासिक पत्रका सम्पादन पहिले कई वर्षतक इन्होंने कियाथा । यह महाभारत, रामायण तथा भागवतादि पुराणोंकी कथानकोंको जो साधारण बुद्धिके मनुष्योंकी समझमें न आनेके कारण असम्भवगिनी जाने लगीहैं, सर्वथा सत्य और सम्भवजानतीथीं । वास्तवमें उच्चबुद्धिकी मामथीं, मांसाहार नहीं करती थीं और विद्या तथा बुद्धिबलसे निम्नस्थ सरीखी अनेक आश्चर्यजनक बातें खेलके तौरपर करके दिखा देती थीं:–

१. नष्ट वस्तुका कई वर्षपीछे पता लगाना ।

२. जंगलमें बरतन तथा खानेपीनेकी चीजें तुरन्त मंगालेना ।

३. टूटी रकाबी तथा अन्यपात्र साबितकरदेना ।

४. मुर्दोंकी रूहोंको बुलाकर उनसे बात करना तथा उनकी सूरत दिखलाना ।

५. हवाके द्वारा पत्रोंका उत्तर मंगाना ।

भगवतसिंह (सरभगवतसिंह, के०सी०आई०ई०, एम०डी०, यम०आर०सी० डी०सी०यल०, यल०यल०डी० गोन्डलनरेश)–चंद्रवंशी ठाकुर संग्रामजीके घर

स.ई.१८६५ की साल आपका जन्म हुआ । पिता आपको४वर्षका छोड़कर सिधारगये थे, ९ वर्षकी उम्रमें आपको राजकोट कालिजमें पढ़नेके लिये भेजागयाथा और वहाँ कईवर्षतक पढ़नेके उपरांत अंग्रेज शिक्षक वैन्काकसाहबके साथ विशेष विद्यापठनार्थ बृटिश गवर्नमेन्टकी आज्ञासे यह यूरूपको गये । स. ई. १८८३ में यूरूपसे हिंदोस्तानको वापिसआये और अपनी यात्राका वृत्तांत कई भाषाओंमें पुस्तकाकार छपवाया । कुछहींदिनोंबाद स. ई. १८८४ में आपका राज्याभिषेक हुआ, उसी साल बम्बईकी यूनीवर्सिटीने आपको अपना फेलो नियत किया । राज्याभिषेकके समय प्रजागणपर जो राज्यका ऋणथा वह आपने छोड़दियाथा । स. ई. १८८६ में आप स्काटलैंडको पधारे और १५ महीने एडिन्बरो यूनीवर्सिटीमें रहकर एल. एल. डी. की उपाधि पानेमें समर्थहुये । श्रीमती विक्टोरियाकी जुबिलीके अवसरपर भी काठियावाड़ी रईसोंकी तरफसे आप इङ्गलैंडको पधारेथे और इसीअवसरपर के. सी. आई. ई. का खिताब आपको मिलाथा । स. ई. १८८७ में आपको सलामी तोपके ११ फैरोंकी नियतहुई । स. ई. १८९० में रानीसाहब का इलाज कराने आप फिर इङ्गलैंड जाकर दोवर्ष ठहिरे, इस अवसरपर एडिन्बरो यूनीवर्सिटीने यम. बी., यम. डी. तथा यम. आर. सी.की उपाधियें और आक्सफोर्ड यूनीवर्सिटीने डी. सी. यल. की उपाधि आपको प्रदान की । स. ई. १८९३ में आस्ट्रेलिया, अमेरिका, चीन, जापान तथा लंका होतेहुये आप निजराजधानीको पधारे । आपके समयमें रियासत. गोन्डलमें अनेकसड़कें, स्कूल, हस्पताल, चुंगीघर, धर्मशाला, मुहताजखाने, डाँकघर, तारघर और न्यायालय बनायेगये हैं। भूखों तथा रोगियोंको अन्न वस्त्र और औषधि देनेका आपने स्वराज्यमें अच्छा प्रबन्ध कियाहै, शिक्षा विभागकी भी बहुत कुछ उन्नति आपके शासनमें हुईहै । इन्हीं सुप्रबन्धोंके कारण बृटिश-गवर्नमेन्टने आपके राज्यकी गणना दूसरे दर्जेसे पहिले दर्जेमें कीहै, प्रजागणने भी आपकी अत्यंत सुंदर पाषाण मूर्ति बनवाकर शहिरमें पधराई है । आपने प्रजापरसे अनेक दुखदाई कर उठादिये हैं और अपने हुक्मसे स्वराज्यमें गोवध बन्दकर दिया है । "भावनगर गोन्डल" तथा "गोन्डल पूर्वन्दर" रेलवेजमें आप ५० लाख रुपयेके शरीक हैं । जुग २ जियो ! परोपकारी नृप ।

भगवन्तदास—देखो भगवान्दास कछवाहे ।

भगवान्दास कछवाहे (जयपुरनरेश)—निज पिता बिहारीमल के बाद गद्दीपर बैठे, आमेर आपके वक्तमें राजधानी थी । आपने अकबरके पुत्र शाहिजादे सलीमको अपनी बेटीका डोला दियाथा और अकबरने आपको अमीरुल उमराका खिताब, पंचहजारीका मनसब तथा पंजाबकी सूबेदारी दी थी । गुजरातमें तथा राना चितौड़से लड़कर आपने सफलता पाई थी । अ-

न्तमें अकबरने आपको जाबुलिस्तानका हाकिम नियत किया, वहाँ जाना आपको पसन्द न था लेकिन जानापड़ा, जब अटक पार पहुंचे तौ बीमार हो कर पागल होगये और इलाज करनेके लिये जब हकीम आपके सामने आया तौ आपने छुरी भोंकदी लेकिन शाही हकीमोंकी कोशिशसे शीघ्रही आरामहोगया। मथुरामें एक बड़ा भारी मंदिर जिसको औरंगजेबने ढवा दिया और गोवर्धनमें हरदेवजीका मंदिर आपने बनवाया था। आप वि० सं० १६४५ की साल लाहौरमें परलोकगामी हुये और राजा मानसिंह आपके दत्तक पुत्र गद्दीपर बैठे।

भगवतीदास (भाषाकवि)—यह कान्यकुब्ज ब्राह्मण किठावाँ ग्राम जि० फैजाबादके वासी थे। नासिकेतोपाख्यान वि० सं० १६८८ में इन्होंने बनाया। वि० सं० १७१४ में मरे।

भगवत रसिकजी (भाषाकवि)—य हरदास स्वामीके शिष्यथे ब्रजमें रहते थे स० ई० १६२४ में जन्मे थे। इनके पिताका नाम माधव दास था। इनके रचे बहुतसे ग्रंथहैं जिनमेंसे थोड़ोंसेके नाम नीचे लिखतेहैं:-

अनन्य निश्चयात्मक, निश्चयात्मक, श्रीनित्य विहार जुगल ध्यान, निर्बोध मनरञ्जन, अनन्य रसिका भरन और भगवत रसिकजीकी माँझ।

भट्टनारायण (वेणीसंहार नाटकके रचयिता)—यह उन ५ ब्राह्मणोंमेंसे थे जिनको बंगालाधिपति अदीसुरने स०ई० १०७२के लगभग कनौजसे बुलाकर बंगालमें बसाया था। यह संस्कृतके सुकवि थे। काशी मरणमुक्ति विचार, प्रयोग रत्न, वेणीसंहार नाटक और गोभिल सूत्र भाष्य इनके रचे ग्रंथ हैं। इनके वंशोत्पन्न ब्राह्मणोंको बन्धोपाध्याय (बनर्जी) कहते हैं।

भट्टलि (ग्रामीन कवि)—इनके रचे भड्डलि पुराणकी एक प्रति जो वि. सं. १६६९ की लिखी है, विद्या प्रचारिनी जैनसभा जयपुरके पुस्तकालयमें विद्यमान है। भड्डलिपुराण पद्यमें है, उसकी भाषा ग्रामीन हिन्दी है और उसमें ज्योतिषके चुटकुले तथा पानी बरसने इत्यादिके शकुन हैं। भड्डलि कृषाकारोंका ज्योतिषी तथा कवीश्वर था और उसके ग्रंथमें उन्हींके मतलबकी बातें भी हैं।

भट्टभास्कर—तैत्तरीयसंहिताका भाष्य, स्पन्दनसूत्रका वार्तिक, वेन्दान्त सूत्रका भाष्य तथा "ज्ञानयज्ञ" नामक यजुर्वेद भाष्य इन्होंने रचेथे। "ज्ञानयज्ञ" के लेखोंसे विदित होता है कि ये वि. सं. की ९ वीं शताब्दीके उत्तरार्द्धमें जीवितथे।